अंक 67
अक्टूबर — दिसंबर 1994

राजभाषा भारती

राजभाषा विभाग गृह मंत्रालय भारत सरकार

राजभाषा विभाग द्वारा भुवनेश्वर में आयोजित क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन, में मंच पर बाएं से श्री चंद्रधर त्रिपाठी, पूर्व सचिव (राजभाषा विभाग), श्री बी॰ सत्य नारायण रेड्डी, महामहिम राज्यपाल, ओड़िशा राज्य, श्री राम लाल राही, उप गृहमंत्री, भारत सरकार, श्री देव स्वरूप, संयुक्त सचिव (राजभाषा विभाग) तथा श्री शैलेन्द्र कुमार रमोरिया, सी॰एम॰डी॰ नालको।

क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन भुवनेश्वर में, माननीय उप गृहमंत्री श्री राम लाल राही द्वीप प्रज्वलित कर सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए। इनके दाहिनी ओर श्री देव स्वरूप संयुक्त सचिव (राभा)।

देव स्वरूप

सत्यमेव जयते

संयुक्त सचिव
भारत सरकार
गृह मंत्रालय
राजभाषा विभाग

संदेश

इलैक्ट्रॉनिकी प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में कम्प्यूटर का विकास एक नए युग का सूत्रपात है। कंप्यूटरों का प्रयोग जीवन के सभी क्षेत्रों में किया जाने लगा हैं तथा यह संयंत्र जन-जीवन की एक आवश्यकता के रूप में उभरकर आ रहा है। कार्यक्षमता में वृद्धि, उसमें गुणात्मक सुधार तथा समय की बचत व उसका सदुपयोग अन्य सृजनात्मक कार्यों में करने की दृष्टि से कंप्यूटर का विशेष महत्व है।

कंप्यूटर विकसित देशों की प्रगति का प्रतीक बन गया है। हमें भी विकसित देशों के साथ कदम से कदम मिलाकर आगे बढ़ना है। 'कार्यालय स्वचालन' तथा 'सूचना-प्रबंधन-प्रणाली' के क्षेत्र में कंप्यूटरों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इसका मुख्य कारण यह है कि कंप्यूटर की 'कृत्रिम बुद्धि' क्षमता के शब्द तथा आंकड़ों के संसाधन के क्षेत्र में कठिन कार्य आसान कर दिए हैं तथा प्रयोक्ता सुलभ विभिन्न सुविधाओं वाले प्रोग्राम नित्य-प्रति बनते चले जा रहे हैं।

केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में कंप्यूटरों के प्रयोग को राजभाषा नीति के अनुपालन के परिप्रेक्ष्य में देखा जाना आवश्यक है। जैसा कि आप जानते हैं, संघ की राजभाषा हिंदी है तथा लिपि देवनागरी। इसका अर्थ यह हुआ कि हम में से प्रत्येक को चाहिए कि वह अपना सरकारी काम-काज अधिक से अधिक हिंदी में करे चाहे किसी भी मशीन का प्रयोग किया जा रहा हो। कंप्यूटरों पर हिंदी में कार्य करने के लिए कुछ हद तक सुविधाएं उपलब्ध हैं। अतः, सर्वप्रथम हमारी यह जिम्मेदारी बनती है कि इन सुविधाओं के प्रयोग के लिए एक मानसिकता बने, अधिकारियों/कर्मचारियों को कंप्यूटर पर हिंदी में कार्य करने के लिए प्रेरित किया जाए तथा प्रशिक्षण की सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएं। बड़े-बड़े कार्यालयों/प्रतिष्ठानों आदि को चाहिए कि वह कंप्यूटरों पर अपने विशेष कार्य को राजभाषा नीति के अनुसार हिंदी में करने के लिए कंप्यूटर प्रोग्राम तैयार करवाएं। कंप्यूटरों पर हिंदी में कार्य के प्रति जागरुकता पैदा कराने के लिए उपलब्ध जानकारी का प्रचार-प्रसार किया जाना आवश्यक है। द्विभाषी कम्प्यूटर सुविधाओं पर तकनीकी संगोष्ठियों तथा कार्यशालाओं का आयोजन बड़े-बड़े मंत्रालयों/विभागों सार्वजनिक उपक्रमों आदि में करवाने से हम यह लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं। विभागाध्यक्षों की यह जिम्मेदारी बनती है कि वे उपयुक्त द्विभाषी साफ्टवेयर/हार्डवेयर की खरीद व उसके प्रयोग की व्यवस्था करें। इसके लिए बजट की व्यवस्था की जाए तथा कंप्यूटर पर जो विशेष कार्य किसी प्रोग्राम के माध्यम से अभी तक अंग्रेजी में किया जा रहा है उसे हिंदी में करने के लिए प्रोग्राम में आवश्यक संशोधन करवाया जाए। सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र के साफ्टवेयर निर्माता इस प्रयोजन के लिए आवश्यक सेवाएं उपलब्ध करा सकते हैं। इस प्रकार जहां एक ओर कंप्यूटरों पर हिंदी में कार्य करने का वातावरण तैयार होगा वहीं दूसरी ओर नए व अद्यतन कंप्यूटर अनुप्रयोग साफ्टवेयर/हार्डवेयर संस्करण तैयार होंगे। अन्यथा कंप्यूटर की असीमित शक्ति का लाभ अंग्रेजी जानने वाले वर्ग विशेष के थोड़े लोगों को ही मिल पाएगा। हिंदी जानने वाली अधिकांश जनता इसके लाभ से वंचित रहेगी। आवश्यकता है कि हिंदी जानने वाले लोग पहल करें।

मेरे विचार में प्रारंभ में कंप्यूटर पर शब्द संसाधन का कार्य ही किया जाए। पत्र, टिप्पणी, रिपोर्ट इससे हिंदी में तैयार किए जाएं। इस प्रयास से एक ऐसी मानसिकता बन जाएगी जिससे लगेगा कि कंप्यूटर पर हिंदी में काम करना उतना ही आसान है जितना अंग्रेजी में। इस प्रकार एक वातावरण तैयार हो जाएगा जिससे कर्मचारी डाटा संसाधन तथा विशेष प्रोग्रामों का कंप्यूटर पर प्रयोग कर हिंदी में कार्य करने में नहीं हिचकिचाएंगे।

प्रत्येक कार्यालय में राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार में जुड़े अधिकारियों/कर्मचारियों से मेरा यह अनुरोध है कि वे कंप्यूटर पर हिंदी में कार्य को बढ़ावा देने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएं। इसके लिए उन्हें चाहिए कि वे कंप्यूटर के निकट आएं। आने वाले कल में संभावित तकनीकी परिवर्तनों को ध्यान में रख आज ही उस दिशा में उपयुक्त कदम उठाना समझदारी है। जब वे स्वयं सीखेंगे तभी दूसरों को भी प्रेरित कर पाएंगे, सही सलाह दे पाएंगें। इस प्रकार जहां एक ओर हिंदी कंप्यूटर तकनीक के विकास के साथ कदम से कदम मिलाकर आगे बढ़ पाएगी वहीं आप अपनी संस्कृति को और सुदृढ़/विकसित पर पाने में समर्थ होंगे।

(देव स्वरूप)

भारति जय विजय करे, कनक-शस्य-कमल धरे

—निराला

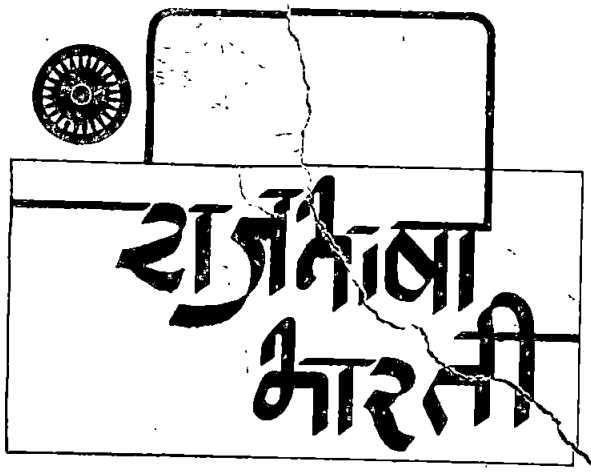

राजभाषा विभाग की त्रैमासिकी

वर्ष: 17

अंक: 67

अक्तूबर-दिसंम्बर 1994

□ संपादक

राज कुमार सैनी
निदेशक (अनुसंधान)
फोन: 4617807

□ उपसंपादक

नेत्रसिंह रावत
देवीदत्त तिवारी

□ संपादन सहायक

शांति कुमार स्याल

□ नि:शुल्क वितरण के लिए

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। सरकार अथवा राजभाषा विभाग का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

□ पत्र-व्यवहार का पता:

संपादक, राजभाषा भारती,
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय,
लोकनायक भवन (11वां तल)
खान मार्किट, नई दिल्ली-110003
फोन: 4698054

पृष्ठ

□ संदेश—संयुक्त सचिव

□ संपादकीय

□ चिंतन

1. मेरे हिंदी-प्रयोग संबंधी अनुभव — डॉ० कृष्ण लाल 1
2. बोली शहर आगरे की — राजेन्द्र कुशवाहा 2
3. हिंदी का महत्व — डॉ० शशि तिवारी 4
4. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी भाषा: संघर्ष और संकल्पना — शंकर दयाल सिंह 6
5. भाषा का सवाल संविधान के परिप्रेक्ष्य में — मस्तराम कपूर 13
6. साहित्यिक अनुवाद एक साधना है — डॉ० वीरेन्द्र सक्सेना 16
7. प्रशासनिक भाषा और अनुवाद — डा० एन०ई० विश्वनाथ अय्यर 18
8. पत्र, पत्रकार और आचार संहिता — सविता चड्ढा 20
9. हिंदी की भूमिका और ग्रामीण विकास में इलेक्ट्रॉनिकी — माला गुप्ता 25
10. लिंग — सी० आर० रामचन्द्रन 29
11. जिंदा विश्वकोश थे प्रभाकर माचवे — जगदीश चतुर्वेदी 30

□ साहित्यिकी

12. फारसी काव्य के महान शिल्पी — शारदा वशिष्ठ 33
13. उर्दू कवि इकबाल और मानव-गरिमा — डा० राम दास नादार 34
14. भारतीयता में रंगे अब्दुर्रहीम खानखाना — विश्वंभर प्रसाद 'गुप्त-बंधु' 37
15. वर्ष 1993 का हिंदी का साहित्यिक-सांस्कृतिक परिदृश्य — डा० सर्वदानंद द्विवेदी 38

पृष्ठ

□ पुरानी यादें: नए परिप्रेक्ष्य

16. वैदिक गुप्तचर संस्था —डा० (श्रीमती) उर्वी 42

□ विश्व हिंदी दर्शन

17. विश्व में हिंदी का रूप — शान्ति कुमार स्याल 44

□ भारतीय भाषा संगम 46

- ओड़िया कविता — वस्त्र हरण — बालकृष्ण मिश्र
- ओड़िया कविता — वस्त्र हरण — मनु मल्लिक
- मलयालम कविता — आज मृत्यु दिन — श्रीमती सुगत कुमारी
- मलयालम कविता — शाप मुक्ति — विष्णु नारायणन नम्पूतिरी
- सिंधी कविता — अनेकता में एकता — प्रभु वफा

□ प्रेरणा-पुंज 50

- र० गौरिराजन
- डा० गोपाल दत्त विष्ट
- श्री विजय कुमार भार्गव

□ पुस्तक समीक्षा 53

चित्रों में झांकता मानव इतिहास (एस० एस० रंधावा), गालिब के दीवान की टीका (पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र'), कटा हुआ बाजू (केवल सूद), भावुकता से बोझिल औसत कहानियां (सूरज प्रकाश), प्रशासनिक हिंदी: ऐतिहासिक संदर्भ (डा० महेश चन्द्र गुप्त), तुम चंदन हम पानी: हिंदी गज़ल की अनुकरणीय मिशाल (आचार्य सारथी), मुठभेड़ (श्याम कश्यप), भारत में विद्यालय शिक्षा-राष्ट्रीय नीतियां एवं परिप्रेक्ष्य (डा० जयन्ती प्रसाद मिश्र), जिज्ञासु मन की परिणति: कालिदास से साक्षात्कार (विद्यानिवास मिश्र), स्मृतियों की लहरें (काव्य संग्रह) (डा० वासंती रामचन्द्रन), खुशबुओं की तलब (लक्ष्मी शंकर वाजपेई), हिंसा/अहिंसा (रंजन जैदी), मेरे शहर की बुआबतां (पुष्पा हीरालाल), बैंकों में अनुवाद प्रविधि: राजभाषा के लिए एक उपलब्धि (डा० सीता कुंचितपादम), भारत में ग्रामीण अपराध और पुलिस की भूमिका (गोपीनाथ कालभोर), कर्मठ (श्रीमती बाला शर्मा), परंपरा को प्रासंगिक बनाने का प्रयास: जीवशतक (जगन्नाथ प्रसाद मिश्र), अनुवाद का भाषा वैज्ञानिक पक्ष (भोलानाथ तिवारी), स्वतंत्रयोत्तर भारत में जनता का उत्तरदायित्व तथा पुलिस की भूमिका (डा० कृष्ण मोहन माथुर), भारतीय पर्यावरण परंपरा—पंचवटी (बनवारी), सद्भावना का गणिल त-पेशे पहल (गोविन्दासिंह असिवाल), बयालीस बाल कथाएं (शमशेर अ०खान), आकाश कुसुम (सविता चड्ढा), सनातन धर्म और महात्मा गांधी (पुष्पराज), श्यामा-भारतीय जीवन की त्रासदी (क्षितिज शर्मा), किसी के लिए (कविता संग्रह) (वीरेन्द्र सिंह वर्मा), व्यावसायिक सम्प्रेषण

(अनूप चन्द्र पु० भायाणी), शब्द परिवार कोश (डॉ० बदरीनाथ कपूर), शब्दार्थ-विचार कोश (आचार्य राम चन्द्र वर्मा) शब्द की अनुभूति (पुष्पा हीरा लाल), बात की चिड़िया (मलखान सिंह सिसौदिया), संघर्षों के बीच (दर्शन),

पृष्ठ

☐ **राजभाषा सम्मेलन/संगोष्ठियां** 80

1. कर्नाटक महिला हिंदी सेवा समिति में हिंदी सम्मेलन
2. हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
3. केन्द्रीय सचिवालय हिंदी परिषद-शाखा, बम्बई—संगोष्ठी
4. क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन, भुवनेश्वर
5. नराकास बैंक, अहमदाबाद में हिंदी संगोष्ठी
6. आन्ध्र बैंक, हैदराबाद में हिंदी सम्मेलन
7. हिंदुस्तान पेपर कारपोरेशन लि०, कलकत्ता में 'अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन'
8. हिंदुस्तान जिंक लि० विशाखापटणम में हिंदी संगोष्ठी
9. भारतीय पेट्रोलियम संस्थान, देहरादून कवि सम्मेलन—झलकियां
10. मलेरिया अनुसंधान केन्द्र विकास मार्ग दिल्ली में वैज्ञानिक संगोष्ठी

☐ **हिंदी के बढ़ते चरण** 87

1. केन्द्रीय कार्यक्रम निर्माण केन्द्र, दूरदर्शन खेलगांव, नई दिल्ली में बढ़ती हिंदी
2. हिंदुस्तान जिंक लि० में कंप्यूटरों में राजभाषा का प्रयोग
3. भारतीय कपास निगम लि० में राजभाषा हिंदी के उत्तरोत्तर बढ़ते प्रयोग
4. हिंदी में काम कराने के लिए अभियान

☐ **विविधा** 90

▲ समाचार दर्शन ▲ प्रशिक्षण/भर्ती परीक्षाएं और हिंदी ▲ प्रोत्साहन/ कार योजना ▲ पाठकों के पत्र ▲हिंदी शिक्षण योजना-पाठयक्रम

संपादकीय

राजभाषा भारती का 67वां अंक आने वाले नव-वर्ष की शुभकामनाओं के साथ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। हिन्दी दिवस/हिन्दी पखवाड़ा और हिन्दी मास संबंधी अधिकांश विवरण "राजभाषा पुष्पमाला" के अंक 79-80 (नवम्बर-दिसम्बर) में शामिल किए गए हैं। "राजभाषा भारती" के इस अंक में हिन्दी की भूमिका और महत्व को लेकर कुछ लेख संकलित किए गए हैं जो विशिष्ट विद्वानों ने लिखे हैं। 'भारतीय भाषा' संगम स्तम्भ के अन्तर्गत उड़िया, मलयालम और सिंधी कविताओं के अनुवाद प्रकाशित किए गए हैं। अपने पाठकों से हमें राजभाषा भारती और राजभाषा पुष्पमाला की साज-सज्जा और मुद्रण आदि के बारे में बहुत उत्साहजनक प्रतिक्रियाएं मिली हैं। इन प्रतिक्रियाओं से हमारा मनोबल बढ़ा है।

पाठकों से हमारा सविनय अनुरोध है कि वे हमें "भारतीय भाषाएं और उनके साहित्य का इतिहास" संबंधी विषय पर विद्वतापूर्ण लेख भिजवाएं। "राजभाषा भारती" पत्रिका हिन्दी और भारतीय भाषाओं के बीच परस्पर आदान-प्रदान और विनिमय को सर्वाधिक महत्व देती है। पिछले अंकों में भी हम तमिल, तेलुगु और उर्दू आदि सभी भारतीय भाषाओं तथा उनके साहित्य के बारे में प्रचुर सामग्री प्रकाशित करते रहे हैं।

पिछले दिनों हिन्दी के प्रख्यात लेखक और विचारक श्री हंसराज रहबर और हिन्दी के प्रसिद्ध नाटककार एवं कवि श्री शील का निधन हो गया। श्री हंस राज रहबर हिन्दी-उर्दू मिश्रित शैली के एक विशिष्ट लेखक के रूप में जाने जाते थे। प्रेमचन्द की परम्परा में उन्होंने सरल और सुबोध हिन्दुस्तानी शैली में कई उपन्यास, कहानियां और सामाजिक विषयों तथा विशिष्ट व्यक्तियों पर कृतियां रची हैं। श्री हंसराज रहबर एक तरह से हमारे समय के विरोधालंकार (एंटी थीसिस) थे। वे प्रायः अपनी असहमति के लिए पहचाने जाते थे। हिन्दी के उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द की ही तरह श्री रहबर हिन्दी और उर्दू दोनों के रचनाकार थे। दोनों भाषाओं के बीच उनकी स्थिति देहरी-दीपक-अंलकार जैसी थी। उन्होंने हिन्दी-उर्दू मिश्रित शैली में मर्मस्पर्शी गजलें भी लिखी हैं।

श्री शील के बहुत से नाटकों का प्रसिद्ध अभिनेता और निर्देशक श्री पृथ्वी राज कपूर ने मंचन किया, जो जनता में बहुत ही लोकप्रिय हुए। श्री शील हिन्दी की प्रगति शील और जागरूक परम्परा के एक विशिष्ट कवि के रूप में भी पहचाने जाते रहे हैं। महाकवि निराला के बाद नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, गजानन्द माधव मुक्तिबोध, शमशेर बहादुर सिंह, त्रिलोचन और शील उस परम्परा की महत्वपूर्ण कड़ियां हैं।

राजभाषा भारती परिवार इन दोनों महत्वपूर्ण साहित्यकारों के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

— राज कुमार सैनी

सरस्वती वंदना

या कुन्देन्दुतुषारहार धवलां
या शुभ्रवस्त्रावृत्ता
या वीणावर दण्डमण्डित करा
या श्वेत पद्मा
या ब्रह्माच्युत शंकरः प्रभृतिभिः
देवैः सदा
सा मां पातु सरस्वती भग
निःशेष

चिंतन

मेरे हिंदी-प्रयोग सम्बन्धी अनुभव

—डॉ॰ कृष्ण लाल*

यह मेरा निश्चित मत है कि स्वतन्त्र देश के नागरिक के रूप में हमें हिन्दी का ही प्रयोग करना चाहिए। इसलिए मैं सभी स्थानों पर सभी कार्यों में हिन्दी का ही प्रयोग करता हूं।

अगस्त, 1989 से अगस्त, 1992 तक तीन वर्ष के लिए मुझे दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग का अध्यक्ष नियुक्त किया गया। मेरे कुछ मित्रों ने आरम्भ में मुझे कहा कि आपको उच्चाधिकारियों से हिन्दी छोड़कर अंग्रेजी में व्यवहार करना पड़ेगा। अब तक इस विभाग का सभी कार्य अंग्रेजी में ही होता था। परन्तु आज में मैं अत्यन्त सन्तोष-पूर्वक कह सकता हूं कि कुलपति, सम-कुलपति, कुल सचिव, प्रधानाचार्यों आदि सभी अधिकारियों को मेरे सभी पत्र केवल हिन्दी में जाते रहे और बातचीत भी हिन्दी में होती रही। मुझे इस कारण न तो कोई कठिनाई हुई और न ही कभी कोई हानि हुई। इससे मेरा यह विश्वास पक्का हो गया कि विश्वविद्यालय के क्षेत्र में अंग्रेजी का प्रयोग आवश्यक नहीं है। सब शैक्षणिक और प्रशासनिक अधिकारी हिन्दी अच्छी प्रकार समझते हैं।

एक बार हमारा विभागीय एकमात्र हिन्दी टंकक दस-पन्द्रह दिन के अवकाश पर गया। मैंने भविष्य की कठिनाई भांप कर उसके अवकाश पर जाने से पहले ही लगभग दस-पन्द्रह सम्भावित पत्र दिनांक के बिना ही टंकित करवा कर रख लिए और समय आने पर उनका प्रयोग किया। इसी प्रकार बैठकों की सूचनाएं भी बड़ी संख्या में साइक्लोस्टाइल करवा करके रख लीं और सब कार्य हिन्दी में सुचारू रूप से चलता रहा।

हमारे विभाग के प्रमाणपत्र, उपाधि प्रमाणपत्र और एम॰फिल॰ के प्रवेश पत्र हिन्दी में साइक्लोस्टाइल करवाए गए और सबसे ऊपर टिप्पणी दे दी गई "कृपया आवेदन-पत्र हिन्दी में भरिए"। परिणाम-स्वरूप सब आवेदन-हिन्दी में भरे हुए प्राप्त हुए। मुझे इस दासवृत्ति का पूरा आभास था कि यह टिप्पणी न देने पर हिन्दी के आवेदन भी अंग्रेजी में भरे जाएंगे और हिन्दी में आवेदन बनवाने का उद्देश्य ही परास्त हो जाएगा। अंग्रेजी-दासता की मनोवृत्ति का मूलोच्छेदन आवश्यक है।

वह मेरे अध्यक्ष-काल का अन्तिम दिन था। एक आवश्यक सूचना निकालनी थी जो सब महाविद्यालयों में भेजी जानी थी। हमारा हिन्दी-टंकक अवकाश पर था। मैंने वरिष्ठ सहायक को हिन्दी में सूचना हाथ से लिख दी और कहा कि इसका स्टेंसिल हिन्दी विभाग में कटवा कर मेरे हस्ताक्षर करवा लें। परन्तु दो घंटे के पश्चात् उसने मेरे सम्मुख हस्ताक्षर के लिए अंग्रेजी का स्टेंसिल रख दिया और कहा कि हिन्दी विभाग का हिन्दी टंकक उपलब्ध नहीं है। मैं अन्तिम दिन अंग्रेजी का कलंक अपने माथे पर लगाना नहीं चाहता था। संयोग से मेरे पास घर पर छोटा हिन्दी टंकणयंत्र है। उस पर देख देख कर ही उंगलियों से कभी कभी कोई पत्र टंकित करने से मुझे थोड़ा अभ्यास हो गया है। मैंने वरिष्ठ सहायक को हिन्दी टंकणयंत्र निकलवाने को कहा। मैंने स्वयं कार्यालय में बैठकर अल्पाभ्यास से हिन्दी में स्टेंसिल काटा और उस पर हस्ताक्षर किए, अंग्रेजी वाले पर नहीं। इस प्रकार मेरे अध्यक्ष-काल की अन्तिम सूचना मेरे हस्ताक्षर से हिन्दी में ही निकली। मुझे उसका बहुत सन्तोष है।

सब अवकाशों में विश्वविद्यालयों का कार्य करने के लिए एक तिहाई अर्जित अवकाश विभागाध्यक्ष को दिए जाने की व्यवस्था है, परन्तु मुझे वह अवकाश पूरा नहीं मिला। पुनर्विचारार्थ समकुलपति को आवेदन देना था। हिन्दी टंकक सेवा छोड़ गया था। कुछ हितैषी बन्धुओं ने सुझाव दिया कि अधिकारी लोग अंग्रेजी में आवेदन शीघ्र समझ जाते हैं, अतः अंग्रेजी में ही आवेदन भेज दीजिए। परन्तु मुझे यह ठीक नहीं लगा और आवेदन को बाहर से टंकित करवा करके भेज दिया क्योंकि मुझे विश्वास है कि सब हिन्दी भली प्रकार समझते हैं। अंग्रेजी झूठी शान है, और दासता का प्रतीक है। □

*आचार्य, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

बोली शहर आगरे की

—राजेन्द्र कुशवाहा*

आगरा शहर एक निराला शहर है। आगरे में ताज महल है, जो महल न होकर मकबरा है। आगरे की मशहूर है दालमोठ। इसमें न दाल है और न मोठ। दाल की जगह हैं साबुत मसूर और मोठ की जगह है बेसन के बारीक सेब। आगरे में हींग की मन्डी है जहां हींग का नामोनिशान नहीं अलबत्ता हींग की मण्डी एशिया की सबसे बड़ी मण्डी है जूतों की। राजा मण्डी में कोई राजा नहीं रहता और न शहजादी मण्डी में कोई शहजादी। नमक की मण्डी की मिठाई मशहूर हैं और सोंठ की मण्डी में सोंठ नहीं बिकती बल्कि वहां भारत का सबसे बड़ा पागल खाना है। नाई की मण्डी में उतने ही नाई हैं जितने कि आगरे के हर मुहल्ले में, वही तीन चार नाई की दुकानें। कहां तक गिनाया जाए, आगरे की हर चीज निराली है, और सबसे निराली है शहर आगरे की बोली।

प्रेमसागर की भूमिका में लल्लू लाल जी ने लिखा था:—

"श्रीयुत गुनगाहक गुनियन सुखदायक जान गिलकिरिस्त महाशय की आज्ञा से संवत् 1860 में लल्लू जी लाल कवि ब्राहान गुजराती सहस्र अवदीच आगरे वाले ने जिसका सार ले, दामनी भाषा छोड़, दिल्ली आगरे की खड़ी बोली में कह, नाम "प्रेम सागर धरा"।

लल्लू लाल के उपर्युक्त कथन में "दिल्ली आगरे की खड़ी बोली में कह" यह अंश अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसमें दो बातें सामने आती हैं:—

1. दिल्ली-आगरे के अलावा अन्य स्थानों पर भी खड़ी बोली का प्रचलन था।

2. दिल्ली-आगरा (आगरा-दिल्ली) में बोली जाने वाली खड़ी बोली अन्य क्षेत्रों में बोली जाने वाली खड़ी बोली से भिन्न थी तभी तो लल्लू लाल जी को "प्रेम सागर" की भाषा के लिए यह स्पष्टीकरण देना पड़ा कि "दिल्ली आगरे की खड़ी बोली मैं कह"

यहां यह प्रश्न उठता है कि आगरा तो ठेठ ब्रज भाषा प्रदेश में हैं। 2. पूरे जिले में ब्रज भाषा की विभिन्न बोलियां बोली जाती हैं। फिर यह आगरे की खड़ी बोली कहां से आई। इस ओर भाषा शास्त्रियों का ध्यान प्रायः नहीं गया। स्वर्गीय डा० विश्वनाथ प्रसाद जी ने संभवतः पहली बार यह प्रश्न उठाया था—"यहां शंका यह उठती है कि आगरा तो ब्रज भाषा-क्षेत्र के अन्तर्गत है, फिर वहां की खड़ी बोली कैसी। इसी लेख में आगे चलकर वे कहते हैं:—

"यह ठीक है कि आगरा ब्रज भाषा क्षेत्र में है। यहां उस समय भी ब्रज भाषा बोली जाती थी और अब भी बोली जाती है। पर साथ ही यह भी ठीक है कि आगरा बहुत पहले से ही उस भाषा का भी केन्द्र बन चुका था, जो दिल्ली की प्रचलित भाषा से बहुत भिन्न नहीं थी--"

इससे यह तथ्य तो स्पष्ट हो जाता है कि शहर आगरे में बोली जाने वाली भाषा और जिले आगरे में बोली जाने वाली भाषा दो भिन्न भाषायें (बोलियां) हैं। यह कुछ विचित्र सा लगता है, पर है यथार्थ।

यूं तो आगरा अत्यंत प्राचीन क्षेत्र है। महाभारत में भी "अगरवन" के रूप में उल्लेख है। यह भी मान्यता है कि महाराज अग्रेसन (अग्रसेन) अग्रवालों के आदि पुरूष) की दो राजधानियां थी एक हरियाणा का अग्रोहा और दूसरी उत्तर प्रदेश का "आगरा", पर आगरा शहर बसाने का श्रेय है मुगल शहन्शाह अकबर को।

अकबर विलक्षण प्रतिभा संपन्न व्यक्ति था। अपना विशाल साम्राज्य स्थापित करने के अलावा अकबर ने धर्म, दर्शन, चिंतन, भाषा विज्ञान आदि क्षेत्रों में अनेक प्रयोग किये। ऐसे ही प्रयोगों में था एक महानगर (कास्मोपोलीटम सिटी) का बसाना, संभवतः संसार के इतिहास में यह पहला प्रयास था। अकबर ने देश के कोने-कोने से लोगों को बुलाकर आगरे में बसाया। जैसे गोकुलपुरा में गुजराती, माईथान और फुलटटी में पंजाबी तथा कश्मीरी छोपीटोला में बंगाली आदि। इस शहर का नाम रखा "अकबराबाद"। इस बसाहट के अवशेष अभी तक देखे जा सकते हैं। भारत का कोई ऐसा राज्य नहीं जिसका प्रतिनिधित्व शहर आगरा में न हो। परिणामतः आगरे में एक मिली जुली सामासिक संस्कृति का प्रार्दुभाव हुआ जिसे "तहजीवे आगरा" या "आगरापन" कहते हैं। एक नई बोली का जन्म हुआ। काफी समय तक यह बोली अनामित रही। इस बोली को लल्लू लाल ने "दिल्ली-आगरे" की खड़ी बोली कहा है।

शाहजहां ने एक नई दिल्ली बसाई जो पुरानी दिल्ली कही जाती है। इसका नाम रखा "शाहजहांबाद"। शाहजहां अपनी राजधानी आगरे से उठाकर दिल्ली ले आया। जाहिर है, इस प्रक्रिया में आगरे से बहुत बड़ी संख्या में विभिन्न पेशों के लोग दिल्ली आ बसे। शाहजहां और ओरंगजेब दोनों ने आगरे से अपना नाता नहीं तोड़ा। इन्होंने दिल्ली और आगरे के बीच संतुलन बनाए रखने की कोशिश की। वे दिल्ली और आगरा के बीच बराबर आते जाते रहे, पर आगरे का महत्व घटने लगा और आगरे का ह्रास प्रारम्भ हो गया। धीरे धीरे नजीर अकबराबादी के समय तक तो उन्हीं के शब्दों में आगरे की यह हालत हो गई थी:—

"जितने हैं आज
आगरे में कारखाना जात,
सब पर पड़ी है आन के
रोजी की मुश्किलात।
किस-किस के दुख को रोइए
और किस-किस की कहिए बात
रोजी के अग दरख्त का
हिलता नहीं है पात।
ऐसी हवा कुछ आके
हुई एक बाद बन्द"।

* डी०-228, निर्माण विहार, दिल्ली-92

उधर दिल्ली फलने-फूलने लगी थी। व्यापार का केन्द्र बन गई थी। बड़े-बड़े कारखाने स्थापित हो गए थे। आगरे से आए लोगों की बहुसंख्या इन्हीं कारखानों में काम करने लगी। तब तक दिल्ली में लगभग उन्हीं परिस्थितियों में, जिनमें अकबर के समय में आगरे की अनामित बोली का जन्म हुआ था। जन्मी उर्दु अपना अलग भाषाई रूप स्थापित कर चुकी थी दिल्ली के शिष्ट और अभिजात्य वर्ग ने उर्दु को अपना लिया था। समान परिस्थितियों में जन्म लेने की वजह से आगरे की बोली "उर्दु" के भी बहुत निकट थी, लेकिन अभिजात्य वर्ग, कारखानों के मजदूरों द्वारा बोली जाने वाली आगरे की बोली को हेय दृष्टि से देखते थे। "उर्दु" और खड़ी बोली" से आगरे की इस बोली की अलग पहचान बनाने के लिए इसे "करखनदारी" यानीं कि कारखानों में काम करने वालों की बोली नाम दे दिया। दरअसल में यह जितनी करीब "उर्दु" के हैं उतनी ही करीब "उर्दु" के हैं उतनी ही करीब "खड़ी बोली" के। वैसे भी उर्दु" और "खड़ी बोली" में कोई आधारभूत अन्तर नहीं है। अन्तर है तो केवल लिपि का और एक बाहुल्य पर जोर देने का अन्तर है।

आगरे की यह बोली अब पुराने आगरा और पुरानी दिल्ली की रोजमर्रा की बोलचाल की भाषा में आज भी प्रचलित है। अब इसमें साहित्यिक रचनाएं नहीं होती। किसी पात्र विशेष द्वारा आंचलिक पुट्ट देने के लिए कहानियों, उपन्यासों और नाटकों में इसका प्रयोग यत्र-तत्र अभी भी किया जा रहा है।

आगरे की इस बोली में ऐसा नहीं कि कभी साहित्य की रचना हुई ही न हो। खड़ी बोली हिंदी की प्रारम्भिक रचनाओं में इस बोली का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। नज़री अकबराबादी के "बंजारानामा" का यह अंश देखियेः—

"टुक हिसों हवा को छोड़ मियां मत देव विदेश फिरे मारा। कज्जाक अजल का लूटे है दिन रात बजाकर मक्कारा। क्या बधि या भैंसा बैल शुतुर क्या गोने पल्ला भर मारा। क्या गेहूं चावल मोठ मटर क्या आग धुवां और अंगारा। सब ठाठ पड़ा रह जायेगा जब लाद चलेगा बंजारा।"

इसमें टुक, हिंसों, हवा, देस, विदेस, लुटे हैं, गोने पल्ला, का प्रयोग दृष्टव्य है। लल्लू जी लाल के प्रेम सागर का यह अंश देखेः—

"इतना कह महादेव जी गिरजा को साथ ले गंगा तीर पर जाय, नीर में न्हाय न्हिलाय, अति लाड़ प्यार से लगे पार्वती जी को वस्त्र आभूषण पहिराने। निदान अति आनंद में मग्न हो उमरू बजाय बजाय नाच नाच, संगीत शास्त्र की रीति से गाय गाय लगे रिझाने"।

उपर्युक्त गद्यांश का वाक्य विन्यास और शैली न तो ब्रजभाषा की है और न ही खड़ी बोली और "उर्दु" की है। "उर्दु" की तो वैसे भी नहीं हो सकती थी क्योंकि "प्रेमसागर" की रचना से पूर्व ही लल्लू लाल ने स्पष्ट कर दिया था कि "दामनी भाषा छोड़" कर वे "प्रेम सागर" की रचना कर रहे हैं। परन्तु इसमें शब्दावली खड़ी बोली की अधिक है और क्रियाओं के ध्वनिग्राम और शैली नितांत पृथक है। जिस बोली का प्रयोग लल्लू लाल ने कि उसके विषय में स्वर्गीय पंडित बदरी नाथ भट्ट जी का कथन अत्यंत महत्वपूर्ण है। भट्ट जी आगरे के रहने वाले थे और लखनऊ विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग के अध्यक्ष थे। वे आगरे की संस्कृति और बोली में बहुत कहराई से जुड़े हुए थे। उनका कथन हैः—

"जिस भाषा में लल्लू जी जाज पुस्तकें लिख गए हैं, वह आज भी आगरे में हमारे घरों में बोली जाती हैं। जिस मोहल्ले में लल्लू जी लाल ने जन्म लिया था वहीं इस लेखक की जन्मभूमि है। जिन गलियों और सड़कों पर लल्लू जी लाल खेले थे उन पर इसे भी खेलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। अधिक क्या कहा जाय जिस तालाब में वह तैरना सीखे थे कि जिसके कारण पीछे उनका भाग्य चमका। उसी तालाब में हालांकि वह अब पक्का बन गया है। तैरना सीखने की इच्छा से इसने भी हाथ-पैर फटफटाए हैं। यद्यपि तैरना अब तक नहीं आया। लल्लू जी लाल का घर इसके झोंपड़े से बीस कदम की दूरी पर भी न था। उस मोहल्ले में ही नहीं सारे आगरे में देखिये आपको प्रत्येक हिंदु घर में "प्रेम सागर की भाषा सुनाई देगी। जो थोड़ा सा भेद दिखेगा वह वही होगा जिसका लिखने और बोलने की भाषा में होना स्वाभाविक है।"

पंडित बदरी नाथ भट्ट के उपर्युक्त कथन में "इस मोहल्ले में ही नहीं सारे आगरे में देखिये आपको प्रत्येक हिंदु घर में "प्रेम सागर की भाषा सुनाई देगी" ध्यान देने योग्य है आगरे की बोली में ध्वनि ग्रामों का जितना भेद है उतना शायद ही किसी बोली में हो। हिंदुओं की बोली ध्वनिग्रामों के धरातल पर मुसलमानों की बोली से भिन्न है। गोकुलपुरे के हिंदु "भैयो" और नाई की मण्डी के हिन्दू भैये" कहेंगे तो नाई की मण्डी के ही मुसलमान "वाई" कहेंगे। यह ध्वन्यात्मक भेद केवल यहीं तक सीमित नहीं है यह भेद जातिगत और मोहल्लागत भी है। नाई की मण्डी में ही धाकरों और बनियों की बोली में अन्तर है। धाकरों की बोली पर राजस्थानी की ध्वनियों का प्रभाव है तो बनियों और ब्राह्मणों की बोली पर ब्रज की ध्वनियों का। मुसलमानों की बोली की ध्वनियां एकदम मुक्त हैं, उनकी अपनी ही ध्वनियां हैं। लेकिन मुसलमानों की बोली में भी अन्तर है। नाई की मण्डी, सदर भट्टी, और गुदड़ी मंसूर खां की बोली की ध्वनियां एक जैसी नहीं हैं। हिंदुओं में आगरे की बोली में जातिगत भिन्नता है। गोकुलपुरा के गुजराती ब्राह्मणों, भाईथान और फुलट्टी के पंजाबी खत्रियों और कश्मीरी ब्राह्मणों तथा बेलनगंज के अग्रवाल बनियों की बोली में अंतर है। हमारे जमाने में ही हिंदी के कालामयी मूर्धन्य उपन्यासकार अमृतलाल नागर ने गोकुलपुरा की आगरे की बोली में एक लघु उपन्यास सेठ बांकेमल लिखा था। अमृतलाल नागर की ननिहाल और ससुराल दोनों आगरे में थी। भाषा के वैवंध्य के लिए उनके कान जितने सतर्क थे उतने हिंदी के शायद किसी लेखक के नहीं। सेठ बांकेमल के साज्हा बास्साय ने कलेजा कूटा से एक अंश यहां पेश किया जा रहा है। आगरे की बोली की एक बानगी देखियेः—

आ गए सेठ जी रोब में। हाथ बढ़ाकर बोले- "अरे दुकानदार करें हैं ये आजकल के लौंडे। कमटीसन में सालों ने बाजार बिगाड़ दीना, नई तो म्हाराज आगरा जैसा बास्साई मुलक, ऐसा सुसरा गोटे का रूजगार यहां होवे था कि सारी दुनिया पुकारे थी कि हा भई व्योपार रूजगार में दम-खम है तो अकबराबाद के ही अकबर बास्साय की बसाई हुई नगरी में है। म्हाराज थे कि जिसके राज में सूरज नई डूबे था और बीरबल ऐसा सुसरा उसका दोस्त था कि साले दुनियां भर में अकबर बीरबल होकर रै गये ओर आगरे में कुछ रंगत ही तो थी भैयों जो अकबर ऐसे बास्साय को दिल्ली से खींचयां तो ले लाई। गोकल ब्रिज की भूमि सुसरी आगरा। साली ऐसी मस्त हवा चले है यां ये, ऐसी घटायें छायें हैं, और ऐसी सुसरी तरकैट

शेष पृष्ठ 5 पर

हिन्दी का महत्व

डा॰ शशि तिवारी*

'निज भाषा उन्नति अहै,
सब उन्नति को मूल।'—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र।

किसी भी राष्ट्र की समृद्धि के लिए उसकी भाषा की उन्नति का महत्वपूर्ण योगदान होता है। भाषा के माध्यम से ही राष्ट्र अपने को अभिव्यक्त करता है और अपनी कल्याणकारी योजनाओं को कार्यान्वित करता है। शताब्दियों से यह काम संस्कृत भाषा ने किया है। अब यह काम हिन्दी कर रही है। इसमें सन्देह नहीं कि वह इसे सम्यक् रूप से करने में समर्थ भी है। आज राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में एक बार फिर हिन्दी के महत्व पर विचार करने की आवश्यकता है।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति से पूर्व हिन्दी भाषा तिरंगे झन्डे के समान भारतीय राजनीतिज्ञों और देशभक्तों द्वारा देश में एकता का सबसे बड़ा साधन मानी जाती थी। उस समय हिन्दी को राष्ट्रभाषा का पद देने की कल्पना जिन महापुरूषों ने की थी-वे हिन्दी भाषी नहीं थे। इनमें सबसे पहले बंगाल के अहिन्दीभाषी नेताओं के नाम आते हैं। **राजाराम मोहनराय** ने समस्त भारत की एकता बनाये रखने के लिए हिन्दी को अनिवार्य माना। ब्रह्मसमाज के अन्यतम बंगाली नेता **श्री केशवचन्द्र** ने सन् 1985 में अपने लेख में लिखा, "भारतीय एकता का उपाय है, सारे भारत में एक भाषा का व्यवहार हो। हिन्दी भाषा को अगर भारतवर्ष की एकमात्र भाषा बनाया जाये तो यह कार्य सहज और शीघ्र सम्पन्न हो सकता है।" **नेताजी सुभाषचन्द्र बोस** ने कलकत्ता कांग्रेस का अध्यक्षीय भाषण हिन्दी में पढ़ते हुए कहा था, "हिन्दी प्रचार का उद्देश्य किसी भी प्रान्तीय भाषा को हानि न पहुंचाते हुए केवल यह है कि आजकल जो काम अंग्रेजी से किया जाता है। वह आगे चलकर हिन्दी से किया जा सकता है।" बंगाल के नेताओं के अतिरिक्त महाराष्ट्र और गुजरात के महापुरुषों ने भी इसकी आवाज़ उठाई। **लोकमान्य बालगंगा धर तिलक** ने महाराष्ट्र की भाषा को मुखरित किया था। परन्तु वे कहा करते थे कि 'राष्ट्र के संगठन के लिए आज ऐसी भाषा की आवश्यकता है, जिसे सर्वत्र समझा जा सके।' आर्य-समाज के प्रवर्तक **स्वामी दयानन्द सरस्वती** ने गुजराती होकर भी यह अनुभव किया था कि हिन्दी ही एक ऐसी भाषा है, जिसे सर्वसाधारण जनता सरलता से समझ सकती है। स्वामी जी ने हिन्दी को 'आर्यभाषा' बताया और कहा, "हिन्दी के द्वारा ही सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है।" आगे चलकर गुजराती भाषी पूज्य बापू **महात्मा गांधी** ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के लिए अहिन्दी भाषी प्रान्तों में राष्ट्रभाषा प्रचार समितियों का जाल बिछा दिया। उन्होंने 1936ई॰ में कलकत्ता में कहा था, "आज की पहली और सबसे बड़ी समाज सेवा यह है कि इस अपनी देशी भाषाओं की ओर मुड़े और हिन्दी को राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करें।" इसी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए **सरदार वल्लभ भाई पटेल** ने 1940ई॰ में करांची-अधिवेशन में अपना अध्यक्षीय भाषण अंग्रेजी से पहले हिन्दी में पढ़ा। उनका यही विचार था कि भारत में राष्ट्रभाषा का स्थान हिन्दी को ही मिल सकता है। **चक्रवती राजगोपालचारी** का कथन था, "सबको हिन्दी सीखनी चाहिए, उसके द्वारा भावविनिमय से सारे भारत को सुविधा होगी।" इस प्रकार भारतीय स्वतन्त्रता के लिए प्रयत्नशील महापुरुषों ने देश में राष्ट्रीय भावना की जागृति के साथ-साथ राष्ट्र भाषा के रूप में हिन्दी का प्रचार और प्रसार भी किया था।

भारत के स्वतन्त्र होने के बाद हिन्दी को संविधान में गौरवपूर्ण स्थान दिया गया। भारत एक बहुभाषी देश है। संविधान में पन्द्रह भाषाएं प्रमुख मानी गयीं, जिनमें हिन्दी एक है। राष्ट्रभाषा का सम्बन्ध राष्ट्रीय चेतना से होता है। इस दृष्टि से हिन्दी और अन्य प्रान्तीय भाषाएं आज भारत की सामाजिक, सांस्कृति और भावात्मक एकता के लिए राष्ट्रभाषा के रूप में काम कर रही हैं।

संविधान-निर्माताओं ने अनुभव किया था कि बहुभाषी भारतवर्ष में एकता की भावना बढ़ाने की आवश्यकता है, जिसमें राष्ट्रीय उद्देश्यों की पूर्ति हो सके। उन्होंने इसमें हिन्दी को समर्थ माना, क्योंकि इसे बोलने और समझने वाले लोग अन्य सभी भाषाओं से अधिक हैं और फिर इसलिए भी, क्योंकि हिन्दी ने ही सांस्कृति पुनर्जागरण और राष्ट्रीय आन्दोलन में माध्यम भाषा की भूमिका निभाई थी। अतएवं हिन्दी को अखिल भारतीय स्तर पर संघ की राजभाषा का पद दिया गया। वास्तव में राजभाषा राष्ट्र की आर्थिक प्रगति, राजनीतिक एकता और प्रशासनिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए होती है। यह सरकारी कामकाज में प्रयुक्त होकर जनता तथा शासन के बीच सम्पर्क उत्पन्न करती है। इसलिए हिन्दी को संविधान के अनुच्छेद 343 में संघ की राजभाषा घोषित किया गया। अब हिन्दी राष्ट्रभाषा और राजभाषा दोनों रूपों में कार्य कर रही है। अन्य भारतीय भाषाएं सहयोगी भाषाओं के रूप में हैं। जिसप्रकार हिन्दी अखिल भारतीय स्तर पर है, उसी प्रकार अन्य भाषाएं अपने-अपने राज्य के स्तर पर राजभाषा के रूप में कार्य कर रही हैं। यहां यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि अन्य भारतीय भाषाएं हिन्दी की अधीनस्थ भाषाएं नहीं हैं। अपितु समान महत्व की भाषाएं हैं।

हिन्दी भाषा एक सशक्त, सबल, सम्पन्न और समृद्ध भाषा है। यह भारत की जनभाषा है। हिन्दी व्यापक संचार या सम्पर्क की भाषा है। यह अन्य भाषाओं की तुलना में अधिक प्रचलित, विकसित और सरल है। इसे देश के अधिक लोग बोलते और समझते हैं। देश के लगभग सभी व्यापारिक केन्द्रों, तीर्थस्थानों, पर्यटनस्थलों में जहां भी अलग-अलग प्रदेश के लोग आपस में मिलते और बातचीत करते हैं उनकी भाषा हिन्दी ही होती है; भले ही वह टूटी-फूटी ही क्यों न हो। **फादर कामिल बुल्के** ने हिन्दी की व्यापकता के विषय में कहा था। "हिन्दी ने केवल देश के 20 करोड़ लोगों की सांस्कृतिक भाषा है, बल्कि वह बोलने और समझने वालों की संख्या की दृष्टि से चीनी और अंग्रेजी के बाद दुनिया की तीसरी भाषा

*प्राध्यापक, संस्कृत विभाग, मैत्रेयी कालेज, चाणक्य पुरी, नई दिल्ली

है।---भारत के सभी धर्मों और विभिन्न भाषा भाषियों ने हिन्दी के विकास में योगदान दिया है। वह किसी विशिष्ट वर्ग, प्रदेश या समुदाय की भाषा न रहकर भारतीय जनता की भाषा है।"

भारत के बाहर फीज़ी, सूरीनाम, मारीशस, गियाना आदि ऐसे कितने ही देश है; जहां हिन्दी का विशेष आदर और प्रयोग होता है। विश्व के अनेक विश्वविद्यालयों में इस भाषा का अध्ययन-अध्यापन होता है। जिससे भी हिन्दी का अन्तर्राष्ट्रीय महत्व व्यक्त होता है। संसार के मुख्य रेडियो और टेलीविशन-संस्थान, जैसे बी०बी०सी० वायस आॅफ अमरीका, रेडियो मास्को, रेडियो पीकिंग, रेडियो सिलोन-हिन्दी में नियमित कार्यक्रम प्रस्तुत करते हैं। हिन्दी के प्रसार और महत्व पर बोलते हुए स्वर्गीय प्रधानमन्त्री **श्रीमती इन्दिरा गान्धी** ने प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन (जनवरी, 1975) के उद्घाटन-भाषण में कहा था, "हिन्दी विश्व की महान् भाषाओं में से एक है। यह करोड़ों की मातृभाषा है और करोड़ों लोग ऐसे हैं, जो इसे दूसरी भाषा के रूप में बोलते हैं। गंगा-यमुना के निकटवर्ती प्रदेशों में विकसित होकर, इस भाषा का प्रयोग भारत के सुदूर कोनों तक प्रचलित हैं।"

हिन्दी के सांस्कृतिक महत्व की समीक्षा करें। तो हम पाते हैं कि यह भारत की सामासिक संस्कृति की अभिव्यक्ति की भाषा है। यह भारत के दर्शन और चिन्तन को प्रकट करती है। इससे भारत की आत्मा की पहचान होती है। हिन्दी में देश की सांस्कृतिक परम्पराओं को व्यक्त करने की क्षमता है। यह उस संस्कृति की भाषा है, जिसने सदा मानव के व्यापक रूप की उपासना की है और विश्व को एक परिवार माना है।

हिन्दी के महत्व पर साहित्यिक दृष्टि से विचार करें। तो स्पष्ट होता है कि हिन्दी भाषा सभी भारतीय भाषाओं के लिए एक विकास-द्वार है। प्रदेशिक साहित्यों का जितना अनुवाद हिन्दी में हुआ है, उतना किसी और भाषा में नहीं। उड़िया, कन्नड़, बंगाली, मलयालम, मराठी आदि भाषाओं के उच्चकोटि को साहित्यकारों की प्रसिद्धि में उनके ग्रन्थों के हिन्दी अनुवादों का विशेष हाथ रहा है। अहिन्दी भाषी साहित्यकारों की रचनाओं के हिन्दी अनुवादों से सम्पूर्ण भारत में उनका यश फैला है। यही तथ्य, नाटकजगत और सिनेमाजगत् के साथ भी उतना ही सच है। साहित्य में राष्ट्रीय ख्याति अर्जित करने के लिए हिन्दी रूपान्तरों का भारी योगदान रहता है। इस सन्दर्भ में यह कहना भी उचित होगा कि हिन्दी से भिन्न भाषा के साहित्य कारों द्वारा इस प्रकार हिन्दी भाषा और साहित्य की समृद्धि ही हुई है। अतः विभिन्न भारतीय भाषाओं के रचनाकारों के सहयोग और योगदान से हिन्दी का रूपरंग और अधिक विकसित हुआ है।

स्पष्ट है कि हिन्दी भाषा का महत्व-ऐतिहासिक, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय, सांस्कृतिक, साहित्यिक सामाजिक आदि अनेकानेक दृष्टियों से हैं। यह हमारी स्वतन्त्रता और राष्ट्रीयता की प्रतीक है। यह हमारी सांस्कृतिक परम्परा की उत्तराधिकारिणी है। यह राष्ट्रीय सम्पर्क की भाषा है, क्योंकि इसके बोलने वालों का परिवार सबसे बड़ा है। अपनी सभी भारतीय भाषाओं का पूर्ण सम्मान करते हुए राष्ट्रीय भावना और भावनात्मक एकता को बढ़ाने के लिए हमें राजभाषा हिन्दी को उसके पद पर सही अर्थों में निष्ठा पूर्वक स्थापित करने का संकल्प लेना चाहिये। □

पृष्ठ 3 का शोषांश

बगीचियां है कि अकबर भी म्हाराज बोल उठा कि हां भई मैं सोन्साय बास्साय हो गया तो क्या, पर ऐसा मुलक तो दुनिया के परदे पर मैंने आंखों से देखाई नहीं था। बित्रे फोरन कईग कि बीरबल, अब तो मेरा दिल दिल्ली से फोकस हो गा। कोई न कोई बन्दोबस्त करो जल्दी से। बीरबल ने कई कि महाराज घबराओं क्यों हो बास्साय सलामत, अभी अकबराबाद बसाए दूं हूं। ये कौन सी बड़ी बात है। बस हजूर के हुक्म की देर थी।"

आगरे की बोली की एक और विशेषता है, वह है मुहावरों का सटीक प्रयोग। कुछ मुहावरे देखें:—

'समझे सो गधा और अनाड़ी की जाने बला।
"लकड़ी के बल मकड़ी नाचै" बार मियां हफ्त हजारी, घर में जोरू फाकों मारी"
"कसम है उड़न झल्ले की"
"खून पानी एक करना"
"फुली फूली खाना"

आगरे की बोली की विशेषता है उसके ध्वनिग्रामों की विविधता, विभिन्न स्वाघात, महाप्राण का लोपीकरण कतिपय शब्दों का अनुनासिकरण, सदृशीकरण, और पुनरावृति। इन्हीं विशेषताओं के कारण, यदि कान सतर्क हो तो यह पहचाना जा सकता है कि बोलने वाला हिंदू है या मुसलमान, कुजराती है या खत्री, नाई की मण्डी का है या माईथान का, गुकुलपुरे का है या सदर भट्टी का।

किस्सा कोतह यह है कि जब हम भाषा की सामासिक संस्कृति की बात करते हैं तो आगरे की बोली को नजरअंदाज नहीं कर सकते। इसी के साथ यह भी ध्यान में रखने की बात है कि आगरे की बोली का जन्म आगरे की परिस्थितियों के कारण हुआ। आगरे में जब विभिन्न भाषा भाषी लाकर बसाये गये व्यापार का केन्द्र बना तो एक ऐसी संपर्क बोली की आवश्यकता पड़ी जिसमें सभी बतिया सकें और रोजमर्रा का काम निकाला जा सके। ऐसी ही परिस्थितियों में बम्बई में भी एक बोली का जन्म हुआ है, जिसे हम बम्बइया हिंदी कहने लगे हैं। हमें कुछ अजीब सा लगता है। बम्बई में "लाल पीला" होता है "बाम्ब मारता है" और ग्राहक को "एक ठो पानी का गिलास मारो" भी चलता है। आगरे की बोली और बम्बइया हिंदी एक शहर की भाषाई आवश्यकता की पूर्ति करती हैं। एक संपर्क बोली के रूप में काम करती है। पूरे देश की भी यही आवश्यकता है। बम्बइया हिंदी और आगरे की बोली, संपर्क भाषा के रूप में हिंदी के विकास की ओर क्या कोई संकेत देती है। सोचिये। आगरे की बोली के महत्व को भी समझिये।

आगरे की बोली में गालियों का प्रयोग उन्मुक्त रूप से किया जाता है। हिंदू बाहुल्य मोहल्ले में ये गालियां, साले, सुसरे और हरामी दा, हरामजादे तक ही सीमित रहती है किंतु मुसलमान बाहुल्य मोहल्लों में मां, बहन, और बेटी की गालियां और इन्हीं से लारक्षणिक तौर पर बनी गालियों का प्रयोग हिंदू भी करते हैं। भाषा मनोविज्ञान के लिए अध्ययन के लिए प्रचूर सामग्री है।

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी भाषा: संघर्ष और संकल्पना

—शंकर दयाल सिंह*

भाषा की चर्चा प्रारंभ करते हुए स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि उसके किस रूप पर विस्तृत विचार हो। साहित्यिक भाषा, कामकाज की भाषा या बोलचाल की भाषा। पहले वर्ग में वह भाषा आती है जिसे सिद्दों-नाथों ने अपना आधार बनाया, अमीर खुसरो से लेकर रामधारी सिंह "दिनकर" तक ने साहित्यिक रूप दिया आदि काल, भक्तिकाल और रीतिकाल पार करते हुए जो आधुनिक काल तक पहुंची। दूसरा रूप कामकाज की भाषा का है, जिसे मुख्य रूप से शासकीय भाषा कह सकते हैं, यह गौरव हिन्दी को आजादी के बाद ही प्राप्त हो सका। भाषा का तीसरा रूप है बोलचाल की भाषा का, जिसे हम जनभाषा कह सकते हैं। यह जनभाषा वह है जिसे साक्षर और निरक्षर सभी संपर्क-भाषा के रूप में व्यवहार में लाते हैं। लिखने और पढ़ने से अलग बोलना और समझना भाषा के सबसे सशक्त माध्यम हैं। भारत जैसे देश में जहां आजादी के 47 वर्षों बाद भी निरक्षरों की संख्या 48 प्रतिशत है, इस बोलचाल अथवा संपर्क-भाषा का विशेष महत्व है। यही वह भाषा है, जिसे साधुओं, संतों, गायकों, धर्म-प्रचारकों, समाज सुधारकों तथा यायावरों ने अधिक से अधिक काम में लाया। स्वामी दयानंद सरस्वती ने इसी भाषा में "सत्यार्थ-प्रकाश" लिखा तथा राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने इसके माध्यम से आजादी की पूरी लड़ाई लड़ी तथा इसे राष्ट्रभाषा के रूप में प्रचारित-प्रसारित किया। यही वह जनभाषा है जिसे आजादी के बाद 14 सितम्बर 1949 को राजभाषा के रूप में संविधान में स्थान मिला। यहां विशेष तौर पर उसी हिन्दी यानी राजभाषा हिन्दी पर मैं प्रकाश डालूंगा, जबकि स्वतंत्र्योत्तर हिन्दी भाषा और साहित्य पर भी विस्तृत चर्चा करना मेरा उद्देश्य है।

भाषा की चेतना प्रवाहमान होती है। आदान-प्रदान तथा सम्मिश्रण इसके बहुत बड़े आधार हैं। भाषा की संरचना के विश्लेषण के लिए भाषिक सामग्री की आवश्यकता होती है। इसके आधार पर ही हम शुद्ध और अशुद्ध दो कोटियों में इसका विभाजन करते हैं। भारत की संकल्पना सामाजिक रूप में भी की जाती है और किसी जमाने में भारत में भी संस्कृत से अलग हटकर जब इसका निर्माण हो रहा था तो उसे अपभ्रंश नाम ग्रहण करना पड़ा था। वह काबीलों और समूहों के आधार पर भी गढ़ी गयी।

हम इस चर्चा को बहुत दूर तक नहीं ले जाना चाहते, लेकिन अवश्य कह दें कि हिन्दी का विकास प्रारंभ से भारत की एक सार्वजनिक भाषा के रूप में हुआ, जिसका क्षेत्र विस्तार गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब से लेकर राजस्थान, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, बिहार और बंगाल तक रहा। बीच के दिनों में हैदराबाद को केन्द्र बना कर दक्खिनी हिन्दी की चर्चा भी इसी क्रम में होती रही। यों माना जाता है कि मुख्य रूप से हिन्दी मध्य क्षेत्र की भाषा है। इससे स्पष्ट है कि हिन्दी भाषा का विकास राष्ट्रव्यापी चेतना के रूप में प्रस्फुटित होता रहा है, जिसमें बहुत बड़ा योगदान संतों, फकीरों, व्यापारियों, मुसाफिरों, तीर्थयात्रियों एवं सैनिकों का रहा है। लोकभाषाओं अथवा जनपदीय भाषाओं का योगदान भी हिन्दी भाषा के विकास में एक महत्वपूर्ण घटक है। जिसे देशज कहा गया, उसकी भी भूमिका कुछ कम नहीं है।

वर्तमान हिन्दी का स्वरूप निर्माण संस्कृत, प्राकृत, मागधी, अर्द्धमागधी, शौरसेनी, अपभ्रंश, फारसी के साथ ही अन्य भारतीय भाषाओं के संयुक्तिकरण से हुआ है। अवधी, ब्रज, मैथिली, बुंदेलखंडी, राजस्थानी, निमाड़ी आदि का विपुल साहित्य इसके लिए सेतुबंध बना। यों आठवीं शताब्दी में सिद्धों में प्रमुख सरहपाद को महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने हिन्दी का आदि कवि कहा। सरहपाद की पदावली की छटा देखें:

जहि मन पवन न संचरई, रवि ससि नाह पवेस।
तांहि बट चित विसाम करूं, सरहे कहिज उवेस।।

दसवीं-ग्यारहवीं शताब्दी में अमीर खुसरो ने जिस भाषा का प्रयोग किया, वह वर्तमान हिन्दी के सबसे करीब है। उनकी भाषा की बानगी देखें:

खीर बनायी जतन से, चूल्हा दिया जला
आया कुत्ता खा गया, तू बैठी ढोल बजा

इसी तरह:

हरी थी मन भरी थी, नौलाख मोती जड़ी थी
राजा जी के बाग में दुशाला ओढ़े खड़ी थी।

फिर कबीर जब सधुक्खड़ी भाषा लेकर हमारे सामने आते हैं तो दृश्य बदल जाता है—

अंखड़ियां झाई पड़ी, पंथ निहार-निहार
जीभड़ियां छाला पड़ा, राम पुकार-पुकार

कबीरा धीरज के धरे, हाथी मन भर खाये
टूक एक के कारने, स्वान घरे घर जाये

कबीर ने भाषा को "बहता नीर" कहा है।

आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल को पार करती हुई हिन्दी जब वर्तमान युग में पहुंची तो वह "खड़ी" हो गयी। यह एक विचित्र बात है कि अनेक भाषाओं के मंजन-मंथन के बाद जिस भाषा का निर्माण हुआ और जो सबसे सशक्त माध्यम के रूप में हमारे सामने है, वह "भाषा" न कहला कर "बोली" कही गयी— "खड़ी बोली"। इसलिए मैंने अब तक केवल हिन्दी के रूप में ही इसकी चर्चा की। यहां मैं इस बात के लिए सुनीति बाबू का लोहा मानता हूं कि उन्होंने हिन्दी को बोली के रूप में नहीं

*सांसद तथा उपाध्यक्ष, संसदीय राजभाषा समिति, 11 तीन मूर्ति मार्ग, नई दिल्ली।

लिया तथा इस संबंध में अपनी सारी मान्यताएं "भारतीय आर्य भाषा और हिन्दी" के रूप में प्रस्तुत की।

डा. राम विलास शर्मा ने "भारत की भाषा समस्या" तथा "भाषा और समाज" जैसे ग्रंथ लिख कर विद्धत समाज का बड़ा उपकार किया है, लेकिन मैं उस विश्लेषण में जाना नहीं चाहता। मैं इतना ही कहना चाहूंगा कि भाषा एक संस्कार है। भावी की अभिव्यक्ति हम किसी भी भाषा में लिखकर या बोल कर करते हैं तो हम शब्दों का सहारा लेते हैं। शब्द हमारी सबसे बड़ी पहचान हैं। यदि अक्षर ब्रह्म हैं तो शब्द शिव, जो निर्माण की क्षमता भी रखते हैं और संहार का आक्रोश भी।

मुख्य रूप से हिन्दी साहित्य और भाषा के चार स्वरूप हमारे सामने हैं। एक वह जिसके द्वारा साक्षर-निरक्षर लोगों ने अपने भावों को प्रकट किया। दूसरा वह जो उन भावों को अक्षरों के सहारे सुरक्षित रखने का माध्यम बनी, जिसमें विपुल साहित्य रचा गया। तीसरा रूप वह है जिसने सामाजिक उत्थान और राष्ट्रीय जागरण की भूमिका निभाई जिसके लिए हम दयानन्द सरस्वती से लेकर महात्मा गांधी तक तथा राजा राममोहन राय से लेकर नेताजी सुभाष चन्द्र बोस तक की चर्चा किया करते हैं। हिन्दी के उसी रूप को लोक मान्य बाल गंगाधर तिलक से लेकर सुब्रमण्यन भारती तक ने राष्ट्रभाषा कह कर पुकारा, के.एम. मुंशी से लेकर श्री मोरारजी भाई देसाई तक ने इसकी वकालत की और आजादी की लड़ाई में गांधीजी ने सबसे बड़े हथियार के रूप में इसका उपयोग किया। लेकिन हिन्दी अथवा भाषा की चर्चा वहां आकर संघर्ष अथवा विवाद का रूप ग्रहण कर लेती है जिसे आजादी के बाद "राजभाषा" के तौर पर समादृत किया गया। अब यहां यह जरूरी है कि कुछ इसका विश्लेषण कर लें, तब आगे बढ़ें।

आजादी के साथ जो जनभाषा हिन्दी का राज्याभिषेक लोकतंत्र की सबसे बड़ी प्रतिष्ठा कही जा सकती है। जनता की सामान्य बोलचाल और निरक्षरों के व्यवहार की भाषा हिन्दी को जब राजभाषा का दर्जा दिया गया तो उस दिन निश्चय ही गांधीजी का सपना पूरा हुआ, जिनका आक्रोश था कि "लाखों लोगों को अंग्रेजी का ज्ञान कराना उन्हें गुलाम बनाना है। मैकाले ने भारत में जिस शिक्षा की नींव रखी, उसने हम सबको गुलाम बना दिया।" यानी गांधीजी अंग्रेजी को गुलामी का प्रतीक मानते थे।

आजादी करीब आ गयी थी, उन्हीं दिनों गांधीजी और जवाहरलाल में हिन्दी के संबंध में मधुर विवाद छिड़ गया। नेहरू चाहते थे कि अंग्रेज चले जायें और अंग्रेजी रह जाये, जबकि गांधीजी का कहना था कि अंग्रेज रहें तो रहें पर अंग्रेजी चली जाये।

15 अगस्त, 1947 को देश आजाद हुआ, उसके एक माह बाद 21 सितम्बर को गांधीजी ने "हरिजन सेवक" में लिखाः " मेरा कहना यह है कि जिस तरह हमारी आजादी को छीनने वाले अंग्रेजों की सियासी हुकुमत को हमने सफलतापूर्वक इस देश से निकाल दिया, उसी तरह हमारी संस्कृति को दबाने वाली अंग्रेजी भाषा को भी हमें यहां से निकाल देना चाहिए। हां, व्यापार और राजनीति की अंतर्राष्ट्रीय भाषा के नाते अंग्रेजी का अपना स्वाभाविक स्थान हमेशा कायम रहेगा।

इस संदर्भ में "इला भारती" में प्रकाशित विस्तृत टिप्पणी को मैं यहां उद्धरित करना चाहता हूं जिससे स्वराज्य के बाद हिन्दी के संबंध में जो विवाद उठ खड़ा हुआ है उसका खुलासा हो सकेः

'गांधीजी के जीवन काल भर मुसलमान हिन्दुस्तानी को अपनाने को तैयार नहीं हुए, मगर संविधान-परिषद में वे एक स्वर से हिन्दुस्तानी के साथ थे। यदि 14 सितम्बर 1949 को गांधीजी जीवित रहे होते, तो हिन्दुस्तानी का पक्ष उतना कमजोर नहीं होता। फिर भी गांधीजी ने जीवन भर हिन्दुस्तानी की जो बक़ालत की थी, उसी का यह परिणाम हुआ कि संविधान की धारा 351 में हिन्दुस्तानी का भी उल्लेख कर दिया गया। इसी प्रावधान की ओर लक्ष्य करते हुए पं. जवाहरलाल नेहरू ने संविधान-परिषद में कहा था कि "इस प्रस्ताव में कोई बात है जिस पर ज्यादा जोर पड़ना चाहिए था। फिर भी अगर वह चीज इस प्रस्ताव में नहीं रहती, तो मैं इसे स्वीकार नहीं कर सकता था।"

कुछ लोग इस बात से भी दुखी थे कि संविधान-परिषद की हिन्दी लॉबी ने उतना कठोर रूख क्यों अपनाया। श्री श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने कहा था, "यदि हिन्दी के समर्थक जोश में नहीं आते और आक्रामक ढंग से हिन्दी को आगे बढ़ाने को कोशिश नहीं करते, तो भारत की जनता सहज भाव से स्वेच्छा से हिन्दी को अपना लेती। किन्तु, दुर्भाग्यवश अब लोगों के भीतर भय समा गया है।"

अंतर्राष्ट्रीय अंकों का विरोध राजर्षि श्री पुरूषोत्तम दास टंडन ने बड़े जोर से किया था। उन्होंने जब यह कहा कि जनमत लिया जाये, महाराष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय अंकों को स्वीकार नहीं करेगा, तब किसी ओर से आवाज आयी कि जनमत लेने से तो हिन्दी आयेगी ही नहीं। इस पर टंडन जी ने जवाब दिया, यदि विभिन्न प्रांत हिन्दी को कबूल नहीं करते हैं, तो मैं किसी भी हालत में उनपर हिन्दी लादने को तैयार नहीं हूं। प्रांत हिन्दी को ग्रहण करेंगे या नहीं, यह निश्चय तो उन्हीं को करना है। जो लोग आज जिम्मेवारी की जगहों पर यहां बैठे हुए हैं, उनसे मैं अपील करूंगा कि वे अपनी अंतरात्मा की बारीक आवाज को सुनने की कोशिश करें और ऐसी को अमान्य होगी।

जिन दिनों संविधान-परिषद की लॉबी में भाषा समस्या की चर्चा चल रही थी उन्हीं दिनों दिल्ली में सर्वभाषा विद्धत सम्मेलन हुआ था, जिसमें यह प्रस्ताव पास हुआ था कि हिन्दी भाषी इलाकों के लोगों को भी अहिन्दी भाषा अवश्य सीखनी चाहिए.इस प्रस्ताव का हवाला संविधान-परिषद में स्व. श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने दे दिया था और यह कहा था कि यह प्रस्ताव कहां तक काम में लाया जाता है, इसे हम ध्यान में देखेंगे।

केवल देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी का प्रस्ताव जिस रूप में पास हुआ, उससे गुजरात और महाराष्ट्र के कुछ खाँटी गांधीवादियों पर यह प्रभाव पड़ा कि जीत हिन्दू प्रतिक्रियावादियों की हुई है और गांधीजी की विचारधारा हार गयी है। अतएव, उन्होंने संविधान की धारा 351 को जोर से पकड़ा और वे यह कहने लगे कि जो हिन्दी राजभाषा अथवा राष्ट्रभाषा मानी गयी है, वह वही हिन्दी नहीं, जिसका प्रचलन हिन्दी भाषी प्रान्तों में है। इस विषय की जांच करने के लिए बम्बई सरकार ने एक हिन्दी शिक्षण समिति का गठन किया, जिसकी रिपोर्ट 1950-51 ई. में प्रकाशित हुई। इस समिति ने यह मत दिया कि धारा 351 द्वारा सांकेतिक हिन्दी वह नहीं है जो उत्तर भारत में प्रचलित है।

उर्दू, हिन्दुस्तानी और हिन्दी, इन तीनों भाषाओं में पारिभाषिक शब्दों के निर्माण का प्रयोग रोचक रहा है। सबसे पहले हैदराबाद के उस्मानिया विश्वविद्यालय में डाक्टर अब्दुल हक के नेतृत्व में उर्दू प्रेमियों ने पारिभाषिक

शब्दों का निर्माण किया। वे सारे के सारे शब्द अरबी और फारसी की धातुओं से तथा उन्हीं के व्याकरण के अनुसार बनाए गये थे। किन्तु वे शब्द उर्दू प्रेमियों को भी भारी मालूम हुए और उनका प्रचलन नहीं हो सका। तब गांधीजी की हिन्दुस्तानी के समर्थक संस्कृत और अरबी फारसी से बच कर हिन्दुस्तानी में शब्द-निर्माण करने लगे। किन्तु, हिन्दुस्तानी के पारिभाषिक शब्द इतने निकम्मे और हास्यास्पद निकले कि विद्वानों ने उस प्रयोग को बिल्कुल बंद कर दिया। (जैसे कई पुस्तकों में बादशाह राम और बेगम सीता) इन प्रयोगों से शिक्षा लेकर स्वतंत्र भारत के शिक्षा मंत्री, स्व० मौलाना अबुल कलाम आजाद ने विभिन्न विषयों के विद्वानों की तीस-पैंतीस समितियां बना दी और उनके जिम्मे शब्द-निर्माण का कार्य सौंपा। इन समितियों ने विज्ञान के उन शब्दों को ज्यों का त्यों हिन्दी में दाखिल कर लिया, जो अंतर्राष्ट्रीय समझे जाते हैं। समितियों की नीति यह भी रही है कि अरबी और फारसी प्रचलित शब्दों का बहिष्कार नहीं किया जाये तथा भारत की हिन्दीतर भाषाओं में जो शब्द उपयोगी दिखें, उन्हें हिन्दी में दाखिल कर लिया जायो फिर भी सरकारी प्रयत्न से जो शब्द तैयार हुए हैं, वे उन लोगों के बीच लोकप्रियता नहीं प्राप्त कर रहे हैं, जिनका लगाव अरबी और फारसी से है।

गांधीजी ने कल्पना यह की थी कि हिन्दी के जिस रूप को उत्तर के हिन्दू मुसलमान, सिक्ख, फारसी और क्रिश्चियन स्वीकार कर लेंगे, उसे बाकी देश भी मान लेगा। किन्तु शब्द निर्माण के सिलसिले में जो अनुभव हुए उन्हें देखते हुए यह कहा जा सकता है कि गांधी जी जीवित होते, तब भी अहिन्दी प्रान्तों में हिन्दुस्तानी चलाने का काम कठिन होता। अरबी और फारसी के शब्द सरल हो या कठिन उन्हें हिन्दी वालों द्वारा मनवाया जा सकता है। किन्तु समितियों में कोई न कोई अहिन्दी भाषी विद्वान उनका विरोध अवश्य करता है और अक्सर उनकी पसंद किसी संस्कृत शब्द के लिए होती है। कठिनाई यह है कि हिन्दी का जो रूप मुसलमानों, सिक्खों, पारसियों और ईसाइयों को पसंद आता है, ठीक वही रूप अहिन्दीभाषी इलाकों को कठिन होता है और जो हिन्दी-अहिन्दीभाषी क्षेत्रों को सुगम मालूम होता है उसे वे लोग पसंद नहीं करते, जो अरबी और फारसी के करीब हैं।

संविधान में यह प्रावधान रखा गया था कि संविधान के लागू होने के दिन से 15 वर्ष आगे तक अंग्रेजी चलती रहेगी और 15 वर्ष के बाद भी अगर संसद की यह राय हो कि विशिष्ट विषयों के लिए अंग्रेजी का प्रयोग आवश्यक है, तो संसद कानून बना कर उन विषयों के लिए अंग्रेजी को जारी रख सकती है। किन्तु इन 15 वर्षों के भीतर हिन्दी के प्रयोग पर कोई प्रतिबंध नहीं था। अतएव 27 मई, 1952 को राष्ट्रपति ने एक आदेश निकाला, जिसमें कहा गया था कि (1) राज्यपालों (2) सर्वोच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों एवं (3) उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्तियों के अधिपत्रों में अंग्रेजी भाषा के साथ-साथ हिन्दी भाषा तथा अंतर्राष्ट्रीय अंकों के साथ-साथ देवनागरी अंकों का भी प्रयोग किया जा सकता है।

राष्ट्रपति का दूसरा आदेश 3 दिसम्बर 1955 ई० को जारी हुआ जिसमें कहा गया कि:

1. जनता के साथ पत्र व्यवहार
2. प्रशासनिक रिपोर्ट, राजकीय पत्रिकाएं, संसद को दी जाने वाली रिपोर्ट
3. सरकारी संकल्प और विधायी अधिनियम
4. जिन राज्य सरकारों ने अपनी राज्यभाषा के रूप में हिन्दी को अपना लिया है उनसे पत्र व्यवहार
5. अन्य देशों की सरकारों और उनके दूतों तथा अंतर्राष्ट्रीय संगठनों से पत्र व्यवहार
6. राजनयिक और कौंसलीय पदाधिकारियों और अंतर्राष्ट्रीय संगठनों में भारतीय प्रतिनिधियों के नाम जारी किए जाने वाले औपचारिक दस्तावेज

इन सातों प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी भाषा का भी प्रयोग किया जायेगा।

सन् 1955 ई० में ही राष्ट्रपति ने बालगंगाधर खेर की अध्यक्षता में राजभाषा आयोग की स्थापना की। इस आयोग की रिपोर्ट सन् 1956 ई० में प्रस्तुत की गई। संविधान की आज्ञा के अनुसार यह रिपोर्ट संसदीय समिति के समक्ष रखी गयी, जिसके अध्यक्ष स्व० पंडित गोविन्द वल्लभ पंत थे। समिति ने खेर आयोग की रिपोर्ट पर विचार करके अपनी सिफारिशें राष्ट्रपति की सेवा में 8 फरवरी सन् 1959 ई० को पेश की तथा इन सिफारिशों पर विचार करके राष्ट्रपति ने अपना तीसरा आदेश 27 अप्रैल सन् 1960 ई० को जारी किया। विधि मंत्रालय में राजभाषा (विधायी) आयोग तथा शिक्षा मंत्रालय में वैज्ञानिक व तकनीकी शब्दावाली आयोग की स्थापनाएं राष्ट्रपति के इसी तीसरे आदेश के अधीन की गई। गृह मंत्रालय के द्वारा सरकारी कर्मचारियों को हिन्दी सिखाने की योजना सन् 1955 ई० से ही चलायी जा रही है और इस योजना का भी सुझाव राष्ट्रपति के यहां से आया था।

खेर कमीशन के जिम्मे राष्ट्रपति ने एक काम यह भी सौंपा था कि कमीशन हिन्दी के प्रचार, विकास और प्रगामी प्रयोग की योजना तैयार कर दे, जिसके अनुसार भारत सरकार काम करेगी। किन्तु सन् 1956 ई० तक हालत यह थी कि हिन्दी के बारे में उस वक्त कोई ठोस काम नहीं हुआ था, न तो भारत के दफ्तरों में न हिन्दी भाषी राज्यों के सचिवालयों में। खेर आयोग हिन्दी की कोई योजना तैयार न कर सका।

सन् 1963 के आते-आते यह बात स्पष्ट होने लगी कि सन् 1956 ई० में शासन का माध्यम अंग्रेजी से बदल कर हिन्दी नहीं किया जा सकेगा। इस बीच अहिन्दी प्रान्तों में उठने वाली शंकाओं के समाधान के लिए प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने संसद में यह घोषणा कर दी कि जब तक अहिन्दी भाषी राज्य अंग्रेजी को चलाना चाहेंगे, तब तक हिन्दी के साथ-साथ केन्द्र में अंग्रेजी भी चलती रहेगी। सन् 1963 ई० में जो भाषा अधिनियम बना उसका आधार प्रधानमंत्री का यही आश्वासन था। इस अधिनियम ने यह निर्णय कर लिया कि विशिष्ट कार्यों के लिए ही नहीं, बल्कि सभी कामों के लिए हिन्दी के साथ-साथ अंग्रेजी का भी प्रयोग जारी रहेगा। संविधान की आज्ञा थी कि सन् 1965 ई० के बाद अंग्रेजी विशिष्ट कार्यों के लिए प्रयुक्त के जा सकेगी। यह भारत सरकार की घोर पराजय का उदाहरण था कि 15 साल बीत जाने पर भी उसे ऐसा कोई क्षेत्र नहीं मिला, जहां केवल हिन्दी में काम किया जा सके और अंग्रेजी पर रोक लगा दी जाए। अदालतों में तो इस बात की जांच नहीं हुई कि सन् 1963 ई० का भाषा अधिनियम संविधान के आशय के विरूद्ध जाता है या नहीं किन्तु अनेक लोगों को यह शंका है कि अधिनियम संविधान के आशय के विरूद्ध है।

ज्यों-ज्यों 1965 समीप आने लगा, सरकार के भीतर थोड़ी सुगबुगाहट पैदा हुई कि हिन्दी के बारे में हमें कुछ करना है। खासकर सन् 1964 ई॰ में हिन्दी पढ़ने वाले सरकारी कर्मचारियों की संख्या में काफी वृद्धि हो गयी। सारी निष्क्रियता के होते हुए भी सरकारी हलकों में यह भावना जग गयी कि जनवरी सन् 1965 ई॰ से देश की मुख्य राजभाषा हिन्दी ही होगी, अंग्रेजी का स्थान सहभाषा होने के कारण गौण हो जायेगा। किन्तु सन् 1965 के जनवरी और फरवरी महीनों में मद्रास राज्य में हिंदी विरोधी आंदोलन बड़े जोर से फूट पड़ा। इस आंदोलन से भारत सरकार इस कदर भयभीत हो गयी कि उसने हिंदी के सभी कामों में ढील दे दी। न जाने कहां से यह बात निकल पड़ी कि मद्रास के लोग अंग्रेजी के बारे में जवाहरलाल जी द्वारा दिये गये आश्वासन को कानून में बदलना चाहते हैं और तत्कालीन प्रधान मंत्री स्व॰ लालबहादुर शास्त्री ने, सचमुच ही यह घोषणा कर दी कि जवाहर लाल जी द्वारा दिये गये आश्वासन को सरकार कानून का रूप देगी।

मद्रास में होने वाले उपद्रवी आंदोलन के बाद भाषा के प्रश्न पर पुनःचिंतन आरभ हुआ और कांग्रेस की कार्य समिति ने यह निर्णय कर लिया कि संघीय लोक सेवा आयोग की परिषाएं केवल हिन्दी में ही नहीं बल्कि संविधान उल्लिखित सभी भारतीय भाषाओं में ली जाए। इस निर्णय के आधार पर भारत सरकार ने सतीशचन्द्र कमैटी का गठन किया जिसकी सिफारिश सरकार को मिल चुकी है और संघीय लोक सेवा आयोग इस प्रश्न पर विचार कर रहा हैं कि भारतीय भाषाओं में मॉडरेशन का काम न्याय के साथ कैसे किया जा सकता है।

अंग्रेजी के बारे में भारत सरकार ने अहिन्दी भाषियों को जो आश्वासन दिया था, उसे कानून का रूप देने वाला विधयेक संसद में दिसंबर 1967 में पेश हुआ। सन् 1965 ई॰ में विस्फोट मद्रास राज्य में हुआ था। सन् 1967 ई॰ के भाषा अधिनियम संशोधन विधेयक ने हिन्दी प्रान्तों में ज्वाला भड़का दी। इस विधेयक का सबसे महत्वपूर्ण प्रावधान यह था कि जब तक प्रत्येक राज्य की विधान सभाएं इस आशय का प्रस्ताव पास नहीं कर देती कि अंग्रेजी अब रोक दी जाये, तक तक केन्द्र सभी कामों के लिए हिन्दी के साथ-साथ अंग्रेजी का भी प्रयोग चलता रहेगा। इस धारा को लगभग सभी अहिन्दी भाषी सदस्य उचित समझते थे और यही धारा थी, जिसके विरूद्ध हिन्दी भाषी प्रान्तों ने विद्रोह कर दिया। हिन्दी प्रान्तों में हिन्दी को लेकर जो आक्रोश फैला, उसके परिणाम शुभ और अशुभ दोनों ही हुए। शुभ परिणाम यह कि अब हिन्दी भाषी राज्यों की जड़ता दूर होगी और सभी हिन्दी प्रान्त यदि हिन्दी में काम कर लेंगे, तभी केन्द्रीय सचिवालय भी हिन्दी में काम करने को विवश किया जा सकेगा। किन्तु अशुभ परिणाम यह कि अहिन्दी भाषी भारतीयों के बीच हिन्दी को लेकर पहले जो शंका थी, वह अब कुछ बढ़ गयी है।

गांधी जी का सपना ठीक उसी रूप में पूरा नहीं हुआ। जिस रूप में वे उसे पूरा करना चाहते थे। किन्तु उनका स्वप्न पूरा होगा, इसके लक्षण बहुत स्पष्ट है। गांधी जी ने हिन्दी के बाद हिन्दुस्तानी भाषा चाही थी-जो भाषा आज राष्ट्रभाषा के रूप में फैल रही है, वह हिन्दुस्तानी के करीब है। गांधी जी शासन के क्षेत्र में अंग्रेजी को हटाना चाहते थे। किन्तु, उसकी कल्पना थी कि अंग्रेजी थी कि अंग्रेजी हटने से जो जगह होगी, उसका अधिकांश क्षेत्रीय भाषाओं को मिलेगा, हिन्दी केवल उन्ही स्थानों पर रहेगी, जो राष्ट्रीय वृत के भीतर पड़ते हैं।

यही हिन्दी की गाड़ी दलदल में फंस गयी। हालांकि विश्व मानस पर स्पष्ट रूप से यह अंकित है कि भारत की राष्ट्रभाषा अथवा राजभाषा हिन्दी है। वह हिन्दी जिसके बोलने और समझने वाले लगभग 70% की जनसंख्या है तथा वह हिन्दी जिसे दुनिया की लगभग 50 देशों में किसी न किसी रूप में भारतीय मूल के लोग व्यवहार में लाते हैं। वह हिन्दी जिसकी 136 विश्वविद्यालयों में पढ़ाई होती है तथा वह हिन्दी जिसमें सरकारी आदेशानुसार द्विभाषिक रूप में कार्य करना आवश्यक है। व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर मैं यह बता दूं कि लाख अवरोधों के बावजूद हिन्दी भाषा ने अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है। हिन्दी की ग्राह्यता, सामासिक सौंदर्य, साहित्य तथा व्यवहार का लचीलापन, उसकी उदारता की प्रतीक हैं। मैं यहां यह भी कह दूं कि हिन्दी भाषा के इस व्यवहारिक विकास और समृद्धि के पीछे अहिन्दी भाषियों का बहुत बड़ा योगदान है।

निश्चय ही हिन्दी की गाड़ी काफी आगे बढ़ी है, भले ही मंजिल या लक्ष्य तक न पहुंची हो। किन्हीं कारणों के यदि कुछ परिवेशों को छोड़कर देखें तो देश के किसी कोने में हिन्दी का विरोध नहीं है। तमिलनाडु में जहां एक ओर कुछ विरोध प्रदर्शन है, वहीं दूसरी ओर हिन्दी के प्रचार-प्रसार-शिक्षण में संख्या के अनुसार कोई कमी नहीं है। इसका मुख्य कारण यह है कि एक ओर जहां हिन्दी आज रोजी-रोटी से जुड़ी है, वहीं दूसरी ओर देश के किसी कोने में सामान्य जन के लिए हिन्दी के सिवा संपर्क को कोई दूसरी भाषा नहीं है।

संविधान की 8 वीं अनुसूची में देश की अठारह भाषाएं शामिल हैं- असमियां, बंगाल, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़, कश्मीरी, मलयालम, मराठी, उड़िया, पंजाबी, संस्कृत, सिन्धी, तमिल, तेलगु, उर्दू, कोंकणी, मणिपुरी, और नेपाली। इनमें अंतिम तीन कोंकणी, नेपाली और मणिपुरी 1992 में शामिल हो गई। हिन्दी का इसमें से किसी के साथ न कोई राग-द्वेष है और न ही प्रतिस्पर्धा। हमें बराबर भारतीय भाषाओं और हिन्दी की चर्चा में गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के निम्न विचार याद रखने की जरूरत है।" आधुनिक भारत की संस्कृति एक विकसित शतदल कमल के समान है, जिसका एक-एक दल एक-एक प्रांतीय भाषा और उसकी साहित्य संस्कृति है। किसी एक को मिटा देने से उस कमल की शोभा ही नष्ट हो जायेगी। हम चाहतें हैं कि भारत की सब प्रांतीय बोलियां जिनमें सुंदर साहित्य सृष्टि हुई है, अपने-अपने घर में (प्रान्त में) रानी बन कर रहें, प्रान्त के जनगण की हार्दिक चिंता की प्रकाश-भूमि-स्वरूप कविता की भाषा होकर रहे और आधुनिक भाषाओं के हार की मध्यमणि हिन्दी भारत-भारती होकर विराजती है।"

मेरे विचार में प्रान्तीय भाषाओं के पुनरूज्जीवन से राष्ट्रभाषा हिन्दी की कुछ क्षति नहीं होगी, उसका उत्कर्ष ही होगा।

इस संबंध में दो बातें और ध्यान देने की हैं एक यह है कि अधिकतर भारतीय भाषाओं का श्रोत संस्कृत है जिसकी सबसे बड़ी बेटी हिन्दी ही कही जाएगी और दूसरी बात यह कि अष्टम सूची में शामिल जिन 18 भारतीय भाषाओं की चर्चा ऊपर की गई उनमें संस्कृत, मराठी, सिंधी, कोंकणी और नेपाली की लिपि भी देवनगरी है, इसलिए भी हिन्दी का पारिवारिक संपर्क-सूत्र का दायरा बड़ा है। यहां मैं "इंडियन ऑयल कॉरपोरेशन लि॰" के एक प्रकाशन से "हिन्दी का विकास" संबंधी व्यक्त कुछ विचारों को यहां भाषा तथा लिपि के संबंध में साभार उद्धृत कर रहा

हूं,- "भाषा किसी देश या समाज में विचारों की अभिव्यक्ति तथा संचार का माध्यम होती है। प्रत्येक देश में भाषाओ का विकास शनैःशनैः हुआ है और उस विकास के पीछे एक इतिहास रहा है।

प्राचीन काल में हमारे देश में संस्कृत का एक संपर्क भाषा के रूप में इस्तेमाल किया जाता था। संस्कृत भी समाज के एक शिक्षित वर्ग की भाषा थी, किन्तु यह भारत की सही रूप से जनभाषा नहीं बन सकी। संस्कृत से हमारे देश में पाली, पाली से प्राकृत, प्राकृत से अपभ्रंश और अपभ्रंश से आधुनिक भारतीत भाषाओं का विकास हुआ माना जाता है।

हिन्दी शब्द सिन्धु-सन्धु—हिन्दी से बना है। सिन्धु प्राचीन भारत की एक प्रमुख नदीं का नाम है। फारसी में "सिन्धु" का उच्चारण हिन्दु करते थे। सिन्धु (हिन्दु) नदी का देश हिन्द या हिन्दुस्तान कहा गया। हिन्द देश के निवासी हिन्दू कहलाए। आजकल हिन्द देश की भाषा के रूप में ही हिन्दी का प्रयोग होने लगा है।

मुगलों के शासनकाल में फारसी दरबारी भाषा थी। इस कारण उच्च वर्ग में फारसी का प्रचार हुआ। उच्च वर्ग में उर्दू का प्रयोग होने तथा कुछ हिन्दी प्रदेशों में कचहरियों में उर्दू का इस्तेमाल होने के कारण उर्दू का काफी प्रचार हुआ।

भारत में 11वीं सदी से हिन्दी का विकास हुआ। मुग़लों के शासनकाल में हिन्दी का विकास महान कवियों की साधना तथा उसकी सूफी विचारधारा के कारण संभव हो सका। आजादी की लड़ाई के समय भारत मां के अमर सपूतों ने भी हिन्दी को प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न किया। आजादी की लड़ाई के समय ही वर्ष 1855 में अंग्रेज सेक्रेटरी जनरल लार्ड मैकाले ने भारत में तीन विश्वविद्यालयों की स्थापना की-मद्रास, जाधवपुर, और बम्बई। इन विश्वविद्यालयों की स्थापना से भारत में विधिवत अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा की आरंभ हुआ।

देश के स्वतंत्र होने के बाद शासन का ध्यान इस समस्या की ओर गया कि हमारा देश छोटे-छोटे टुकड़ों में बंटा है। देश के शासन का कामकाज सही ढंग से चलाने तथा जन-भाषा को ध्यान में रखते हुए सरकार ने राज्यों की पुनर्रचना का निर्णय लिया तथा भारत की संविधान सभा ने 14 सितम्बर, 1949 को हिन्दी को देवनागरी लिपि में संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया। अंक के लिए भारतीय अंकों का अंतर्राष्ट्रीय रूप प्रस्तुत करने का निर्णय लिया।

संविधान सभा ने 14 सितंबर, 1949 को हिन्दी को राजभाषा के रूप में अपनाया था। इस कारण इस दिन को पूरे देश में हिन्दी दिवस के रूप में मनाया जाता है। लोगों को हिन्दी में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए तथा हिन्दी को लोकप्रिय बनाने के लिए सभी सरकारी कार्यालयों, उपक्रमों तथा संस्थानों में 14 सितंबर, बड़े उत्साह से हिन्दी दिवस के रूप में मनाया जाता है। इस दिन हम अपने कार्यालयों में विभिन्न प्रतियोगिताएं तथा कार्यक्रम आयोजित करते हैं।

संसार में हिन्दी बोलने वाले लोगों की संख्या, चीनी भाषा और अंग्रेजी भाषा बोलने वालों की संख्या के बाद तीसरे नंबर पर आती है। इस समय पूरे संसार में हिन्दी समझने वाले व्यक्तियों की संख्या एक अरब है।

विदेशों में मारिशस, त्रिनिदाद, जावा, सुमात्रा, बोर्नियो, श्रीलंका, फीजी, नेपाल, बर्मा, सिंगापुर, दक्षिणी अफ्रीका, बंग्लादेश, पाकिस्तान में भारी संख्या में हिन्दी जानने वाले लोग है। विश्व के अन्य भागों— इंग्लैंड, आस्ट्रेलिया, अमेरिका, फ्रांस जैसे देशों में भी हिन्दी जानने वाले लोग बड़ी संख्या में रह रहे हैं।

भारत में 50 करोड़ लोग हिंदी बोलते, लिखते और पढ़ते हैं तथा लगभग 80 करोड़ लोग हिंदी समझते हैं। लगभग 70 करोड़ लोग हिंदी बोलते और समझते हैं।

हिन्दी की अनेक बोलियों में से देवनागरी में लिखी गई मानक खड़ी बोली को राजभाषा के रूप में मान्यता दी गई है। यह दिल्ली और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के आसपास के क्षेत्रों में बोली जाती है। भाषा तथा साहित्य की दृष्टि से इसमें खड़ी बोली ही नहीं, बल्कि हिन्दी भाषा की सभी बोलियां जैसे, ब्रजभाषा, अवधी, बुंदेली, राजस्थानी, हरियाणवी, गढ़वाली, कुमाउंनी, कनौजी, मैथिली और भोजपुरी आदि शामिल हैं।

हिन्दी किसी प्रदेश की जनभाषा नहीं। हर एक प्रदेश में हिन्दी की अलग-अलग बोलियों का प्रयोग होता है। इस समय हिन्दी की लगभग 19 बोलियां है। हिन्दी भाषी प्रदेशों में हिन्दी केवल शिक्षा का माध्यम है तथा 6 प्रदेशों की राज्य सरकारों के कामकाज हिन्दी में होती हैं। वहां की जनता अपने घरों में स्थानीय बोलियों का प्रयोग करती है। इसलिए यह कहना गलत होगा कि हिन्दी उत्तरी भारत की भाषा है और अहिन्दी भाषियों पर थोपी जा रही है।

हिन्दी भाषा का विकास संस्कृत से हुआ है। संस्कृत भाषा की लिपि देवनागरी है। इसके अलावा पाली, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी, नेपाली मराठी, नेपाली तथा कोंकणी में इसका प्रायोग होता है। मणिपुरी भाषा-भाषा मणिपुरी भाषा के लिए देवनागरी लिपि के प्रयोग पर विचार कर रहे हैं। उर्दू के बहुत से साहित्यकारों के साहित्य हिन्दी में आ चुके हैं। भारत में इस समय देवनागरी लिपि जानने वालों की संख्या 50% से अधिक है। देवनागरी लिपि सबसे अधिक वैज्ञानिक लिपि है। यह लिपि अन्य भारतीय लिपियों की तुलना में सबसे सरल, सहज तथा सुगम है।

भारत सरकार ने जनता की रूचि तथा उसकी भावना को ध्यान में रखते हुए आठवीं अनुसूची में अब तक निम्नलिखित 18 भाषाओं को मान्यता प्रदान की है:

1. असमी, 2. बंगला, 3. गुजराती, 4. हिन्दी, 5. कन्नड़, 6. कश्मीरी, 7. मलयालम, 8. मराठी, 9. उड़िसा, 10. पंजाबी, 11. संस्कृत, 12. सिंधी, 13. तमिल, 14. तेलगु, 15. उर्दू, 16. कोंकणी, 17. मणिपुरी, 18. नेपाली

वर्ष 1961 और 1971 की जनगणना के समय भारत की जनता ने 1652 भाषाओं को मातृभाषा घोषित किया था। इनमें से 18 भाषाएं इस समय संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल है। वर्ष 1991 की जनगणना के आंकड़े अभी तक प्रकाशित नहीं किए गए हैं इसलिए भाषा के विश्लेषण के लिए हम वर्ष 1981 का संदर्भ देना चाहेंगे।

वर्ष 1981 की जनगणना के अनुसार हमारे देश की आबादी 68.5 करोड़ थी। इनमें 36.2% लोग लिखना पढ़ना जानते थे। इनमें से हिन्दी जानने वाले व्यक्तियोंकी संख्या लगभग 30% थी। कुल लगभग 3% लोग अंग्रेजी जानते थे। इससे भी कम लोग ऐसे थे जो अंग्रेजी पढ़ लिख तथा बोल सकते थे। इससे भी कम लोग ऐसे थे जो अंग्रेजी पढ़ लिख तथा

बोल सकते थे। सरकार की कोशिश है कि यदि राजभाषा में सरकारी कामकाज शुरु होता है तो शासन में लगभग 30% लोग भाग ले सकेंगे जो आज 3% से दस गुना अधिक है।

भारत में इस समय मुख्य रूप से भाषाओं के दो वर्ग हैं पहले वर्ग में इंडो आर्य कुल की भाषाएं आती हैं। इनमें दक्षिणी भारत की 4 भाषाओं-तमिल, तेलगु, कन्नड़ और मलयालम को छोड़कर सभी मुख्य भाषाएं शामिल हैं। इस वर्ग में हमारे देश के लगभग 74% भाषा-भाषी शामिल हैं। दूसरे वर्ग में द्रविण कुल की भाषाएं हैं इस वर्ग में मुख्य रूप से 4 भाषाएं हैं:- तमिल, तेलगु कन्नड़ और मलयांलम। द्रविण कुल के भाषा-भाषियों की संख्या 24% है।

इंडो आर्य कुल की भाषाओं का उदभव संस्कृत से हुआ है। इस कारण इंडो आर्य कुल के 64% भाषा-भाषी काफी हद तक हिन्दी समझते हैं। द्रविण कुल के 10% लोग हिन्दी जानते हैं तो मोटे तौर पर हम कह सकते हैं कि भारत में लगभग तीन चौथाई लोग हिन्दी अच्छी तरह समझते हैं।

जिस हिन्दी की चचार मैं यहां करने जा रहा हूं उसकी उद्गाता राष्ट्रपिता महात्मा गांधी हैं। जिन्होंने राष्ट्रीय जागरण के साथ हिन्दी को पिरोया तथा इस बात की आवश्यकता जतलाई कि अपनी भाषा के बिना कोई भी राष्ट्र पूर्णतया स्वाधीन नहीं कहा जा सकता। गांधी जी का यह वाक्य हर जगह चर्चित है—"अपनी भाषा के बिना कोई भी राष्ट्र गूंगा" तथा "दुनिया से कह दो गांधी अंग्रजी भूल गया"।

गांधी जी और राष्ट्रभाषा या हिन्दी को क्रमिक रूप से समझने के लिए उनके और साथ हमें कुछ और प्रसंगों में झांकना होगा।

1918 में गांधी जी ने इंदौर हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के आठवें अधिवेशन में अपने भाषण में कहा था: "भाषा माता के समान है। माता पर हमारा जो प्रेम होना चाहिए, वह लोगों में नहीं है, शिक्षित वर्ग अंग्रेजी के मोह में फंस गया है और अपनी राष्ट्रीय मातृभाषा से उसे असंतोष हो गया है। पहली माता से (अर्थात अंग्रेजी में) जो दूध मिलता है उसमें जहर और पानी मिला हुआ है और दूसरी माता से (अर्थात् हिन्दी से) शुद्ध दूध मिलता है बिना इस शुद्ध दूध के हमारी उन्नति होनी असंभव है। पर जो अंधा है, वह देख नहीं सकता और गुलाम नहीं जानता कि अपनी बेड़ियां किस तरह तोड़े। पचास वर्षों से हम अंग्रेजी के मोह में फंसे हैं। हमारी प्रजा अज्ञान में डूबी रही है हमें ऐसा उद्योग करना चाहिए कि एक वर्ष में राजकीय सभाओं में कांग्रेस में प्रांतीय सभाओं आदि में अंग्रेजी का व्यवहार बिल्कुल त्याग दें। अंग्रेजी सर्वव्यापक भाषा हो पर यदि अंग्रेजी सर्वव्यापक न रहेंगे। तो अंग्रेजी भी सर्वव्यापक न रहेगी। अब हमें अपनी मातृभाषा को नष्ट करके उनका खून नहीं करना चाहिए। आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा बनाने का गौरव प्रदान करें।

16 जून, 1920 के "यंग इंडिया" में गांधी जी ने दक्षिणवालों के संबंध में लिखा था "आज अंग्रजों पर प्रभुत्व प्राप्त कने के लिए वे जितनी मेहनत करते हैं, उसका आठवां हिस्सा भी हिन्दी सीखने में करें, तो बाकी हिन्दुस्तानी के जो दरवाजे आज उनके लिए बंद हैं, वे खुल जाएं और वे इस तरह हमारे साथ एक हो जाएं, जैसे पहले कभी नहीं थे। कोई भी द्रविड़ यह न सोचे कि हिन्दी सीखना जरा भी मुश्कल है। अगर रोज के मनोरंजन में से थोड़ा समय निकाला जाये, तो साधारण आदमी एक साल में हिन्दी सीख सकता है। मैं अपने अनुभव से कह सकता हूं कि द्रविड़ बालक अद्भुद सरलता से हिन्दी सीख लेता है"।

गांधी जी ने आजादी के एक वर्ष पूर्व 25 अगस्त, 1946 के "हरिजन" में लिखा है:— "मेरी मातृभाषा में कितनी ही खामियां क्यों न हों। मैं इससे उसी तरह चिपटा रहूंगा जिस तरह बच्चा अपनी मां की छाती से। वही मुझे जीवन दायी दूध दे सकती है। अगर अंग्रजी उस जगह को हड़पना चाहती है जिसकी वह हकदार नहीं है, तो मैं उससे सख्त नफरत करूंगा। वह कुछ लोगों के सीखने की चीज हो सकती है, लाखो, करोड़ों की नहीं।

महात्मा गांधी के प्रयत्नसे 1935 में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने हिन्दी भाषा को स्वीकार करते हुए एक प्रस्ताव पारित किया था-"कांग्रेस की यह सभा प्रस्ताव पास करती है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी और वर्किंग कमेटी की कार्रवाई आम तौर पर हिन्दुस्तानी में चलेगी। अगर कोई वक्ता हिन्दुस्तानी न जानता हो या दूसरी आवश्यकता पड़ने पर, अंग्रेजी भाषा इस्तेमाल की जा सकती है।"

इस प्रस्ताव पर गांधी जी ने अपने विचार व्यक्त किए-"हिन्दुस्तानी के उपयोग के बारे में जो प्रस्ताव हुआ है, वह लोकमत को बहुत आगे जाने वाला है। हमें अब तक अपना काम—काज ज्यादातर अंग्रेजी में करना पड़ता है। वह निस्संदेह प्रतिनिधियों और कांग्रेस की महासमिति के ज्यादातर सदस्यों पर होने वाला एक अत्याचार ही है। इस बारे में किसी न किसी दिन हमें अखिरी फैसला करना होगा। जब ऐसा होगा, तब कुछ वक्त के लिए थोड़ी दिक्कतें पैदा होंगी। थोड़ा असंतोष होगा। लेकिन राष्ट्र के विकास के लिए यह अच्छा ही होगा कि जितनी जल्दी हो सके हम अपना काम हिन्दुस्तानी में करने लगें।"

गांधी जी के मतानुसार राष्ट्रभाषा का पद ग्रहण करने के लिए भाषा में निम्नांकित गुणों का होना अनिवार्य है-

(1) वह भाषा सरकारी नौकरी के लिए आसान हो (2) उस भाषा में भारत के धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक कामकाज हो सकना संभव हो सके। (3) उस भाषा को देश के ज्यादातर लोग बोलते हों (4) वह भाषा राष्ट्र के लिए आसान हो। (5) उस भाषा का विचार करते हुए क्षणिक या कुछ समय तक रहने वाली स्थिति पर जोर न दिया जाय।

आजादी के बाद हिन्दी ने जब से राजभाषा का पद-ग्रहण किया तब से वह विवाद, ईष्या और आलोचना की भी शिकार हुई। हालांकि राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रीय जागरण और संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी की अनिवार्यता या आवश्यकता जिन लोगों ने महसूस की तथा हर संभव योग दिया उनमें अहिन्दी भाषियों की संख्या हिन्दी भाषियों से अधिक है, जैसे स्वामी दयानंद जी और गांधी जी—गुजराती, राजा राम मोहन राय तथा केशवचंद सेन-बंगाली, लाला लाजपत राय—पंजाबी, गोप बंधु चौधरी—असमिया लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक—मराठी रंगनाथ रामचंद्र दिवाकर-कन्नड़ कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी तथा काका कालेलकर-गुजराती, हरेकृष्णमेल हताव-उड़िसा तथा गोपीनाथ बारदोलाई-असमियां थे।

जस्टिस शारदाचरण मित्र और भूदेव मुखर्जी ने बंगाली होकर भी देवनागरी का प्रचार किया और नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने हिन्दी के व्यवहारिक पक्ष की ओर संकेत करते हुए साफ कहा— "यह काम बड़ा दूरदर्शिता पूर्ण है और इसका परिणाम बहुत दूर आगे चलकर मिलेगा।

प्रांतीय ईर्ष्या-द्वेष को दूर करने में जितनी सहायता इस हिन्दी - प्रचार से मिलेगी उतनी दूसरी किसी चीज से नहीं मिल सकती। अपनी प्रांतीय भाषाओं की भरपूर उन्नति कीजिए, उसमें कोई बाधा नहीं डालना चाहता और न हम किसी की बाधा को सहन ही कर सकते हैं। पर सारे प्रान्तों की सार्वजनिक भाषा का पद हिन्दी या हिन्दुस्तानी को ही मिले। नेहरु- रिपोर्ट में भी इसी की सिफारिश की गई है। यदि हम लोगों ने तन-मन-धन से प्रत्यत्न किया, तो वह दिन दूर नहीं है, जब भारत स्वाधीन होगा और उसकी राष्ट्रभाषा होगी हिन्दी।"

राजेन्द्र बाबू ने अपनी आत्मकथा में लिखा है—"आंध्र में मैं सबसे पीछे गया। वहां एक नयी बात यह हुई कि मेरे पूरे सफर में हिन्दी प्रचार सभा के श्री सत्यनारायण साथ रहे। वह आंध्र के रहने वाले हैं, पर हिन्दी का ज्ञान उनका इतना अच्छा है कि वह भाषण देने लगें, तो किसी हिन्दी-भाषी को यह संदेह न होगा कि वह हिन्दी - भाषी नहीं हैं.....इस यात्रा से मुझे इस बात का पता चला कि हिन्दी प्रचार सभा ने कितने महत्व का काम किया है और वह काम राष्ट्र निर्माण में कितना सहायक हुआ है तथा आगे कितना सहायक होगा।"

स्वयं सत्यनारायण जी ने कालीकट विद्वत समाज में एक बार कहा था- "सभ्य समाज में जूते और टोपी दोनों की प्रतिष्ठा देखी जाती है। जूतों का दाम साधारणतया टोपी से ज्यादा ही होता है। दैनिक जीवन में जूतों की अनिवार्यता भी सर्वत्र देखी जाती है। पर इससे टोपी की उपयोगिता तथा मानमर्यादा में कोई फर्क नहीं पड़ता है। कोई भूलकर भी सिर पर जूता नहीं रखता और न पैरों में टोपी पहनता है। जो ऐसा करता है, वह पागल माना जाता है। हिन्दी हमारी गांधी टोपी के समान है, तो अंग्रेजी जूता है।"

प्रायं इन दिनों हर जगह राजभाषा के औचित्य पर चर्चा होती है, प्रश्न उठाए जाते हैं तथा उत्तर भी प्रस्तुत किए जाते हैं। यहां मैं स्थिति स्पष्ट करने के लिए राजभाषा अधिनियम 1963 तथा राजभाषा नियम 1976 का हवाला देना चाहता हूं। 1963 में राजभाषा अधिनियम पारित होने के बाद भी 1976 तक नियमों का न बनना राजभाषा के लिए भटकन या दिग्भ्रमण का काल रहा है। 1976 में इस दिशा में तीन महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए—

क—राजभाषा—नियम का बनना।

ख— संसदीय राजभाषा समिति का गठन।

ग—गृह मंत्रालय के अंतर्गत अलग से राजभाषा विभाग की शुरूआत।

1976 से इन तीनों माध्यमों से हिन्दी का कार्य काफी बढ़ा है। राजभाषा के कार्यान्वयन के लिए हर मंत्रालय, विभाग, उपक्रम संस्थान में राजभाषा प्रबंधक, निदेशक, अधिकारी, अनुवादक, आशुलिपिक, टंकक आदि की फौज खड़ी हो गई, तथा हिन्दी सलाहकार समितियों का गठन हुआ। अधिकांश हिन्दी अधिकारी-पदाधिकारी हिन्दी के काम को बढ़ा रहे हैं तथा अनेक उलझा भी रहे हैं। उलझा रहे हैं इसलिए कह रहा हूं कि हिन्दी का रूप अनुवाद का होता जा रहा है। आज भी अधिकांश महत्वपूर्ण कार्य अंग्रेजी में ही हो रहे हैं और उन्हें हिन्दी में संवैधानिक तौर पर प्रस्तुत करने के लिए अनुवादकों या हिन्दी अधिकारियों के सिर पर मढ़ दिया जाता है। नतीजा है कि एक और भाषा का सौंदर्य नष्ट होता जा रहा है और दूसरी ओर इसका स्वरूप बोझिल तथा कृत्रिम होता जा रहा है। जब कि राजभाषा नियम यह कहता है—"केन्द्रीय सरकार के क्षेत्र "क" तथा "ख" में स्थित कार्यालय से क्षेत्र "क" में किसी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के कार्यालय को या ऐसे राज्य या संघ राज्य क्षेत्र में केन्द्रीय सरकार के कार्यालय को छोड़कर किसी अन्य कार्यालय या व्यक्ति को, पत्र आदि असाधारण दशा को छोड़कर, हिन्दी में भेजे जाएं। यदि उनमें से किसी को कोई पत्र आदि अंग्रेजी में भेजा जाता है तो उसके साथ उसका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाए।

क्षेत्र "ग" में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालय के क्षेत्र "क" या "ख" में स्थित किसी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के कार्यालय को, या केन्द्रीय कार्यालय के क्षेत्र को छोड़कर ऐसे राज्य में स्थित किसी अन्य कार्यालय या व्यक्ति को पत्र आदि हिन्दी या अंग्रेजी में भेजे जा सकते हैं। राजभाषा विभाग द्वारा प्रति वर्ष वार्षिक कार्यक्रम निर्धारित किया जाता है कि पत्राचार आदि में हिन्दी का प्रयोग किस अनुपात से किया जाए।

इस सबंध में भारत सरकार के गृह मंत्रालय ने दिनांक 17 मार्च, 1976 को ही ज्ञापन सं॰ 11/13834/23/75-रा॰भा॰(ग) के अनुसार एक परिपत्र जारी करके केन्द्रीय सरकार के सभी कार्यालयों को जो निर्देश दिए हैं, वे बहुत महत्वपूर्ण हैं:

"केन्द्रीय सरकारी कामकाज में इस्तेमाल की जाने वाली हिन्दी के स्वरूप के बारे में अपनी नीति कई बार स्पष्ट कर चुकी है। इसके बावजूद इस संबंध में भ्रम पूरी तरह दूर नहीं हो पाया है और लोगों के मन में यह विचार है कि सरकारी हिन्दी कोई अलग किस्म की हिन्दी होती है। इसी कारण से अपने कामकाज में हिन्दी का इस्तेमाल की जाने वाली हिन्दी के स्वरूप के बारे में अपनी नीति कई बार स्पष्ट कर चुकी है। इसके बावजूद इस संबंध में भ्रम पूरी तरह दूर नहीं हो पाया है और लोगों के मन में यह विचार है कि सरकारी हिन्दी कोई अलग किस्म की हिन्दी होती है। इसी कारण वे अपनें कामकाज में हिन्दी का इस्तेमाल करने में हिचकिचाते हैं।

जैसा कि उसके पहले भी कई बार कहा जा चुका है, सरकारी कामकाज में इस्तेमाल की जाने वाली हिन्दी सरल और सुबोध होनी चाहिए, जटिल और बोझिल नहीं। इस सबंध में नीचे लिखे मुद्दों को ध्यान में रखना उपयोगी होगा:

1. क्या नोट लिखने में और क्या पत्र लिखने में, सरल हिन्दी का ही प्रयोग किया जाना चाहिए ताकि उसे सभी आसानी से समझ सकें। अपनी बात दूसरों तक पहुंचाने के लिए सिर्फ इनता ही काफी नहीं है कि लिखने वाला खुद समझ सके कि उसने क्या लिखा है, जरूरी तो यह है कि पढ़ने वाले की भी समझ में आ जाए कि आखिर लिखने वाला क्या चाहता है।
2. सरकारी काम में आमफहम शब्दों का ही ज्यादा—से—ज्यादा उपयोग किया जाना चाहिए और लिखते वक्त दूसरी भाषाओं के प्रचलित शब्दों का उपयोग करने में जरा भी हिचक नहीं होनी चाहिए!
3. जहां कहीं भी यह लगे कि पढ़ने वाले को हिन्दी में लिखे किसी तकनीकी शब्द या पदनाम (डेजिग्नेशन) को समझने में कठिनाई हो सकती है, वहां उस शब्द या पदनाम के सामने कोष्ठक में अंग्रेजी रूपान्तर भी लिख देना उपयोगी होगा।

शेष पृष्ठ 24 पर

भाषा का सवाल संविधान के परिप्रेक्ष्य में

मस्त राम कपूर*

स्वाधीन भारत के संविधान में हिंदी को भारत संघ की राजभाषा बनाने का निर्णय हमारे संविधान निर्माताओं तथा नेताओं ने किसी जल्दबाजी भावुकता में बह कर नहीं लिया था। यह एक सुचिंतित निर्णय था और इसके पीछे स्वार्थ की भावना का लेश भी नहीं था। उस समय के हमारे नेता कुर्सी या वोटों के स्वार्थ से ऊपर थे। उन्होंने तपस्या का जीवन बिताया था और उनके निर्णय के पीछे स्वतंत्रता आंदोलन का अनुभव तथा राष्ट्र की भलाई की ही कामना थी।

हिंदी को संघ की राजभाषा के रूप में इसलिए अपनाया गया कि वह एक जनभाषा थी और स्वतंत्र जन-मानस का निर्माण विदेशी भाषा के माध्यम से नहीं हो सकता। दुर्भाग्य से आज राजभाषा के सवाल को गलत दृष्टिकोण से देखा जा रहा है और इसे सिर्फ सरकारी नौकरियों के बंटवारे का प्रश्न बना दिया गया है। यह नहीं देखा जा रहा कि विदेशी भाषा की गुलामी के कारण हम अभी तक मानसिक गुलामी से मुक्त नहीं हो पाए हैं और हम उस महान जन-शक्ति का उपयोग नहीं कर पाए हैं जो स्वतंत्रता के साथ प्रस्फुटित हुई थी। हम शिक्षा, आर्थिक विकास, सामाजिक संस्कृतिक उत्कर्ष आदि की उन सीमाओं को नहीं छू पाए जिनकी उम्मीद स्वतंत्रता के उदय के साथ की गई थी।

संविधान के विभिन्न (उपबंधों) अनुच्छेद 343, 344, 345, 346, 347, 349, 350, 350क. 350ख, 351, 120 (1) और (2) पर सरसरी नजर डालने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारे संविधान-निर्माताओं के मन में कोई गांठ नहीं थी। अनुच्छेद 343 में कहा गया कि संघ की राजभाषा हिंदी होगी, लेकिन पंद्रह साल तक अंग्रेजी पहले की तरह चलती रहेगी। इस बीच राष्ट्रपति के आदेश से अंग्रेजी के साथ-साथ हिंदी का कुछ विषयों में उपयोग होता रहेगा। पंद्रह साल बाद संसद चाहेगी तो अंग्रेजी को निर्दिष्ट विषयों के लिए जारी रखने का कानून बना सकती है। अनुच्छेद 344 मे कहा गया कि राष्ट्रपति संविधान के लागू होने के पांच साल बाद एक आयोग गठित करेंगे जो पता लगाएगा कि हिंदी का प्रयोग सरकारी कामकाज में कैसे बढ़ाया जा सकता है और अंग्रेजी का प्रयोग कहां कितना कम किया जा सकता है। इसी अनुच्छेद के अन्तर्गत एक संसदीय समिति बनाने का उपबंध भी किया गया जिस का काम निश्चित किया गया कि वह उपर्युक्त आयोग की सिफारिशों पर विचार करके राष्ट्रपति को अपनी रिपोर्ट देगी ताकि राष्ट्रपति उन सिफारिशों को लागू करने के लिए आदेश जारी कर सकें। अनुच्छेद 348 संसद, विधान सभाओं तथा अदालतों में हिंदी के प्रयोग के संबंध में है। इसमें कहा गया है कि 15 साल तक उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों की कार्यवाही, संसद तथा विधानसभाओं के विधेयकों, अधिनियमों, नियमों-विनियमों की भाषा अंग्रेजी रहेगी किंतु राष्ट्रपति की सहमति से राज्यों के राज्यपाल उच्च न्यायालय की कार्यवाही को हिंदी या राज्य की स्वीकृत भाषा में चलाने की अनुमति दे सकते हैं। किंतु यह प्रयोग उच्च न्यायालयों के निर्णयों और आदेशों में नहीं किया जा सकेगा। पंद्रह साल तक इस स्थिति में परिवर्तन करने के लिए कोई विधेयक संसद में तभी प्रस्तुत किया जाएगा जब राष्ट्रपति भाषा आयोग और संसदीय समिति की सिफारशों पर विचार करने के बाद इस पर सहमत होंगे।

संसद की कार्रवाई की भाषा के बारे में अनुच्छेद 120 में कहा गया है कि कार्रवाई हिंदी या अंग्रेजी में चलेगी किंत अध्यक्ष किसी भी सदस्य को अपनी मातृभाषा में बोलने की अनुमति दे सकता है।

जो व्यवस्था हिंदी के लिए की गई लगभग वैसी ही व्यवस्था प्रादेशिक भाषाओं के लिए भी अनुच्छेद 345 और 346 में की गई। इनमें कहा गया कि राज्य विधानसभा राज्य की किसी एक या एक से अधिक भाषा को या हिंदी को सरकारी काम-काज के लिए अपना सकती है। किंतु पहले 15 साल तक अंग्रेजी का प्रयोग पूर्ववत् चलता रहेगा। राज्यों के बीच पत्र-व्यवहार संघ की भाषा में चलेगा किंतु दो राज्य यदि आपस का पत्र व्यवहार हिंदी में करना चाहें तो कर सकते हैं।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि हमारे संविधान-निर्माता अंग्रेजी के स्थान पर केन्द्र में हिंदी को और प्रदेशों में प्रादेशिक भाषाओं को लाना चाहते थे। पंद्रह साल तक वे अंग्रेजी को इसलिह बनाए रखना चाहते थे ताकि काम ठप्प न हो जाए। इस बीच हिंदी और प्रदेशिक भाषाओं के प्रयोग को बढ़ाना चाहते थे। पंद्रह साल बाद अंग्रेजी को पूर्ण रूप से हटाने की व्यवस्था इसलिए नहीं की गई कि संभव है हिंदी तथा प्रदेशिक भाषाओं के क्रमिक प्रयोग में कुछ और समय आवश्यक हो जाए। किंतु उनकी यह मंशा स्पष्ट थी कि अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी और प्रादेशिक भाषाओं को अंततः लाना है। एक बात जो इन उपबंधों में स्पष्ट थी, यह थी कि यह समस्या अंग्रेजी बनाम हिंदी की नहीं, अंग्रेजी बनाम भारतीय भाषाओं की है। संविधान के लागू होने के लगभग 45 वर्ष बाद जब हम अपनी उपलब्धियों पर विचार करते हैं तो हमें काफी निराशा होती है ऐसा नहीं कि संविधान की व्यवस्थाओं के अनुसार काम नहीं हुआ। किंतु संविधान निर्माताओं ने और जनता ने भी, जो उम्मीद की थी, वह पूरी नहीं हुई। इसके क्या कारण रहे इस बात पर हमें अपने पूर्वाग्रहों से मुक्त हो कर ठंडे दिमाग से विचार करना चाहिए।

जैसा कि संविधान में कहा गया था, राष्ट्रपति ने 1955 में भाषा आयोग बिठाया। उसकी रिपोर्ट पर संसदीय समिति ने विचार किया और फिर 25 अप्रैल, 1960 को राष्ट्रपति की ओर से राजभाषा के रूप में हिंदी के विकास के लिए कुछ कदम उठाए गए। इनमें सबसे महत्वपूर्ण कदम था शिक्षा मंत्रालय के अधीन शब्दावली आयोग तथा केंद्रीय हिंदी निदेशालय की स्थापना। इसी आदेश के अन्तर्गत गृह मंत्रालय में सरकारी कर्मचारियों को हिंदी में काम-काज का प्रशिक्षण देने के लिए हिंदी शिक्षण योजना शुरू की गई और हिंदी के टाइपपिस्ट तथा आशुलिपिक तैयार करने का

* 79 बी, पाकेट 3, मयूर विहार I, दिल्ली-110091.

काम भी गृह मंत्रालय को सौंपा गया। अहिंदी भाषी राज्यों के लिए हिंदी अध्यापक तैयार करने के उद्देश्य से आगरा में केंदीय हिंदी संस्थान बना और उसकी शाखाएं अन्यत्र भी स्थापित हुई। अहिंदी भाषी क्षेत्रों के लोगों को हिंदी सिखाने के लिए हिंदी निदेशालय में पत्राचार पाठ्यक्रम भी शुरू हुआ। प्रशासनिक साहित्य के अनुवाद केंद्रीय हिंदी निदेशालय से अलग करके गृह मंत्रालय के अधीन केंद्रीय अनुवाद ब्युरो बना। विधि साहित्य के अनुवाद के लिए विधि मंत्रालय के अधीन अलग व्यवस्था हुई। सभी मंत्रालयों तथा उनके विभागों, संबद्ध कार्यालयों, सरकारी तथा अर्धसरकारी प्रतिष्ठानों में हिंदी विभाग खोले गए और राजभाषा के प्रयोग के सारे काम की निगरानी-समीक्षा के लिए गृह मंत्रालय में पृथक राजभाषा विभाग बना।

इन तमाम संस्थाओं के माध्यम से गत वर्षों में हिंदी भाषा को राज-काज के विभिन्न उत्तरदायित्वों को वहन करने में सक्षम बनाया गया। लगभग समस्त प्रशासनिक साहित्य का अनुवाद, विभिन्न वैज्ञानिक और मानविकी विषयों के लगभग 5 लाख शब्दों का निर्माण, विश्व प्रसिद्ध मानक ग्रंथों का अनुवाद, लाखों कर्मचारियों का हिंदी प्रशिक्षण आदि कामों को वास्तव में भाषायी क्रांति कहा जा सकता है। एक जापानी विद्वान ने इन पंक्तियों के लेखक से एक बार शब्द-निर्माण के काम के संदर्भ में कहा था कि इस काल की सारी दुनिया में मिसाल नहीं मिलती। इन कामों को संविधान की कल्पना के अनुरूप काफी समय पहले पूरा कर लिया गया था किंतु राजभाषा के रूप में हिंदी अभी तक अंग्रेजी को विस्थापित नहीं कर पाई। ऐसा क्यों हुआ, यह प्रश्न आज प्रत्येक भारतवासी के मन को सालता है।

हमें यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि जब भी समाज में कोई बड़ा परिवर्तन होने लगता है, एक तरह की व्यवस्था के स्थान पर दूसरी तरह की व्यवस्था आने लगती है तो यथास्थिति और परिवर्तन की ताकतों के बीच जबर्दस्त द्वंद्व चलता है। उदाहरण के लिए संविधान के लागू होने के बाद हजारों साल के विषम भारतीय समाज का समतामूलक समाज बनाने का क्रम शुरू हुआ तो पुरानी व्यवस्था (वर्ण व्यवस्था) के समर्थकों और नई समतामूलक व्यवस्था के समर्थकों के
बीच टकराव होने लगे। ये टकराव कभी आरक्षण विरोधी आंदोलन में और कभी आरक्षणों की काट करने वाले मंदिर-मस्जिद आंदोलन में अपने भीषण तथा विकराल रूप में दिखाई दिए। इसे ऋत और सत्य गतिशीलता और जड़ता के प्राकृतिक नियमों के रूप में देखा जाना चाहिए। यही स्थिति भाषा के संबंध में भी है। यहां भी यथास्थिति और परिवर्तन की ताकतों के बीच द्वंद्व चला। यथास्थिति के समर्थक वे अंग्रेजी-परस्त लोग हैं जो नौकरशाही, समाचार-पत्रों तथा न्यायिक शैक्षिक संस्थाओं में अधिकार संपन्न रहे हैं तथा अब भी हैं। वे परिवर्तन को टालने के लिए कई तरह के हथकंडे अपनाते रहे हैं।

उदाहरण के लिए संविधान में, अंग्रेजी के 15 साल तक बने रहने की कल्पना की गई थी और 15 साल बाद अनुच्छेद 343 के अनुसार हिंदी का प्रयोग आमतौर पर होना था तथा अंग्रेजी को संसद द्वारा निर्दिष्ट विषयों तक सीमित किया जाना था। किंतु इन प्रावधानों को कुछ इस तरह लिया गया कि स्थिति उल्टी हो गई। अंग्रेजी का तो आम तौर पर प्रयोग होता रहा और हिंदी के लिए विषय निर्दिष्ट किए जाते रहे। संविधान का आशय स्पष्ट था कि अंग्रेजी के प्रयोग को उत्तरोत्तर घटाना है और हिंदी के तथा अन्य भारतीय भाषाओं के प्रयोग को उत्तरोत्तर बढ़ाना है। लेकिन अंग्रेजी का प्रयोग पहले की तरह ही चल रहा है बल्कि कुछ क्षेत्रों में तो बहुत बढ़ गया है। (जैसे प्राथमिक और पूर्व प्राथमिक शिक्षा में भी अंग्रेजी का बोलबाला हो गया है और हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं को विभिन्न परीक्षाओं के वैकल्पिक माध्यम के लिए भी पांच साल से सत्याग्रह चलाना पड़ रहा है। दिसंबर, 1967 में संसद में पारित एक विशेष प्रास्तव में कहा गया था कि अपवाद स्वरूप कुछ सेवाओं और पदों को छोड़कर शेष के लिए हिंदी या अंग्रेजी का अनिवार्य ज्ञान अपेक्षित होगा किंतु व्यवहार में अंग्रेजी का ज्ञान छोटे-बड़े सभी पदों के लिए अनिवार्य माना जाता रहा।

यथास्थिति और परिवर्तन की ताकतों का द्वंद्व बुद्धिजीवी वर्ग में तो बहुत मुखर रहा। अंग्रेजीपरस्त बुद्धिजीवियों ने ऐसे-ऐसे तर्क अथवा कुतर्क ईजाद किए कि बुद्धि भी दंग रह जाए। उदाहरण के लिए उन्होंने कहा कि अंग्रेजी हटने से देश की एकता खत्म हो जाएगी और देश टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा। स्वतंत्रता आंदोलन का हमारा अनुभव बताता है कि देश की एकता देशी भाषाओं से ही स्थापित हो सकती है। उन्नीसवीं शताब्दी में स्वामी दयानंद, केशवचंन्द्र सेन, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर जैसे महान सुधारकों ने हिंदी को अंतप्रांतीय सम्पर्क की भाषा बनाने का सुझाव रखा। स्वतंत्रता आंदोलन में गरमी तब आई जब कांग्रेस के नेताओं ने भारतीय भाषाओं को प्रचार का माध्यम बनाया। आचार्य नरेन्द्र देव ने अपने संस्मरणों में लिखा है कि विपिनचन्द्र पाल फरटि से हिंदी बोलते थे और बालगंगाधर तिलक हिन्दी रुक-रुक कर बोलते थे लेकिन बोलते हिंदी में ही थे। गांधी जी ने तो हिन्दी प्रचार को स्वतंत्रता आंदोलन का महत्वपूर्ण कार्यक्रम बनाया। हिंदी और भारतीय भाषाओं के प्रयोग के कारण ही स्वतंत्रता आंदोलन भारत के जन-जन को और अनुप्राणित कर सका। भारत में एकता की भावना का विकास ही हिंदी तथा देशी भाषाओं के इस्तेमाल से हुआ। इसे ऐतिहासिक प्रमाण के बावजूद भारतीय भाषाओं के प्रयोग को देश की एकता में बाधक मानना एक कुतर्क के सिवा क्या हो सकता है। इन अंग्रेजीपरस्त बुद्धिजीवियों ने कुछ समय पूर्व भाषावार प्रांतों की रचना के खिलाफ भी बहुत बावेला मचाया था और सारे देश को अंग्रेज राज की व्यवस्था के अनुसार उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम के क्षेत्रों में बांटने का सुझाव रखा था। वे इस बात से बेखबर थे कि भाषावार प्रांत रचना का विचार स्वतंत्रता आंदोलन के दिनों में विकसित हुआ था और कांग्रेस के अनेक अधिवेशनों में इस संबंध में प्रस्ताव पास होते रहे। स्वतंत्रता आंदोलन के नेताओं का विचार स्पष्ट था कि देश का सारा काम-काज अंततः भारतीय भाषाओं में चलना है और इसलिए जनभाषाओं के अनुसार प्रदेशों का निर्माण आवश्यक है।

सच बात तो यह है कि देश की एकता में अंग्रजी ही सबसे बड़ी बाधा है। अंग्रेजी शासक वर्ग को जनता से अलग-थलग करती है। इस प्रवृत्ति के चलते देश आज आम और खास के दो वर्गों में बट गया है। सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री माल्कोम आदिशेपैया ने इसे भारत का सबसे खतरनाक द्वैत कहा है। आम लोगों के लिए निहायत घटिया स्कूल, अस्पताल, बसें, रेलगाड़ियां आदि और खास लोगों के लिए बढ़िया पब्लिक स्कूल, आलीशान नर्सिंग होम, कारें, राजधानी गाड़ियां, वातानुकूलित डिब्बे, एयर बसें आदि। आम लोगों के लिए पचासों मील के क्षेत्र में पुलिस का एक सपाही नहीं और खास लोगों की सुरक्षा के लिए एक आदमी के पीछे पूरी कंपनी की तैनाती। आम आदमी की डाकसेवा के लिए सालों से भरती नहीं और खास वर्गों के लिए कूरियर सेवाएं, स्पीड पोस्ट आदि की

सुविधाएं। यह देश इंडिया और भारत के दो हिस्सों में बट चुका है, इसे कौन नहीं देख सकता।

हमारे संविधान-निर्माताओं ने स्वतंत्र भारत में क्रांतिकारी परविर्तन लाने के लिए दो महत्वपूर्ण कदम उठाए थे। एक जाति व्यवस्था की कुंठा को दूर करने के लिए कमजोर तबकों को विशेष सुविधाएं (जिसे आरक्षण-व्यवस्था कहा जाता है)। दूसरा विदेशी भाषा से उत्पन्न कुंठा को दूर करने के लिए जन-भाषाओं के प्रयोग का संकल्प। दोनों निर्णय व्यवस्था पर एक छोटे से वर्ग के आधिपत्य को समाप्त करने तथा अल्पतंत्र को लोकतंत्र में बदलने के लिए थे। यदि इन निर्णयों को ईमानदारी के साथ लागू किया गया होता तो आज भारत की गिनती दुनिया के अत्यंत पिछड़े देशों में न होती।

संविधान के इन दो क्रांतिकारी संकल्पों के खिलाफ आजादी मिलते ही निहित स्वार्थों ने षड़यंत्र रचना शुरू कर दिया। इन निहित स्वार्थों ने संविधान के दोनों क्रातिकारी कदमों का विरोध किया क्योंकि ये कदम उनके विशेषाधिकारों को समाप्त करने वाले थे। आरक्षण-व्यवस्था को समाप्त करने के लिए ये पूरा जोर लगाते रहे। 1990 में आरक्षण विरोधी आंदोलन को हिंसक बनाने का काम इन्हीं तत्वों ने किया और अब उच्चतम न्यायालय का फैसला आने के बाद अभी उनकी दृष्टि में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया है।

विदेशी भाषा को हटाने और स्वदेशी भाषाओं को लाने के खिलाफ भी यह वर्ग शुरु से काम करता रहा। जब उन्होंने अपने कुतर्कों को विफल होते देखा तो उन्होंने ऐसा दाव खेला कि उनकी विरोधी परिवर्तनवादी ताकतें आपस में ही लड़ने लगीं। दक्षिण में जहां आरक्षण का आंदोलन शक्तिशाली था, हिंदी और देशी भाषाओं का विरोध तथा अंग्रेजी का समर्थन होने लगा। उत्तर में जहां देशी भाषाओं का आंदोलन जोर पर था, आरक्षण का विरोध करते हुए अपने बच्चों को पब्लिक स्कूलों में हिन्दी पढ़ाते रहे और उत्तर में अंग्रेजी का विरोध करते हुए अपने बच्चों को अंग्रेजी पढ़ाते रहे। दूसरे शब्दों में जनता को कुछ कहते रहे और खुद कुछ और करते रहे।

अंग्रेजी के संबंध में डॉ राममनोहर लोहिया कहा करते थे कि यह भारत की गरीबी और अविद्या का कारण है। इसके अतिरिक्त उनका यह कहना भी था कि यह भाषा देश को दो हिस्सों बें बांटती है। एक अभिजात वर्ग और दूसरा साधारण जनता। विगत सालों के अनुभव बताते हैं कि उनकी ये दोनों मान्यताएं बिल्कुल सही थीं। एक रिपोर्ट के अनुसार आज भी 100 में से केवल 10 बच्चे हाई स्कूल स्तर तक और 3 कालेज स्तर तक पहुंच पाते हैं। इसका प्रमुख कारण है रोजगार के अवसरों पर अंग्रेजी का वर्चस्व। निर्धन तबके भी अपने बच्चों की अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में भेजते हैं। इनमें से अधिकांश अंग्रेजी के बोझ के कारण बीच में ही स्कूल छोड़ देते हैं। इस प्रकार अंग्रेजी में 90 प्रतिशत बच्चों को शिक्षा के अधिकारी से जिसकी संविधान में गारंटी दी गई है, वंचित कर दिया है। गरीबी के मामले में स्थिति और भी खराब है। अंग्रेजी के मोह के कारण हम पश्चिमी देशों की नकल करने लगे और हमने ऐसी आर्थिक नीतियां अपनाई जिनसे ऊपर के दो तीन प्रतिशत लोग तो बेहद समृद्धि का सुख भोगने लगे और उनके नीचे 7-8 प्रतिशत लोगों की स्थिति भी बेहतर हुई लेकिन 90 प्रतिशत जनता की स्थिति में कोई अंतर नहीं आया। इसमें भी 50 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा के नीचे हैं और लगभग 30 प्रतिशत तो ऐसे हैं जिन्हें आधे भूखे आधे नंगे की श्रेणी में रखा जा सकता है।

अंग्रेजी को हटाने के लिए हजारों दलीलें दी गईं। देश भर के सैंक. विद्वानों, साहित्यकारों, शिक्षा-शास्त्रियों ने एक स्वर से बार-बार इसका अनुरोध किया किंतु अंग्रेजी-परस्तों के रवैये में कोई परिवर्तन नहीं आया। जब यह कहा गया कि विदेशी भाषा का स्वतंत्र राष्ट्र के राज-काज और शिक्षा की भाषा होना मानसिक दासता है तो जवाब में ऐसा करने वालों को कट्टर दुराग्रही कहा गया। जब तर्क दिया गया कि अंग्रेजी को राजभाषा के पद पर बनाए रखने से सच्चा लोकतंत्र नहीं पनप सकता तो कहा गया कि अंग्रेजी विश्व के साथ सम्पर्क का माध्यम होने के कारण अनिवार्य है। जब विद्वानों ने स्वतंत्रता आंदोलन के नेताओं, विशेषकर महात्मा गांधी का हवाला देकर कहा कि वे अंग्रेजी के स्थान पर भारतीय भाषाओं को लाने के लिए कितने उत्सुक थे तो निहित स्वार्थों ने उन सबको अव्यावहारिक कह कर खारिज कर दिया।

साम्राज्यवाद के चंगुल से आजाद होने वाले हर देश को राष्ट्रीय एकात्मकता के निर्माण के लिए अपनी भाषाओं का आंदोलन चलना पड़ता है। कारण यह है कि भाषा जनता को जोड़ती है और वह राष्ट्रीयता की भावना का एक प्रमुख स्तंभ होती है। विदेशी भाषा किसी देश को राष्ट्रीयता के सूत्र में नहीं बांध सकती। अमरीका में भी अंग्रेजी की गुलामी से मुक्त होने के बाद जब राष्ट्रीयता के निर्माण की प्रक्रिया चली तो वहां के बुद्धिजीवियों ने अंग्रेजों की भाषा के खिलाफ आंदोलन चलाया और अपनी विशिष्ट भाषा की खोज की। श्री वाल्टर चेनिंग (1786-1876) इस आंदोलन के सशक्त प्रवक्ता थे। वे अमरीकी कला-विज्ञान अकादमी के सदस्य तथा प्रसिद्ध साहित्यकार एवं शिक्षाविद् थे। "नार्थ अमेरिकन रिव्यू" पत्र के सितंबर, 1815 के अंक में उनका एक लेख प्रकाशित हुआ था जिसके कुछ अंश नीचे दिए जा रहे हैं। इन अंशों को पढ़ने से पता चलता है कि उन दिनों अमरीका में अंग्रेजों की भाषा के प्रति कितना रोष था हालांकि अमरीका की भाषा अंग्रेजों की भाषा से बहुत भिन्न नहीं थी। वाल्टर चेनिंग लिखते हैं:- "राष्ट्रीय साहित्य अथवा यूं कहें कि सच्चा राष्ट्रीय साहित्य राष्ट्रभाषा से ही उत्पन्न होता है, साहित्यिक विशिष्टाएं भाषा की विशिष्टताओं से अंशमात्र ही भिन्न होती हैं और साहित्यिक मौलिकता मस्तिष्क की उस स्वतंत्र क्रिया का फल है जिसमें अन्य भाषा की दास्ता अनिवार्य रूप से बाधा डालती है। अतः यदि हम से इस समय पूछा जाए कि यह देश साहित्य में इतना पिछड़ा हुआ क्यों है तो मैं उत्तर दूंगा कि इसने उस देश की भाषा को अपना रखा है जो हर बात में इससे बिल्कुल भिन्न है और क्योंकि वह अपनी बौद्धिक शक्तियों का स्वतंत्र प्रयोग करने की अपेक्षा विदेशी साहित्य का संग्रह करने में आनंद अनुभव करता है।...

"दुर्भाग्य से विदेशी भाषा के प्रभाव ने हमें इतना जकड़ रखा है कि यह आशा नहीं की जा सकती कि हम अपनी भाषा को अपनी परिस्थिति, अपनी बौद्धिक शक्ति और मौलिकता के अनुरूप ढाल सकेंगे। किंतु क्या यह सच है कि ऐसा राष्ट्र जिसकी अपनी आत्मा है और निजी विशिष्टता है, हमेशा के लिए दूसरों की नकल ही करता रहेगा।...

"यह दिखाना कोई कठिन काम नहीं कि किसी देश के साहित्य के उत्थान और प्रगति के लिए उसकी निजी भाषा का कितना महत्व है। पहली बात तो यह है कि प्रत्येक राष्ट्र का अपनी भाषा के साथ प्रबल हार्दिक संबंध होता है। अपनी भाषा के प्रति उसका यह लगाव देश-प्रेम का एक

शेष पृष्ठ 28 पर

साहित्यिक अनुवाद एक साधना है

—डा॰ वीरेन्द्र सक्सेना*

ज्ञान-विज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र में तकनीकी विकास के फलस्वरूप अनुवाद के क्षेत्र में भी मात्रा और गुणवत्ता की वृद्धि हुई है। किन्तु अनुवाद के अभी भी कुछ क्षेत्र ऐसे हैं, जिनका अनुवाद पहले की तरह ही कठिन और श्रमसाध्य है। साहित्यिक अनुवाद इसी तरह का एक क्षेत्र है, क्योंकि उससे जुड़ी समस्याओं का कोई सीधा और सुनिश्चित समाधान नहीं खोजा जा सका है।

पुनःस्थापन काल के प्रसिद्ध कवि, आलोचक और नाटककार जान ड्राइडन (1631-1700) बहुत अच्छे अनुवादक भी थे। उन्होंने साहित्यिक अनुवाद पर अपने विचार प्रगट करते हुए उसके तीन प्रकार बताए:-

1. शब्दानुवाद (Metaphrase)
2. भावानुवाद (Paraphrase)
3. पुनर्रचना (Imitation)

इनमें पहले शब्दानुवाद में अनुवादक एक भाषा से दूसरी भाषा में शब्द-प्रति-शब्द या पंक्ति-प्रति-पंक्ति, अनुवाद करता है। दूसरे भाषानुवाद में वह कुछ छूट के साथ अनुवाद करता है। उसमें अनुवादकमूल लेखक को तो नजर में रखता है, किन्तु उसके शब्दों का उस कड़ाई से अनुगमन नहीं करता, जितना कि भावों का। तीसरे पुर्रचना में अनुवादक, केवल शब्दों और भाषों में परिवर्तन की ही छूट नहीं लेता, बल्कि अवसरानुकूल मूल से कुछ सामान्य संकेत लेकर मनमाने ढंग से नई-नई उद्‌भावनाएं करता है।

ड्राइडन ने आगे कहा है कि अनुवाद में पुनर्रचना और शब्दानुवाद दो अतिवादी स्थितियां हैं, अतः उनसे बचना चाहिए। इसीलिए उन्होंने साहित्यिक अनुवाद में इन दोनों की मध्यवर्ती स्थिति भावानुवाद - को काम्य माना है।

साहित्यिक अनुवाद में भी सबसे कठिन है कविता का अनुवाद या शब्दानुवाद। इसकी मुख्य समस्याएं निम्नलिखित हैं:-

1. **शब्दों के चयन की समस्या:** हर शब्द का एक सामान्य अर्थ तो होता ही है, उसका एक पूरा परिवेश या संस्कृति भी होती है। इसलिए कविता का अनुवाद करते समय, शब्दों के चयन पर विशेष ध्यान देना होता है ताकि कवि का अनुभूत सत्य अनुवादक का भी अनुभूत सत्य बन जाए और कविता की संवेदना उभर सके।

2. **शब्दों की लय और ध्वनि की समस्या:** कुछ कविताओं में शब्दों की लय और ध्वनियों का महत्व अधिक होता है। इस तरह की कविताओं का शब्दालंकारों से युक्त कविताओं का अनुवाद कठिन होता है और कभी कभी असंभव भी हो जाता है, क्योंकि लक्ष्य भाषा में उसी तरह की लय और ध्वनि ला पाना संभव नहीं हो पाता।

3. **शैली की समस्या:** प्रत्येक मौकिल कवि की एक विशेष शैली होती है, जिससे वह पहचाना जाता है। उदाहरणार्थ अंग्रेजी कवि शेक्सपियर की शैली मिल्टन से भिन्न है, इसलिए उनके अनुवादों में भी संबंधित शैली की झलक मिलनी चाहिए। पर ऐसा करना प्रायः संभव नहीं हो पाता और अनुवादक का कार्य शैली की पकड़ को लेकर अत्यंत कठिन हो जाता है।

4. **देश-काल की भिन्नता की समस्या:** कोई भी भाषा अपने विशेष देश-काल और समाज से संबद्ध होती है । इसलिए यदि अनुवादक को स्रोत भाषा के देश-काल और समाज का ज्ञान नहीं है, तो अनुवाद में कठिनाई या अस्वाभाविकता उत्पन्न हो जाती है।

उक्त समस्याओं पर कुछ उदाहरणों के माध्यम से विचार करने से स्थिति अधिक स्पष्ट हो सकेगी और समस्याओं के समाधान में भी कुछ सहायता मिल सकेगी।

शेक्सपियर की एक पंक्ति है: The other women feed but she makes hungry यहां feed का सामान्य अर्थ "खिलाना" और hungry का सामान्य अर्थ "भूखा" युक्तियुक्त नहीं है। अपितु यहां इसका भाव है कि उसके (किलयोपेट्रा के) सौंदर्य को देखकर बार बार उसे देखने की अतृप्ति जाग उठती है।" इसी प्रकार कालिदास की पंक्ति है — "अधे लब्धं नेत्र निर्वाणम्"। यहां "निर्वाणम्" का प्रयोग साधारण मुक्ति के अर्थ में न होकर नेत्रों को "अपार सुख" मिलने के अर्थ में किया गया है।

उक्त स्थितियों में अनुवादक को भी अपनी लक्ष्य भाषा में अनुवाद करते समय ऐसे शब्द खोजने होंगे, जो feed, hungry और "निर्वाणम्" की साम्यता रखते हुए भी उतनी ही गहरी अनुभूति भी करा सकें। संभवतः इसी तरह की स्थिति में कवि अज्ञेय ने जापानी कवि वाशो की एक कविता का अनुवाद "ग्रीष्म घास यह, योद्धाओं के स्वप्नों की अवशेष" न करने की बजाय "यह सावन की दूब/हरे सपने ये/खेत रहे बीदों के।" किया था। यहां अज्ञेय को अनुवाद में "ग्रीष्म की घात" "सावन की दूब" हो गई, जो भारतीय संदर्भ में अधिक अर्थव्यंजक है। साथ ही "खेत रह ना" मुहावरा और "हरे सपने" भी सार्थक प्रयोग है। इस प्रकार के अनुवाद के संबंध में अज्ञेय का अपना कथन था — "मैं कृतसंकल्प था कि कविता के मामले में कविता तो अवश्य मिलनी चाहिए। एक-एक शब्द का पर्याय भले ही न मिले, लेकिन कविता के बदले एक कविता अवश्य मिलनी चाहिए।"

कविता का अनुवाद या काव्यानुवाद करते समय कुछ अन्य समस्याओं से भी जूझना पड़ सकता है। ये समस्याएं कविता के अलावा साहित्य की अन्य विधाओं, जैसे कथा-साहित्य और नाटक आदि उन पर भी संक्षेप में विचार करना अप्रासंगिक न होगा। ये समस्याएं हैं:-

1. **मुहावरों और कहावतों का अनुवाद:** मुहावरे तथा कहावतों किसी भाषा विशेष की अपनी संपत्ति होती है, अतः उनका शब्दानुवाद संभव नहीं है। उनका भावानुवाद ही करना होता है और यदि संभव हो तो उनके समतुल्य लक्ष्य भाषा में प्रचलित मुहावरे या कहावत का प्रयोग कर लेना चाहिए। उदाहरणार्थ-

मूल : Diamonds cuts diamond
अनु॰ : लोहे से लोहा कटता है।

*संपादक 'भाषा', केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय परिचेयी खंड-7, रामकृष्ण पुरम, नई दिल्ली-22

मूल : Barking dogs seldom bite
अनु॰ : जो गरजते हैं, वे बरसते नहीं।

मूल : Vows made in storm are forgotten in calm.

अनु : दुख में सुमिरन सब करें, सुख में करे न कोय।

2. **आंचलिक शब्दों, शैलियों का अनुवादः** कथा-साहित्य का अनुवाद करते समय बहुधा आंचलिक शब्दों और शैलियों का भी अनुवाद करना होता है, जो एक कठिन कार्य है। यही कारण है कि प्रेमचंद के "गोदान" की तुलना में फणीश्वर नाम रेणु के "मैला आंचल" का किसी अन्य भाषा में अनुवाद करना एक दुष्कर कार्य है, क्योंकि उसके लिए लक्ष्य भाषा के आंचलिक शब्दों/शैलियों की जानकारी भी जरुरी होगी।

3. **संस्कृतियों से संबद्ध शब्दों का अनुवादः** कुछ शब्द जैसे "मंगलसूत्र", "गंगाजल", "पतिव्रता", "गोदान" आदि संस्कृति विशेष से जुड़े श=द होते हैं, अतः उनका विशेष महत्व होता है। ऐसे शब्दों का शब्दानुवार या भावानुवाद देकर कोष्टक या पाद-टिप्पणी में उनका स्पष्टीकरण भी दे देना जरूरी हो जाता है, ताकि किसी तरह का भ्रम न रहे।

4. **रंगों का अनुवादः** कुछ भाषाओं में रंगों के लिए सीमित-संख्या में ही शब्द उपलब्ध हैं। अतः विभिन्न रंगों के अलग-अलग शोड्स के लिए उनके पर्याय उपलब्ध न होने पर उनके अनुवाद में कठिनाई आ जाती है और तब उनका स्पष्टीकरण देना जरूरी हो जाता है।

5. **नाते-रिश्ते की शब्दावलीः** हिन्दी में चाचा, ताऊ, मामा, फूफा, मौसा आदि सभी शब्दों के लिए अंग्रेजी में "अंकल" शब्द का प्रयोग होता है। अतः "अंकल" का हिन्दी में वास्तविक अनुवाद क्या हो, यह संदर्भ से समझकर ही अनुवाद करना चाहिए।

6. **अश्लील या टेबू शब्दः** अनुवादक के लिए एक बड़ी समस्या तब उपस्थित हो जाती है, जब स्रोत भाषा में कोई शब्द "अश्लील" या "टेबू" नहीं माना जाता, लेकिन लक्ष्य भाषा में "अश्लील" या "टेबू" हो जाता है। अंग्रेजी में "ब्रेस्ट्स" अश्लील नहीं है, लेकिन हिन्दी में "छातियां" अश्लील मानी जाती हैं।

7. **गालियांः** एक भाषा की गालिया दूसरी में मुस्किल से अनूदित हो जाती हैं, क्योंकि भाषा बदलते ही गालियां भी बदल जाती हैं। उदाहरणार्थ "साला", "ससुर" आदि हिन्दी में गालियां हैं, किन्तु अंग्रेजी अनुवाद में गालियां नहीं रहते। इस तरह गालियों का अनुवाद भी अनुवादक के लिए विकट समस्या है।

8. **लिप्यंतरण की समस्याः** अनुवाद में व्यक्तिवाचक संज्ञाओं का केवल लिप्यंतरण किया जाता है, पर इसमें भी कई प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। कारण यह है कि भिन्न-भिन्न भाषा भाषियों द्वारा एक ही नाम का उच्चारण भिन्न प्रकार से किया जाता है, इसलिए वे लिप्यंतरण में भी अंतर करते हैं। उदाहरणार्थ—

नाम	हिन्दी भाषी दक्षिण	भारतीय भाषा भाषी
सीता	Sita	Sitha
श्रीनिवास	Shrinivas	Srinivas
शेष	Shesh	Sesh

अन्य भाषाओं के माध्यम से हिन्दी तक पहुंचते-पहुंचते ग्रीक नाम "प्लातोन" हिन्दी में "प्लेटो" या "अफलातून" लिखे जाने लगे हैं। दूसरी भाषाओं के अनुवाद अंग्रेजी के माध्यम से करने के कारण ही हिन्दी में यह दोष आया है, जो मूल भाषा से अनुवाद करने पर स्वतः दूर हो सकता है।

नाटक के अनुवाद में क्योंकि शब्दों के साथ स्वर के उतार-चढ़ाव का भी महत्व है, इसलिए और भी सावधानी की जरूरत होती है। वहां अनुवादक के लिए यह जानना भी जरूरी होता है कि लेखक ने विभिन्न पात्रों की सृष्टि किन परिस्थितियों में की थी और किस पात्र के प्रति लेखक कब सहानुभूतिपूर्ण और कब कठोर रहा, एक पक्ष यह भी है कि नाटक समाज के किस वर्ग के लिए लिखा जा रहा है। साथ ही अनुवादक का रंगमंचीय परिकल्पना के बिना नाट्यानुवाद करना उचित नहीं होता। नाटक को पाठक के साथ दर्शक के समक्ष भी संप्रेषित कराने का दृष्टिकोण सामने रखना अनिवार्य है।

इस प्रकार साहित्यिक अनुवाद अभी भी एक साधना है, जिसमें कुछ सामान्य और कुछ अलग तरह की कठिनाइयां आती ही रहती हैं। प्रत्येक विधा की जो सामान्य कठिनाइयां या समस्याएं हैं, उनका विवेचन ऊपर किया जा चुका है। इन सबके आधार पर साहित्य का "आदर्श अनुवाद" प्रस्तुत करने के लिए अनुवादक निम्नलिखित उपाय काम में ला सकता है:—

1. उपलब्ध साहित्यिक सामग्री को अच्छी तरह पढ़ना चाहिए।
2. प्रसंगों, भावों आदि को समझने के लिए आवश्यकतानुसार अन्य ग्रंथों या विद्वानों की भी सहायता ले लेनी चाहिए।
3. पर्याय ढूंढने के लिए कोशों के अलावा अनुभवी विद्वानों की सहायता ली जा सकती है। साहित्यिक सामग्री को "एक बार" पढ़ लेने के बाद कठिन शब्दों, मुहावरों, कहावतों और अन्य अभिव्यक्तियों आदि के उचित पर्याय अलग से नोट कर लेना चाहिए।
4. इसके बाद अनुवाद का पहला प्रारूप तैयार कर लेना चाहिए।
5. अनुवाद के पहले प्रारूप को कुछ दिनों के लिए अलग रख देना चाहिए।
6. प्रारूप को फिर से पढ़कर उसे सुधारना चाहिए। संतोष न होने पर यह प्रक्रिया कई बार दोहराई जा सकती है।
7. इसके बाद अनुवाद को लक्ष्य भाषा के किसी अधिकारी विशेषज्ञ से पढ़वाना चाहिए और उसके सुझावों पर विचार करना चाहिए। इससे अनुवाद में सहजता आ जाती है।
8. कुछ अनुवादक अनुवाद को बोलकर लिखा देते हैं। अच्छा होगा, अनुवादक दूसरा प्रारूप स्वयं लिखे। इस प्रक्रिया के कई दोष स्वतः दूर हो जाते हैं, क्योंकि अनुवादक लिखते समय स्वयं पढ़ता भी जाता है।
9. "आदर्श अनुवाद" के लिए अभ्यास, अनुभव और अध्ययन तीनों जरूरी हैं। जितना अधिक कोई अनुवादक तीनों पर ध्यान देगा, उतना अच्छा वह अनुवाद कर सकेगा।

शेष पृष्ठ 28 पर

प्रशासनिक भाषा और अनुवाद

डा॰ एन॰ई॰ विश्वनाथ अय्यर*

प्रशासन एक बड़ा व्यापक शब्द है। सीमित अर्थ में वह केवल कार्यपालिका (एक्सिक्यूटीव) का द्योतक है। मगर भाषा की दृष्टि से विधानसभा और न्यायपालिका (जूडिशियरि और लेजिस्त्वेचर) के क्षेत्र भी प्रशासन के कहलाने योग्य हैं। हम तालूक कचहरी में राशन के लिए जो अर्जी देते हैं उससे लेकर माननीय राज्यपाल द्वारा निकाले जाने वाले अध्यादेश याने आर्डिनन्स एक प्रशासनिक भाषा में लिखे जाते हैं। प्रशासन में भाषापरक स्थितियां कई हैं—(1) प्रशासनिक पत्र प्रस्तुत करने वाला और वह पत्र पाने वाला दोनों हक ही भाषा बोलते हैं। (2) दोनों भिन्न-भिन्न भाषाएं बोलते हैं (3) दोनों में से एक की भाषागत जानकारी सीमित है।

हमारे देश में अंग्रेजों का व्यापक शासन सन् 1857 के बाद ही स्थापित हुआ। उसके पहले प्रत्येक राज्य का प्रशासन उसकी भाषा में होता था। ट्रावंकोर और कोचिन रियासत में प्रशासन की भाषा मलयालम थी। पर वे रियासतें पड़ोसी राज्यों और दिल्ली से संबंध जरूर रखती थी। आगे उनका संपर्क पोर्तगल, डच एवं अंग्रेज कंपनी से हुआ। ऐसे मौकों पर रियासत के राजा एवं दिवान अपने दरबार के द्विभाषियों के माध्यम से उनसे संपर्क करते थे। उन्हीं के द्वारा पत्राचार होता था। कोचिन नगर में पुरातत्व कार्यालय में फारसी-पत्रव्यवहार का छोटा सा स्वतंत्र संग्रह है, जिसमें महाराजा को मिले पत्र और उनके उत्तर में महाराजा के लिखाये पत्र सुरक्षित हैं। उन दिनों राज्य के भीतरी प्रशासनिक पत्राचार की भाषा मलयालम थी और बाहरी प्रशासनिक पत्राचार की भाषा तमिल, फारसी आदि थी। पड़ोसी मदुरै की भाषा तमिल थी, मैसूर की भाषा ऊर्दू थी और दिल्ली की भाषा फारसी।

जब पश्चिमी अंग्रेज कंपनी और बाद में अंग्रेज सरकार से पत्रव्यवहार आवश्यक हो गया तब ट्रावंकोर व कोचिन सरकारों का पत्रव्यवहार और सूचना-घोषणा आदि अंग्रेजी में तैयार होने लगे। साथ ही मलयालम में उसके अनुवाद तुरंत तैयार करके छापते थे। ऐसी मलयालम-घोषणाओं, आदेशों और अन्य पत्रों के कुछ नमूने संकलित करके ट्रवंकोर सरकार ने प्रकाशित किये थे। अंग्रेज सरकार और अंग्रेजी का प्रभाव बढ़ता गया तो मेहमान घर का मालिक बन गया। घर के मालिक को एक छोटी कोठरी देना भी बड़ी उदारता घोषित किया गया। यह स्थिति जब बदतर होती गई तब घर के मालिक को बेदखल तक करने की नौबत आते आते बच गई। मैंने ट्रावंकोर राज्य का जो उदाहरण दिया वहीं प्रायः देश के सारे राज्यों की स्थिति थी। स्वतंत्र भारत में भारतीय भाषाओं में प्रशासन करने की पुकार फिर से उठी है। इसी पृष्ठभूमि में हम प्रशासनिक भाषा और अनुवाद के संबंध पर विचार करना चाहते हैं।

प्रशासन में अनुवाद का सब से आसान तरीका क्या है इस पर सोचते हुए सब से आसान बात यही लगती है कि हम मातृभाषा को अंग्रेजी के लहजे में बोलें और मातृभाषा अंग्रेजी लिपि में लिखें। सुना हो, ट्रावंकोर में अंग्रेजी से अनभिज्ञ एक पुलिक-कमीश्नर थे। वे निचले पद से कमिश्नर के उच्चतम पद तक ईमानदारी, कर्मकुशलता आदि से पहुंचे थे। अंग्रेजी न जानने की कमी को वे अंग्रेजी लहजे में बोलकर दूर करते थे। वे कवायद के समय सिपाहियों को जब आदेश देते थे तब मलयालम में ही आदेश देते थे। मगर अंग्रेजी लहजे में बोलने के कारण सुनने वाले को लगता था कि अंग्रेजी में बोल रहे हैं। हमारे कार्यालयों में काम करने वाले कई लोगों की हालत उससे बहुत ऊंची तो नहीं कहला सकती। हम प्रायः अपनी मातृभाषा में सोचते हैं और उसी शैली में अन्य भाषा में प्रशासनिक पत्र तक लिखते हैं। मलयालम भाषी मलयालम में सोचना छोड़ नहीं सकते क्योंकि यह मानवीय भाषा प्रकृति है। लोग नदी की जल-धारा को पत्थरों के अंबार से भले ही रोक दें, पर बंध के हटते ही पानी तेजी से अपनी सहज गति से बहता है। इस प्रकार विदेशीभाषा के नकली बंधन से छूटने पर मातृभाषा में पत्राचार सहज हो सकता है।

मातृभाषा की महिमा मानने पर भी यह इंकार नहीं किया जा सकता कि प्रशासन और अनुवाद में हमेशा संबंध रहा है। एक साधारण-सा पत्र भी जब कलक्टर की सेवा में प्रस्तुत करना पड़ता है तब उसे दफ्तर की भाषा में दुहराना पड़ता है। एक भाषा की बात उसी भाषा में दूसरे ढंग से प्रस्तुत करना भी अनुवाद है। इसे अनुवाद-विज्ञान में अंतः भाषिक Intralingual अनुवाद पुकारा जाता है। दो भाषाओं का परस्पर अनुवाद अंतरभाषिक अनुवाद माना जाता है। इतिहास बताता है कि भारत के विभिन्न प्रदेशों में बाहरी भाषा में भी प्रशासनिक व्यवहार अनिवार्यतः होता आया है। उदाहरण तेलुगुभाषी एवं कन्नड़भाषी आंध्र व कर्नाटक में दक्खिनी में (इस दक्खिनी ऊर्दू भी पुकारते हैं) प्रशासनिक पत्राचार किया जाता था दिल्ली, आगरा में मुगल शासनकाल में फारसी में पत्राचार होता था। उसमें और उससे अनुवाद अनिवार्य रहा था। जब मराठा साम्राज्य स्थापित हुआ तब मराठा शासकों को फारसी का ज्ञान जरूरी हो गया। इसके लिए संस्कृत भाषा में लिखा गया राजानक शब्दकोष मिलता है। उसमें फारसी शब्द और उनके संस्कृत अर्थ दिये गये हैं।

वर्तमान स्थिति में प्रशासन की भाषा अंग्रेजी से प्रशासन की नयी भाषा हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद करने की समस्या उठती हैं कि अनुवाद आदि की झंझट क्यों मोल लेते हो, अंग्रेजी को ही बनी रहने दो। ऐसे लोगों से हमें कुछ नहीं कहना है। हम तो प्रशासन के अनुवाद की समस्याओं को सुलझाने की कोशिश करेंगे। प्रशासनिक पत्राचार में अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद के विषय में अनुकूल व प्रतिकूल दोनों स्थितियां हैं। अनुकूल स्थिति यह है कि जो स्थानीय व राज्यीय बातें हैं

* भू॰पू॰ आचार्य एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग, कोचिन विश्वविद्यालय

उनका बोध राज्यभाषा के शब्दों से शीघ्र होता है। उदाहरणार्थ निविदाएं या टेंडर, जमीन-जायदाद की बिक्री-बंटवारा आदि से संबंधित रजिस्ट्री-पत्र, पंचायत के पत्रव्यवहार, आम लोगों के जीवन से संबंधित बातें आदि की चर्चा विदेशी भाषा में करते समय भी राज्यभाषा की शब्दावली का प्रतिशत उसमें अधिक रहता है। ऐसे प्रमाण में क्रियापद, प्रत्यय, संबंध बोधक, अव्यय आदि अंग्रेजी में रह सकते हैं। ऐसे प्रसंगों पर अनुवाद एकदम आसान रहता है।

ज्यों ज्यों शब्दों की तकनीकी प्रवृत्ति पड़ती है त्यों त्यों अनुवाद की प्रकृति तकनीकी, जटिल और अतएव कठिन होती जाती है। प्रशासनिक भाषा के अनुवाद की समस्या वहां कठिन होती है जहां सामान्य दृष्टि से अनेकार्थ शब्द, शब्दांश और प्रत्यय अनुवाद में एक विशिष्ट अर्थ में संकेतित होते हैं। ऐसा भी प्रसंग आता है जब प्रशासनिक भाषा में अभिव्यक्ति या अभिमत भाव का बोध लक्ष्य भाषा में प्रस्तुत करना कठिन या असंभव सा होता है। अभिव्यक्तियां परंपरा से बनती हैं और उस परंपरा का बोध नई भाषा में पाना कठिन है। इनका अनुवाद किसी रूप में करके बाद में समझौता किया जाता है। इनका अनुवाद किसी रूप में करके बाद में समझौता किया जाता है।भारतीय प्रशासन में कई अंग्रेजी पदनाम ऐसे हैं जो इंग्लैंड की परंपरा से आगत हैं। उदाहरण Governor, Collector, Justice, Judge, Speaker, Minister आदि। इनका अनुवाद यथाक्रम राज्यपाल, जिलाधीश, न्यायमूर्ति, न्यायाधीश, अध्यक्ष, मंत्री किया जाता है। अंग्रेजी प्रेमी ऐसे अनुवाद में कुछ अपूर्णता देख सकते हैं। उन्हें लग सकता है कि ये शब्द मूल शब्द के भावों को पूरा प्रकट कर नहीं पाते। ऐसी कमी भाषाओं की प्रवृत्ति में होती ही है। अंग्रेजी में भी प्रशासनिक शब्दावली लैटीन से ली गई है क्योंकि अंग्रेजी शब्द उनका शतप्रतिशत अर्थ समझाने में संभवतः असमर्थ हैं। ऐसे शब्दों के उदाहरण-Adhoc, Ipso facto, Inter alia, Sine die आदि। Adhoc, तदर्थ Ipso facto, तथ्यतः Inter Alia अन्य बातों के साथ Sine die = अनियतकाल तक। अनुदिन शब्द परिचित होते होते परिचित हो जाते हैं।

अनुवाद के विषय में एक महत्वपूर्ण बात है-विभिन्न अर्थवासीकियों के लिए अंग्रेजी के विविध शब्दों का प्रयोग। मूलतः एक ही अर्थ प्रतीत होता है। पर प्रसंगानुसार अर्थ में विशिष्टता रहती है उदाहरण order, rule, regulation, convention and ordinance के मूल अर्थ में समानता है। किन्तु प्रसंगानुसार अर्थ अलग अलग है। अतएवं उनका अनुवाद यथाक्रम आदेश, नियम, विनियम, रूढ़ि और अध्यादेश शब्द प्रचलित हैं। इसी तरह मूलतः "कार्यालय" के अर्थ की समानता है। पर कार्यालय के आकार, दायित्व आदि के अनुसार कार्यालय के लिए विभिन्न नाम हैं-Office- Commission, Corporation, Directorate, आदि। ये तकनीकी दृष्टि से विभिन्न अर्थव्याप्ति रखते हैं। इसलिए इनमें से हर एक का अनुवाद अलग अलग शब्द से किया जाता है। पूर्वोक्त शब्दों के हिन्दी रूप हैं-कार्यालय, आयोग, निगम, निदेशालय, आदि। इसी प्रकार प्रशासनिक पदनामों की रूढ़ता बड़ी मनोरंजक है। जहां अंग्रेज शासन के पहले दीवान पेशकार से लेकर गुमस्ता और चपरासी तक रहता था वहां स्वतंत्र भारत में प्रत्येक श्रेणी कर्मचारियों तक कितने ही स्तरों के कार्मिक होते हैं।

किसी की भाषा में रुपायित उकिया, वाक्यांश, निर्मित तकनीकी शब्द, संकेतित शब्द आदि को अनूदित करने की आवश्यकता पड़ती है। पहले हमारे देश की भाषाओं के खासकर संस्कृत के शब्द अंग्रेजी में अनुदित करते थे। संस्कृति की मनुष्मृति, पराशरस्मृति, अर्थशास्त्र आदि ग्रंथों का अनुवाद अंग्रेजी में काके "हिन्दु भा" गाढ़ लिया जाता था। यो केरल में भी मरुमक्कत्तायम, जन्मि कुटियान बंधम आदि केरलीय रूढ़ नामों और उनकी व्याख्याओं का अंग्रेजी में अनुवाद करके केरल के रेवेन्यू एक्ट आदि बनाते थे। उनमें भाषा अंग्रेजी थी, पर उनमें अनेक मलयालम रूढ़ शब्द होते थे। स्पष्ट है कि ऐसी सामग्री का अनुवाद आसान हो।

हमारे प्रशासन के क्षेत्र में दो प्रकार का अनुवाद आवश्यक हो जाता है। प्रशासित की भाषा से प्रशासन की भाषा में अनुवाद यानी मलयालम, आदि से प्रशासन-भाषा हिन्दी था अंग्रेजी में अनुवाद एवं प्रशासन की भाषा से प्रशासित की भाषा में अनुवाद। हमें अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद ही विशेष विचारणीय है। इसकी कई प्रविधियां होती हैं।

1. अंग्रेजी की उक्तयों का समांतर भाषागत उक्तिणों द्वारा अनुवाद।

2. अंग्रेजी से ठीक शब्दानुवाद जिसमें कहीं कहीं मूल शब्दों के लिप्यंतरण और अनुकूलन की भी आवश्यकता पड़ती है।

3. लक्ष्यभाषा हिन्दी की प्रकृति के अनुसार शब्दों व संचरनाओं को परिवर्तित करते हुए अनुवाद।

लिप्यंतरण और अनुकूलन के विषय में अंग्रेजी मलयालम का उदाहरण बताऊं। अंग्रेजी Superintendent मल० सूप्रेण्ड। अं—Advocate General मल० अडवकेट जेनराल। लिप्तंतरण और अनुकूलन के विषय में केरल के प्रत्युन्पन्नमति वकील-गुमाश्ता लोग बड़े कुशल रहे हैं। मलयालम के प्रसिद्ध उपन्यास "शारदा" में ऐसे ही गुमश्ता शब्दों के रूपान्तर सुनाते हैं—Bonafide—बोणाफिड। Malafide—मालापिट Resjude Cata—रसचुटिक्केट्टु, Endorsement—इंडास आदि।

प्रशासनिक अंग्रेजी के हिन्दी अनुवाद के संबंध में एक बड़ी शिकायत है कि तत्सम शब्दों से जार्टल बनाया जा रहा है। इस शिकायत को शतप्रतिशत दूर करना मुश्किल है क्योंकि सूक्ष्म अपरिनर्तनीय अर्थ अभिव्यक्त करने के लिए तत्सम शब्द जितना काम देते हैं उतना अन्य शब्द नहीं दे पाते। साथ ही हम अतिशय लोकप्रिय उर्दू शब्दों से परहेज करें, इसकी भी जरूरत नहीं है। अनेक उर्दू शब्द पहले से भारत की प्रशासनिक उर्दू भाषा में शामिल हो चुके हैं। हिन्दी की प्रकृति को नष्ट किये बिना ऐसे शब्दों का प्रयोग वांछनीय है। उदा० स्थानांतरण की जगह बदली, प्रतिभू की जगह मामिन आदि।

प्रशासनिक भाषा का अनुवाद करते समय अनुवादक को अंग्रेजी की सुरक्षा की अतिशय चिंता अभिभूत करती है। इसके फलस्वरूप कभी कभी बेढंगे हिन्दी शब्दों के प्रयोग की नौबत आती है। एक मित्र ने विनोदपूर्वक भाषण प्रारंभ करते हुए अध्यक्ष को संबोधन किया—"सम्माननीय कुर्सीवाले"। प्रशासनिक पत्रों के ढांचे में From, To, Sir, Madam, Yourself आदि के मलयालम अनुवाद को लेकर अब भी शास्त्रार्थ चलता है। हिन्दी में इसे सुलझाया जा चुका है। नये प्रयोगों के जमने में जरूर कुछ समय लगता है।

आशा करें कि प्रशासन के क्षेत्र में अनुवाद सुगम हो जाएगा और शीघ्र ही प्रशासनिक हिन्दी का अपना रूप स्थायी हो जाएगा। □

पत्र, पत्रकार और आचार संहिता

—सविता चड्ढा*

कभी भी पत्र या पत्रकारों के बारे में बात की जाये तो प्रश्न आता है उनकी स्वतंत्रता का और स्वतंत्रता के साथ-साथ बात आती है पत्र या पत्रकारों के उत्तरदायित्व की। स्वाधीनता बिना उत्तरदायित्वों के या बिना नियंत्रण के घातक हो सकती है। ऐसे कई उदाहरण है तब समाचार पत्रों ने स्वच्छन्दता का दुरुपयोग किया। वर्ष 1975 में आपातकालीन के दौरान पत्रों पर सैंसरशिप लगा दी गई क्योंकि जब देश में परिस्थितियां प्रतिकूल हो तो समाचारपत्रों को उन परिस्थितियों के अनुकूल बनाने के सार्थक प्रयास करने चाहिए। अन्यथा गलत तरीके से छपे या मिर्च मसालेदार भाषा का प्रयोग करके खबरों को तरोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत करना जलती में घी का काम करना है। हमें याद है देश को स्वतंत्रता दिलाने में समाचारपत्रों ने कितनी अहम भूमिका निभायी थी। समाचार पत्र आज भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं। आज भी पाठक "सच" को खबर मानता है और खबर को सच्ची। "सच" को तोड़-मोड़ कर प्रकाशित करने से पत्र अपना महत्व खो देते हैं। हमारे देश में शुरू से ही भेड़ चाल का मुहावरा प्रयोग होता रहा है। यह मुहावरा जब समाचारपत्रों पर भी लागू हो जाता है तो विषम स्थिति उत्पन्न हो जाती है। कोई समाचार पत्र जब एक समाचार (सच्चा या झूठा) छापने में पहल कर देता है तो शेष सब समाचारपत्र भी उसी का अनुसरण करते हैं और देखते-देखते ही वह गैर सामान्य मुद्दा ज्वलंत रूप ले लेता है। ऐसा कई मामलों में हो चुका है जब समाचारपत्र अपने अधिकारों को व्यक्तिगत स्वार्थों के लिए दुरूपयोग करना शुरू कर देते हैं तथा समाचारपत्रों अथवा संवाद ऐजेंसियां समाचार देने की होड़ में जब आचार (एथिक्स) का उल्लंघन करने लगती है तथा समाचारपत्र शीलता की मर्यादाओं को लांघ जाते हैं। तब उन पर नियंत्रण के लिए आचार संहिता का होना अति आवश्यक है। वर्ष 1975 में कुछ पत्रों ने ऐसा ही किया था। पत्रकारों का एक प्रतिनिधिमंडल प्रधानमंत्री श्रीमती इंन्दिरा गांधी से मिला। उन्हें स्थिति से अवगत करागया गया जब उन्होंने सेंसरशिप में कुछ ढील दी।

समाचारपत्रों पर पूर्णतः अंकुश नुकसानदायक भी हो सकता है। 1975 के दौरान जब पत्रों पर अंकुश लगाया गया तब तत्कालीन सरकार को देश में होने वाली कई महत्वपूर्ण गतिविधियों का पता नहीं न चल सका और सरकार को पराजय झेलनी पड़ी। समाचार पत्र न केवल जनता का मनोरंजन या ज्ञान वर्धन करते हैं बल्कि देश में होने वाली उन तमाम घटनाओं की जानकारी भी देते हैं जिन्हें जानना सरकार के हित में होता है।

पत्रों और पत्रकारों की स्वाधीनता के साथ ही जुड़े है उनके दायित्व, समाज के प्रति, सरकार के प्रति और राष्ट्र के प्रति। पत्र और पत्रकारों का यह दायित्व है कि सभी विचारों को हर तरह की सच्चाई और गतिविधियों को जनता के सामने ला सकें ताकि जनता स्वयं निर्णय ले सके। जब हम समाचार पत्र या पत्रकारों के दायित्व या कर्तव्यों की बात करते हैं तो उन पर नियंत्रण की बात भी साथ जुड़ जाती है। क्यों न हम संक्षेप में पत्रकारों के उत्तरदायित्वों के बारे में संक्षेप में जान लें।

सीधे-सीधे शब्दों में यह कहा जाता है कि पत्रकार को कोई भी कार्य ऐसा नहीं करना चाहिए जिससे अपराधों को प्रोत्साहन मिले। समाचार लिखते समय पत्रकार को अपने विचार इस प्रकार नहीं प्रकट करने चाहिए कि फला-फला की गलती के कारण उसे मार दिया जाये या जनता उसे फांसी लगा दे। पत्रकार को किसी व्यक्ति या संस्था की मानहानि का प्रयास नहीं करना चाहिए। झूठी बातें या सूनी-सुनाई बातों को आधार बना कर समाचार प्रकाशित करना पूर्णतः वर्जित है। पत्रकार को यह बात स्मरण रखनी है कि जो भी वह कहता है उसके लिए वह जिम्मेदार है। प्रेस की स्वतंत्रता की परिभाषा देते हुये ब्लैकस्टोन ने कहा है "प्रैस की स्वाधीनता का अर्थ है कि बिना पूर्व निषेध के छापने की स्वाधीनता हो। प्रैस की स्वाधीनता इस बात में है कि पहले अनुमति लिये बिना कुछ भी छाप दिया जाये लेकिन वह कानून के परिणामों से मुक्त नहीं" अधिकांश देश प्रैस की स्वाधीनता को मानहानि कानून से जोड़ते हैं।

पत्र और पत्रकारों का एक दायित्व और भी है कि वे अदालत की तौहीन या मानहानि से बचे। केवल भारत ही नहीं अन्य देशों में भी मानहानि और अदालत के तौहीन के मामलों को गंभीरता से लिया जाता है, बल्कि ब्रिटेन जैसे देश में मानहानि और अदालत की अवमानना के मामलों में सख्त सजा दी जाती है और पत्र या पत्रकारों को संरक्षण भी नहीं मिलता। आज प्रैस की स्वाधीनता केवल दायित्वों के रूप में विद्यमान रह सकती है। जब तक पत्रकारिता अपने नैतिक उत्तरदायित्वों को निबाहती रहेगी इसके कानूनी सभी अधिकार अपरिवर्तित रह सकेंगे।

कर्तव्य या दायित्वों की चर्चा करें तो विभिन्न देशों में कहीं कहीं कानूनी न्यायों के द्वारा कहीं नियम बनाकर या आचार संहिता द्वारा कर्तव्य निर्धारित किये हैं। फ्रांसीसी पत्रकारों की आचार संहिता के संक्षेप में निम्नानुसार प्रावधान है जिनका पालन करना सभी पत्रकारों का उत्तरदायित्व बन जाता है।

(1) पत्रकार उन समस्त लेखों की जिम्मेदारी लेता है जो उसके लिखे हैं चाहे उसका नाम उनमें प्रकाशित न हुआ हो।

(2) वह दूसरे की बुराई करने, चरित्र हनन करने, बिना सबूत आरोप लगाने, कागजातों और दस्तावेजों को बदलने, तथ्यों को तोड़ने-मरोड़ने और झूठ से, जो कि सब व्यवहार संबंधी गंभीर दुश्चरण माने जाते हैं, से बचेगा।

*899, रानी बाग, दिल्ली-34

(3) पत्रकार धन्धे की इज्जत के सवालों पर अपने वरिष्ठ जनों के निर्णय को सर्वोच्च मानेगा।

(4) पत्रकार वहीं काम करने की जिम्मेदारी लेगा जो धंधे की गरिमा के अनुकूल है।

(5) पत्रकार किसी लेख की नकल करते समय साथी पत्रकार का नामोल्लेख भी करे, जिसका कि वह लेख है।

(6) पत्रकार अपनी सूचना को ईमानदारी से प्रकाशित करने का अधिकार मांगेगा और हर समय न्याय के प्रति ईमानदार तथा आदरयुक्त होगा। पत्रकार झूठे बहानों से कोई सूचना प्राप्त नहीं करेगा और न किसी ने विश्वास के साथ जो बतायी है उस विश्वास को भंग करेगा।

(7) पत्रकार किसी सार्वजनिक या निजी उद्योग से जहां पर पत्रकार की हैसियत से उसके प्रवाह या सम्पर्कों का प्रयोग हो सके, धन स्वीकार नहीं करेगा।

(8) पत्रकार किसी सार्वजनिक या निजी विज्ञापनों के लिए लिखे गये लेखों पर अपने हस्ताक्षर नहीं करेगा।

(9) पत्रकार दूसरे के लेखों या समाचारों की चोरी नहीं करेगा।

(10) पत्रकार अपने किसी साथी की नौकरी को लेने का प्रयास नहीं करेगा और न उससे कम आकर्षक शर्तों पर काम करना प्रस्तावित कर उसे नौकरी से बर्खास्त करेगा।

(11) पत्रकार अपनी सूचना के सूत्रों को नहीं बतायेगा।

(12) पत्रकार अपने लिए या किसी दूसरे के हितों के लिए प्रेस की स्वाधीनता का दुरुपयोग नहीं करेगा। पत्रकार अपनी भूमिका को पुलिस की भूमिका के समान नहीं मानेगा।

उक्त के अतिरिक्त वहां यह भी प्रावधान है कि प्रकाशित सामग्री से यदि किसी का अहित होता है तो वह मुकदमा चला सकता है। मुकदमा समाचार पत्र के निदेशक के विरुद्ध चलाया जायेगा तथा लेखक/पत्रकार को सहयोगी अपराधी स्वीकार किया जायेगा।

आचार संहिता के अनुसार वहां का पत्रकार अपने समाचार के स्त्रोत बताने के लिए बाध्य नहीं। लेकिन 29 मार्च 1935 के पत्रकार कानून के अनुसार समाचार स्त्रोत जानने को उन्हें बाध्य कर सकता है।

इसी प्रकार स्वीडन में पत्रों की स्वाधीनता से संबंधित अधिनियम हैं जिसके अनुसार उन्हें न केवल अभिव्यक्ति की बल्कि सूचना इकट्ठी करने का भी हक है लेकिन इसी अधिनियम के सातवें अध्याय में कुछ ऐसे अपराध बताये गये है जो प्रेस की स्वाधीनता के विरुद्ध अपराध हैं, जैसे, राजद्रोह या राज्य के साथ विश्वासघात, राजा या किसी शाही परिवार के किसी व्यक्ति की मानहानि। झूठी अफवाहे फैलाना, देश की सुरक्षा को खतरा पहुंचाने वाले समाचार देना तथा इससे मिलते जुलते समाचार। इसके अतिरिक्त किसी विशेष जाति, वर्ण, राष्ट्र या विशेष धार्मिक समुदाय के लोगों के विरुद्ध घृणा फैलाना उन्हें डराना आदि भी दण्डनीय अपराध है। स्वीडन में भी उसी व्यक्ति के विरुद्ध इन अपराधों के लिए मुकदमा चलाया जा सकता है जिसका नाम न्याय मंत्रालय में उस पत्र के संपादक के रूप मे दर्ज होता है।

स्वीडन में समाचारों को एकत्र करने की व्यवस्था 1766 से है। 1949 में जब स्वीडन के संविधान में संशोधन किया गया तब प्रेस की स्वाधीनता को अति महत्वपूर्ण बना दिया गया। इसके अनुसार जहां पत्रकारों को अधिकार दिये गये वहां उन पर दण्ड की व्यवस्था भी की गई। स्वीडन में भी एक आचार संहिता है जिसका निर्माण राष्ट्रीय प्रैस क्लब ने किया है। आचार संहिता की भूमिका में सभी स्त्री/पुरुष पत्रकारों से यही प्रार्थना की गई है कि अच्छे अखबारी चलन के इन नियमों पर चलें तथा सदैव उनका आचरण करें। नियमों में यह भी कहा गया है कि उपयुक्त शीर्षक दिये जायें। शीर्षक भ्रम पैदा करने वाले न हों। कई-कई बार शीर्षक भ्रमात्मक होते है जिससे सनसनी पैदा होती है। आपने देखा होगा।

कई बार ऐसे शीर्षकों के आधार पर समाचार पत्र पढ़ता है तो वह शीर्षक से या तो तालमेल नहीं खाती या भ्रम पैदा करती है। शीर्ष होगा "रेखा ने आत्महत्या कर ली" हॉकर चिल्ला-चिल्ला कर कहेगा रेखा ने आत्महत्या कर ली आज की ताजा खबर, आज की ताजा खबर। लेकिन जब खबर पढ़ेंगे तो निकलेगा कि झुग्गी झोपड़ी निवासी तीस वर्षीय रेखा ने रेल की पटरी पर दम तोड़ दिया।"

इसी प्रकार जर्मनी में वर्ष 1981 में पास किये एक कानून के अनुसार ऐसी पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएं या छायाचित्र नहीं छापने चाहिये जो अश्लील हों तथा जिससे हिंसा भड़क सकती हो। इस प्रकार के प्रकाशनों की जांच एक मण्डल करेगा। कोई मण्डल या व्यवस्था पत्रकार पर नियंत्रण करे उससे सार्थक है पत्रकार का स्वयं नियंत्रक होना। यदि पत्रकार अपना दायित्व स्वयं निभाये और पूरी इमानदारी से निभाये तो उस पर कोई भी आचार संहिता या निरीक्षण की आवश्यकता नहीं। सभी पत्र और पत्रकार एक से नहीं होते। कुछ पत्रकार नैतिक मूल्यों से गिर कर कार्य करते है। जिसके लिए उनके संपादकों को खेद व्यक्त करना पड़ता है और कभी कभी गैर जिम्मेदार ढंग से दिये गये समाचार के लिए पत्रकार को नौकरी से भी हाथ धोना पड़ता है। खैर यह अलग मसला है मालिक स्वयं संपादक है या संपादक को मालिक द्वारा नियुक्त किया गया है। पत्रकारों के दायित्वों के बारे में बात करते हुए पंडित जवाहर लाल नेहरू जी का यह वक्तव्य, जो उन्होंने 13 अगस्त 1954 को भारतीय समाचार पत्र सम्मेलन में दिया। मैं यहां बताना चाहूंगी—

"स्वाधीनता के साथ-साथ उत्तरदायित्व भी हमेशा होता है। स्वाधीनता के साथ हमेशा एक शर्त होती है, एक दायित्व होता है कि क्या ऐसा लिखना राष्ट्र की स्वाधीनता के हित में है या एक समूह की स्वाधीनता के हित में है, या पत्रकारिता की स्वाधीनता के हित में। इसलिए जब भी हम स्वाधीनता की बात करते हैं, हमें निर्विवाद उत्तरदायित्व पर भी विचार करना चाहिए। अगर स्वाधीनता के साथ उत्तरदायित्व की भावना न हो, तो स्वाधीनता धीरे-धीरे समाप्त हो जाती है यह राष्ट्र की स्वाधीनता के लिए भी उतना ही सही है; जितना यह पत्रों की स्वाधीनता के लिए या किसी अन्य समूह संगठन या व्यक्ति की स्वाधीनता के लिए।"

जहां जवाहर लाल जी ने स्वाधीनता के साथ उत्तरदायित्व की बात की वहां गणेश शंकर विद्यार्थी जी ने पत्रकार कैसा हो पर प्रकाश डाला। ----------पत्रकार कैसा हो इस सम्बन्ध में दो राय हैं। एक तो उसे सत्य या असत्य, न्याय या अन्याय के झगड़े में नहीं पड़ना चाहिए। दूसरी राय यह है कि पत्रकार की समाज के प्रति बड़ी जिम्मेदारी है। वह अपने विवेक के अनुसार अपने पाठकों को ठीक मार्ग पर ले जाता है. वह जो

लिखे, प्रमाण और परिणाम का विचार रखकर लिखे और अपनी गति-मति में सदैव शुद्ध और विवेकशील रहे। पैसा कमाना उसका ध्येय नहीं, लोकसेवा उसका ध्येय है। मैं अपने आपको दूसरी राय के पक्ष में ही खड़ा हुआ पाता है।"

जब पत्र या पत्रकार अपनी भूमिका सही नहीं निभाते तो उनपर नियंत्रण के लिए आचार संहिता की आवश्यकता पड़ती है। भारत जैसे देश में आज भी ऐसी कोई सख्त आचार संहिता नहीं है न ही आदर्श पत्रकार के लिए कोई नीति-बाबू राव विष्णु पराड़कर ने एक बार पत्रकार के कर्तव्यों के बारे में कहा था "समाज के जीवन में जिन प्रश्नों पर उचित निर्णय की आवश्यकता होती है और जिन निर्णयों पर समाज का जीवन अन्ततः निर्भर करता है, उनके बारे में जनता को उचित जानकारी प्रदान करना, उनके सम्बन्ध में जनमत का निर्माण और नेतृत्व करना, उस मत को प्रकट करना तथा उससे अधिक से अधिक लाभ जनता को पहुंचाना एक आदर्श पत्रकार का कर्तव्य है।..... सच्चे पत्रकार के लिए पत्रकारिता केवल कला या जीविकोपार्जन का साधन मात्र नहीं होना चाहिए बल्कि वह कर्तव्य साधन की एक पुनीत वृत्ति भी होना चाहिए।"

जब यह पूछा जाये कि आचार संहिता लागू करना क्यों जरूरी है तो मैं यह कहूंगी- जब समाचारपत्र अपने पत्रों की बिक्री में वृद्धि के लिए ऐसे समाचार दे जिससे समाज में या देश में दुर्भावना फैले, या पत्रों की बिक्री बढ़ाने के लिए पीत पत्रकारिता का आश्रय लेकर व्यक्ति विशेष या संस्था विशेष की बुराई से दुष्परिणाम सामने आने लगें तो पत्रों पर नियंत्रण (किसी हद तक) जरूरी है।

आज का समाचार उद्योग अर्थ कमाने का साधन अधिक है और जो लोग इसे केवल सार्वजनिक सेवा न मानकर अपनी अर्थ सिद्धि चाहते हैं उन समाचार पत्रों के संपादकों को संपादन का हक नहीं होना चाहिये। खैर हम इस विवाद में अधिक नहीं पड़ते इन संगठनों में आधारभूत परिवर्तनों की आवश्यकता है जिस पर विचार करना होगा। जिन दिनों बोफोर्स काण्ड या हर्षद मेहता काण्ड की सुर्खियां रही अखबारों की संख्या में वृद्धि हुई। इसमें भी भेड़चाल रहती है, दुख का विषय है। पत्रिकारिता में कौन लोग आएं इस पर भी सोचना होगा। कोई भी धनी व्यक्ति समाचारपत्र का संपादक हो सकता है, कोई व्यक्ति जिसका कुछ दबदबा या सम्पर्क है वह पत्रकार हो जाता है भले ही यह संपादन या पत्रकारिता का क ख ग भी न जानता हो। पत्रकार की बात न भी की जाए तो कम से कम संपादक बनने का हक उसी का हो जिसने वर्षों पत्रकारिता की हो। आज पत्रों में वह सब लिखा जा रहा है जिसे स्वयं पत्रकार भी पसंद नहीं करते लेकिन जब एक समाचार पत्र में कुछ छपता है तो दूसरा पीछे नहीं रहना चाहता। जब हम अपने देश में आचार संहिता की बात करते हैं तो हमें उन देशों को आचार संहिता की विशेष बातें सामने लानी होगी। ऊपर हमने फ्रांसीसी आचार संहिता की चर्चा की है। आईये संक्षेप में संयुक्त राष्ट्र संघ में अपनायी गयी आचार संहिता पर भी ध्यान दिया जाये जो इस प्रकार है—

(1) चूंकि पत्रकारिता जनमत के निर्माण के लिए एक प्राथमिक उपकरण है। इसलिए पत्रकारों का यह कर्तव्य है कि वह इसे हक ट्रस्ट या दायित्व समझें और जनहित की सेवा तथा रक्षा के लिए हमेशा तैयार व इच्छुक हो।

(2) अपने कर्तव्य का पालन करते समय पत्रकार मुलभूत मानव और सामाजिक अधिकारों को उचित महत्व देंगे और समाचारों की रिपोर्ट देते समय या उन पर टिप्पणी करते समय सद्भाव और न्यायप्रियता को धन्धे की आवश्यक जिम्मेदारी के रूप में स्वीकार करेंगे।

(3) समाचारों और तथ्यों के ईमानदारी से संग्रह करने और प्रकाशन करने की स्वाधीनता तथा उचित टिप्पणी और आलोचना करने का अधिकार ऐसे सिद्धांत है जिन्हें प्रत्येक पत्रकार को हमेशा सुरक्षित रखना चाहिए।

(4) पत्रकार इस बात का प्रयास करेंगे कि जो समाचार प्रसारित किया जा रहा है वह तथ्य की दृष्टि सही है। किसी तथ्य को उल्टा सीधा कर प्रकट नहीं किया जायेगा और न किसी आवश्यक तथ्य को दबाया जायेगा कोई ऐसी सूचना जिसके बारे में यह ज्ञान हो कि यह झूठी है या यह विश्वास न हो कि यह सच्ची है प्रकाशित नहीं की जायेगी।

(5) सभी सूचनाओं और प्रकाशित टिप्पणियों के लिए दायित्व स्वीकार किया जायेगा। यदि दायित्व स्वीकार नहीं किया जा रहा है तो यह पहले से ही स्पष्ट रूप से प्रकट कर दिया जायेगा।

(6) पत्रकार उन समाचारों और टिप्पणियों में जिनसे तनाव बढ़ता है और हिंसा को प्रोत्साहन मिल सकता है उचित नियंत्रण रखेंगे।

(7) जो विश्वास प्रकट किया गया है उसका हमेशा आदर किया जायेगा और धंधे की गोपनीयता की रक्षा की जायेगी। पर इसे संहिता का हनन नहीं माना जायेगा यदि प्रैस परिषद या न्यायालयों के सामने किसी प्रश्न के उठने पर सूचना का स्रोत बता दिया जायेगा।

(8) पत्रकार अपने पेशेवर आचरण को निजी हितों से प्रभावित नहीं होने देंगे।

(9) कोई भी समाचार जो अशुद्ध पाया जायेगा और कोई भी टिप्पणी जो अशुद्ध समाचारों के आधार पर होगी उसका स्वेच्छा से सुधार कर दिया जायेगा यदि किन्हीं खास प्रश्नों पर कोई रिपोर्ट झूठी या अशुद्ध है तो उसका शुद्धिकरण या प्रतिवाद को उचित प्रकाशन देना अनिवार्य होगा।

(10) सभी व्यक्ति जो समाचारों के संग्रह सम्प्रेषण और वितरण और उन पर टिप्पणी करने के काम पर लगे हुए अपने धंधे की निष्ठा और गरिमा में पूरा विश्वास रखेंगे। वे ऐसे ही काम किसी को सौंपेंगे या किसी से स्वीकार करेंगे जो इस निष्ठा और गरिमा के अनुकूल हो, और वे अपनी स्थिति का शोषण होने से बचेंगे।

(11) इससे अधिक कोई नामाकूल बात नहीं है कि एक पत्रकार किसी समाचार टिप्पणी को प्रकाशित करने या न प्रकाशित करने के लिए किसी रिश्वत या प्रलोभन की मांग करें।

(12) समाचारपत्रों में निजी विवादों को जारी रखना जब कोई सार्वजनिक मुद्दा न हो, पत्रकारिता की परम्परा विरोधी है और धंधे की गरिमा के लिए अपमानजनक है।

(13) यह पत्रकारिता के धंधे के विपरीत है कि समाचारपत्रों में निजी व्यक्तियों के व्यक्तिगत जीवन सम्बन्धी अफवाहों या गप्प-शप को प्रचारित किया जाये। यदि व्यक्तियों सम्बन्धी समाचार पुष्टि भी किये जा सकते हैं तो भी उन्हें तब तक प्रकाशित नहीं किया जायेगा जब तक कि उनका प्रकाशन जनहित में न हो।

(14) दूसरे की निंदा और निराधार आरोप लगाना धंधे सम्बन्धी गंभीर अपराध है।

(15) समाचारों या विचारों की चोरी हुई तो एक गंभीर अपराध है।

(16) समाचार या चित्रों को प्राप्त करते समय संवादाता और प्रेस फोटोग्राफर ऐसा कुछ नहीं करेंगे जिसके कारण निर्दोष, किसी की मृत्यु से दुखी या अन्य प्रकार से तकलीफ में पड़े हुए लोगों को कष्ट होगा या नीचा देखना पड़ेगा।

प्रथम प्रेस आयोग ने विभिन्न आचार संहितायों को देखा और एक अखिल भारतीय प्रैस परिषद की स्थापना की सिफारिश की ताकि समाचार पत्र ऊंचे मानदण्ड स्थापित कर सकें तथा कर्तव्य और अधिकारों को उचित बढ़ावा भी दें।

प्रथम प्रैस आयोगः—

भारतीय श्रमजीवी पत्रकार संघ ने 12 व 13 अप्रैल, 1952 को कलकत्ता अधिवेशन में भारत में समाचार पत्रों की वर्तमान दशा जानने और भविष्य के लिए दिशा देने के उद्देश्य से प्रैस आयोग की स्थापना की मांग की। 23 सितम्बर, 1952 को सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय ने प्रेस आयोग की नियुक्ति के लिए एक विज्ञप्ति जारी की । 3 अक्तूबर, 1952 को इसकी विविधवत घोषणा हुई। यह प्रेस आयोग जांच कानून, 1952 धारा 3 (एल॰एक्स॰ 1952) के अन्तर्गत स्थापित हुआ।

भारत सरकार ने प्रथम प्रेस आयोग के कुछ मुख्य सुझावों को स्वीकार कर लिया। ये सुझाव इस प्रकार हैं:—

1. समाचार पत्रों के रजिस्ट्रार का कार्यालय जुलाई, 1956 में स्थापित किया गया। प्रेस रजिस्ट्रार के माध्यम से अखबारी कागज का वितरण होने लगा। जुलाई से दिसम्बर, 1956 की प्रथम प्रेस रिपोर्ट 30 अप्रैल 1957 को प्रस्तुत की गयी।

2. "प्रेस परिषद" की स्थापना प्रेस आयोग का महत्वपूर्ण सुझाव था। सन् 1965 में प्रेस परिषद कानून पास हुआ और 4 जुलाई, 1966 को प्रेस परिषद का गठन किया गया।

3. 20 दिसम्बर 1955 से श्रमजीवी पत्रकार कानून 1965 लागू किया गया। इस कानून के अन्तर्गत वेतन बोर्ड स्थापित हुए। पत्रकारों के काम के घंटे, वेतनमान अन्य सेवा शर्तों आदि का नियमन हुआ। सन 1957 और 1960 में सेवा नियम बने और उनमें संशोधन हुए।

4. 22 सितम्बर, 1962 को प्रेस सलाहकार समिति का गठन किया गया। अपनी अवधि के दो वर्ष पूरा करने पर सितम्बर, 1964 में वह समाप्त कर दी गई।

5. भारत सरकार ने सन् 1956 में पृष्ठानुसार मूल्य नियंत्रण नियम जारी किया। पूना से प्रकाशित "सकाल" समूह के पत्रों की ओर से एक नियम के विरुद्ध सन 1960 में याचिका प्रस्तुत की गयी। फलस्वरूप 25 सितम्बर 1961 को सर्वोच्च न्यायालय ने उसे अमान्य ठहराया अतः सरकार ने "पृष्ठानुसार मूल्य नियंत्रण नियम" वापस ले लिया।

6. छोटे समाचार पत्रों के विकास और उनकी स्थिति की जांच के लिए भारत सरकार ने आर॰ आर॰ दिवाकर की अध्यक्षता में एक जांच समिति नियुक्त की। उक्त समिति ने 9 मार्च, 1966 को संसद में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। इसने सिफारिश की पृष्ठानुसार मूल्य निधारण को पुनः लागू किया जाए। छोटे पत्रों को प्रोत्साहन देने के लिए वार्षिक पुरस्कार वितरण की व्यवस्था हो। समिति की यह भी सिफारिश की कि छोटे पत्रों को सजावटी विज्ञापनों का 50 प्रतिशत भाग दिया जाना चाहिए।

भारत में प्रेस की स्थिति पर पहली बार अध्ययन व उसका विश्लेषण प्रथम प्रेस आयोग के गठन के कारण सम्भव हो सका। आयोग ने जो संस्तुतियां की थी वह भारतीय पत्रकारिता की दृष्टि से महत्वपूर्ण थी। भारत सरकार ने आयोग की कुछ ही सिफारिशें स्वीकार कीं और कुछ पर अपेक्षित ध्यान नहीं दिया।

प्रथम प्रेस आयोग की सिफारिश के बाद जून 1956 में संसद में एक विधेयक 12 नवम्बर 1956 को स्वीकार किया। 4 जुलाई 1966 को प्रथम भारतीय प्रेस परिषद की स्थापना हुई। यह 1975 तक चली तथा बाद में भारतीय प्रेस पुनर्गठन के लिए प्रेस परिषद कानून 1978 बना जो इस प्रकार थाः—

प्रेस परिषद 1 अध्यक्ष तथा 28 सदस्यों को मिला कार गठित की जाती है। अध्यक्ष के मनोनयन के लिए गठित समिति के सदस्यों में राज्य सभा के सभापति, लोकसभा के अध्यक्ष तथा परिषद के सदस्यों को रखा गया है। अन्य 28 सदस्यों में विभिन्न वर्गों के उचित प्रतिनिधित्व हेतु इस प्रकार की रूप रेखा तैयार की गयी है—

1. 13 सदस्य श्रमजीवी पत्रकरों में से जिसमें 6 समाचार पत्रों के सम्पादको से तथा 7 सम्पादकों से भिन्न श्रमजीवी पत्रकार होंगे।

2. 6 सदस्य समाचार पत्र प्रबन्ध या व्यवसाय में रत व्यक्तियों में से।

3. एक सदस्य समाचार समितियों से संबद्ध व्यक्तियों में से।

4. तीन सदस्य शिक्षा और विज्ञान, कानून, साहित्य संस्कृति आदि क्षेत्रों में से। इनमें एक विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, एक बार कोंन्सिल तथा एक साहित्य अकादमी में से।

5. पांच सदस्य संसद में से चुने जाते हैं। जिनमें से तीन का मनोनयन लोकसभा अध्यक्ष द्वारा तथा दो का राज्य सभा द्वारा होता है।

प्रेस परिषद अधिनियम 1978 के उद्देश्यः—

1. समाचार पत्र और समाचार समितियों की स्वतन्त्रता को कायम रखना।

2. समाचार पत्रों, समाचार समितियों तथा पत्रकारों के उच्च स्तर के अनुरूप आचार संहिता तैयार करना।

3. पत्रकारिता व्यवसाय के संबद्ध व्यक्तियों में उत्तरदायित्व तथा जन सेवा की भावना को विकतिस करना।

4. समाचार पत्रों, समाचार समितियों तथा पत्रकारों की ओर से जनरूचि के स्तर को बनाये रखने का विश्वास दिलाना तथा नागरिकता के अधिकारों व उत्तरदायित्वों की भावना को पोषित करना।

5. महत्वपूर्ण तथा जनरूचि के समाचारों के प्रेषण पर सम्भावित अवरोधों पर दृष्टि रखना।

6. भारतीय समाचार पत्र तथा समाचार समिति को मिलने वाली विदेशी सहायता का मूल्यांकन करना।

7. विदेशी समाचार पत्रों जिनमें दूतावासों तथा विदेशी प्रतिनिधि संस्थाओं आदि द्वारा निकाले गये पत्र भी सम्मिलित हैं के प्रसार तथा प्रभाग का अध्ययन करना।

8. समाचार पत्रों समाचार समितियों के उत्पादन, प्रकाशन में संलग्न वर्गों के व्यक्तियों के मध्य समन्वय स्थापित करना।

परिषद को उन शिकायतों पर विचार करने का पूरा अधिकार है, जिससे यह प्रतीत होता है कि समाचार पत्र, समाचार समिति, सम्पादक अथवा पत्रकार ने आचार संहिता के विरुद्ध अथवा ऐसा कार्य किया हो जिससे इस व्यवसाय की प्रतिष्ठा व पवित्रता पर पर आंच आयी हो। आरोप सही पाये जाने पर परिषद पक्ष विपक्ष को दण्डित कर सकती है। न्यायालय में विचाराधीन मामलों पर परिषद को विचार करने का अधिकार नहीं है।

प्रेस परिषद में शिकायत दर्ज करना:-

कोई भी व्यक्ति किसी समाचार पत्र के विरूद्ध अथवा प्रेस की स्वतंत्रता को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करने वाले लोगों के खिलाफ प्रेस परिषद में अपनी शिकायत दर्ज कर सकता है। शिकायत प्रस्तुत करने से पूर्व यह आवश्यक है कि वह सर्वप्रथम समाचार पत्र के सम्पादको, जो इससे संबद्ध हो, का ध्यान इस ओर आकृष्ट करे।

शिकायत करने वाले को अपनी शिकायत में उस समाचाव-पत्र सम्पादक अथवा पत्रकार का नाम तथा पता लिखना चाहिए जिसके विरूद्ध शिकायत की गयी हो। शिकायत के सथ प्रकाशित समाचार की मूल कतरनें भी भेजनी चाहिए। उसे यह भी लिखना चाहिए कि शिकायती समाचार अथवा अनुच्छेद किस प्रकार आपत्तिजनक है।

प्रेस परिषद किसी ऐसे मामले पर विचार नहीं करती जो न्यायालय के विचाराधीन हो। शिकायतकर्ता को घोषणा करनी होगी कि "अपनी सम्पूर्ण जानकारी तथा विश्वास के अनुसार मैंने परिषद के समक्ष सम्पूर्ण तथ्य प्रस्तुत कर दिए हैं तथा शिकायत में कथित किसी विषय के सम्बन्धी में किसी न्यायालय में कोई मामला विचाराधीन नहीं है।" इस घोषणा के साथ-साथ यह घोषणा भी करनी आवश्यक है कि —"परिषद द्वारा जांच की अवधि में शिकायत में कथित मामला न्यायालय की किसी कार्यवाही का विषय बन जाता है तो मैं इसकी सूचना परिषद को दूंगा।

उक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि समाचार पत्रों के लिए आचार संहिता की आवश्यकता है लेकिन आवश्यकता आत्मनियामक हो न कि सरकार द्वारा नियंत्रित। मिली हुई स्वतंत्रता का सदुपयोग ही पत्रकारिता है न कि पत्रकारिता के क्षेत्र में आकर स्वार्थ या आपसी हितों को ध्यान में रखकर स्वतंत्रता का दुरूपयोग करना। □

पृष्ठ 12 का शोषांश

जिन्हें अच्छी हिन्दी आती है वे कभी-कभी उन लोगों की कठिनाई नहीं समझ पाते जिन्होंने अभी हाल में थोड़ी बहुत हिन्दी सीखी है। ऐसे लोगों को इन नवशिक्षितों की कठिनाई का पूरा ध्यान रखना चाहिए और अपने पांडित्य के प्रदर्शन का लोभ संवृत करना चाहिए।

राजभाषा के संबंध में इस समय अनिश्चितता की कोई स्थिति है ही नहीं, कारण हमारे सामने इस संदर्भ में जो सबसे ठोस और आधारभूत वस्तु है वह है संसदीय राजभाषा समिति द्वारा राष्ट्रपति जी के समक्ष प्रस्तुत चार प्रतिवेदनों पर राष्ट्रपति द्वारा छानबीन के बाद जारी किया गया आदेश।

इन आदेशों में भाषा, शब्दावली और अनुवाद व्यवस्था का आदेश प्रथम प्रतिवेदन के आधार पर है तथा दूसरे में यांत्रिक सुविधाओं एवं प्रशिक्षण को लिया गया है। प्रतिवेदन और आदेश के तीसरे खंड का विषय भारतीय परीक्षाओं, साक्षात्कार, विभागीय प्रशिक्षण में हिन्दी माध्यम एवं जिन्हें हिन्दी का ज्ञान हीं है उनसे संबंधित विषय लिए गए हैं। संसदीय राजभाषा समिति के चौथे प्रतिवेदन में विस्तार पूर्वक निरीक्षणों के आधार पर हिन्दी के प्रगामी प्रयोग बढ़ाने के संबंध में समीक्षा की गई है। राष्ट्रपति ने इस पर भी अपने आदेश दिए है।

भारत सरकार का सारा कार्य राष्ट्रपति के आदेश से चलता है, जिसका पालन हर अधिकारी पदाधिकारी के लिए आवश्यक है इसका परिवेश मंत्री से लेकर संतरी तक और सचिव से लेकर आदेशपाल तक है। अतः राष्ट्रपति के आदेशों का उल्लंघन संज्ञेय अपराध है।

राजभाषा के कार्यों को दिशा प्रदान करने की दृष्टि से संसदीय राजभाषा समिति का निरीक्षण एवं उसके कार्यालय द्वारा जारी प्रश्नावली का भी विशेष महत्व है। उससे पता चल जाता है कि कार्य की गति क्या है और कौन सा कार्यालय, मंत्रालय, उपक्रम अथवा संस्थान कितना पानी में है। यहां गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग द्वारा जारी वार्षिक कार्यक्रमों की चर्चा आवश्यक है, जिसमें पूरे वर्ष का कार्यक्रम निर्धारित किया जाता है। इसे लागू करने का भार विभाग के अध्यक्ष को सौंपा गया है।

ये सारी बातें अपनी जगह, संवैधानिक उपाख्यान, अधिनियम, नियम, आदेश निर्देश और कार्यक्रम का औचित्य दो शब्दों में सिमटकर रह जाता है—निष्ठा और संकल्प। जब तक यह बोध लोगों के अंदर नहीं जागेगा तब तक भय, डांट-फटकार, आदेश-निर्देश औपचारिकता मात्र रहेगी। जरूरत है आज हिन्दी को महात्मा गांधी की निष्ठा तथा संकल्प की—जिसे सामने रखकर हम राजभाषा को व्यावहारिक रूप से राष्ट्र की भाषा साबित कर सकें।

इन बातों की चर्चा यहीं समाप्त करते हुए में भारतेन्दु बाबू के शब्दों में—यही कहना चाहता हूं—

"निज भाषा उन्नति अहै
सब उन्नति के मूल"

आज भी यह कथन संदर्भ से परे नहीं है।

□

हिंदी की भूमिका और ग्रामीण विकास में इलेक्ट्रॉनिकी

—माला गुप्ता*

"अगर हमको जरूरत है मानव कल्याण की,
रोटी, कपड़ा, स्वास्थ्य और मकान की,
आवश्यक है दिल की मुस्कान भी,
तो इन सबके लिए हमें जरूरत है इलेक्ट्रॉन की"।

भारत सदियों से कृषि प्रधान देश रहा है। यहां सत्तर से भी अधिक प्रतिशत आबदी कृषि और सम्बद्ध आजीविकाओं पर निर्भर है। कुल राष्ट्रीय आय का लगभग आधा हिस्सा कृषि से प्राप्त होता है। स्वाधीनता के बाद दशकों में भारतीय कृषि ने उल्लेखनीय और आशातीत सफलताएं प्राप्त की हैं।

अभी हाल ही में सम्पन्न 1991 जनसंख्या सर्वेक्षण के अनुसार भारत की जनसंख्या 843,930,861 है। जनसंख्या में 1981 की तुलना में 23.50 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों में भी तुलनात्मक वैसी ही वृद्धि हुई है।

19 वीं शताब्दी और 20 वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जहां कृषि उत्पादनों में वृद्धि दर लगभग 2 प्रतिशत पर थमी हुई थी, स्वातंत्रयोत्तर वर्षों में इस क्षेत्र में लगभग 6 प्रतिशत की प्रशंसनीय वृद्धि दर्ज की है। इसका श्रेय मुख्यतः उन्नत किस्म के बीजों और रासायनिक खादों के सम्यक प्रयोग को जाता है। परन्तु राष्ट्र के अनेक भू-भाग अभी भी बहुचर्चित हरित क्रंति से वंचित हैं। कोटि-कोटि जनता अभी भी निर्धनता में जीने को विवश है। इतनी प्रगति से इलेक्ट्रानिकी का मत्वपूर्ण योगदान हो सकता है।

इलेक्ट्रिानिकी जैसे आधुनिक विषय में ज्ञान का प्रसार केवल एक विशिष्ट समुदाय तक ही सीमित रह जाता है। खासकर शहरों में और वह भी अंग्रेजी माध्यम की जानकारी रखने रखने वालों तक, जबकि देश का हर नागरिक इस ज्ञान को प्राप्त करने का हकदार है। खास कर ग्रामीण भारत में इसकी जानकारी , प्रचार-प्रसार की विशेष आवश्यकता है और वह भी हिन्दी के माध्यम से। जब तक यह जानकारी सभी लोगों तक नहीं पहुंचती, तब तक इसका कोई फायदा नहीं है। इलेक्ट्रानिकी की प्रसार के लिए हिन्दी अति आवश्यक है जिससे यह जन-जन तक फैल सकें। हिन्दी आज देश की एक ऐसी भाषा बन चुकी है जो देश के हर कोने में जनसंचार का सूत्र उपलब्ध कराती है।

इलेक्ट्रानिकी के अनेक अनुप्रयोगों का हमारे जीवन (शहरी एवं ग्रामीण बराबर तौर पर) से गहरा सम्बद्ध है और जिनसे हमें जीवन स्तर को ऊंचा उठाने में काफी मदद मिल सकती है। इलेक्ट्रानिकी की जानकारी के लिए एक क्रान्तिकारी आंदोलन लाने की आवश्यकता है। जिससे विशेषकर ग्रामीण जगत भी लाभान्वित हो सके।

*डी-1ए/115-जनकपुरी, नई दिल्ली-58

आज विश्व में इलेक्ट्रानिकी में काफी विकास हुआ है। भारत में ही सराहनीय प्रगति हुई है। पर यह खासकर शहरी क्षेत्र में सीमित है—कारण कि मुख्य साधन अंग्रेजी है। भाषा के कारण ही देहातों में इसका प्रसार नगण्य सा हुआ है। ग्रामीण भारत की अधिकांश जनता इससे अपरिचित सी है। अतः इसका फायदा भी उन्हें नहीं मिल पा रहा है। जब तह हिन्दी माध्यम नहीं अपनाया जाता, इसका पूर्ण लाभ मिलना सम्भव नहीं है। उसके बाद ही नई-नई विचराधाराएं भी आने लगेंगी व नये-नये आविष्कार भी सम्भव हैं। ग्रामीण जनता से भी रचनात्मक सुझाव प्राप्त होंगे।

इलेक्ट्रानिकी से समाज का गहरा सम्बन्ध है। इस क्षेत्र में जो भी विकास हो रहा हैं, उनका लाभ समाज को किसी न किसी रूप में मिलता ही है। इसका हर क्षेत्र में हर पहलू का सामाजिक अनुप्रयोग (एप्लीकेशन) है। कृषि के क्षेत्र में भी उसके अनेकों सदुपयोग हैं। इससे एक ओर जहां उत्पादकता बढ़ रही है वहीं दूसरी ओर मनुष्य खुशहाल भी हो रहा है।

गांधी जी ने कहा था कि आंदोलन चाहे साईंस का हो या आजादी का जब तक गरीब से गरीब आदमी को उसका लाभ नहीं पहुनचता तक तक वह व्यर्थ है। जिस दृष्टि से हम देखें बढ़ती हुई आबादी और हमारे सीमित साधनों को देखते हुए समाज कल्याण के लिए हमें गांवों में, मुहल्लों से काम करने वालों एवं उत्पादन बढ़ाने वालों की सहयता पहल करनी है। इसी प्रक्रिया में इलेक्ट्रानिकी भी एक महत्वपूर्ण भाग है। किसानों, छोटे और लघु श्रमिकों,महिलाओं और छोटे उद्योग में लगे हुए बहुत से देशवासियों की प्रगति में इलेक्ट्रिानिकी काफी काम आ सकता है। शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी उसका महत्वपूर्ण योगदान है। इलेक्ट्रानिकी साधन इस सबसे मदद कर सकते हैं। इनके प्रयोग से न केवल सम्पत्ति की वृद्धि होती है बल्कि हमारे समाज का स्तर भी ऊंचा हो सकता है। कम्प्यूटरों के प्रयोग से कृषि एवं उद्योगों में भी उन्नति हो सकती है।

आधुनिक इलेक्ट्रानिकी उपकरणों व मशीनों का भारतीय कृषि में उपयोग हो रहा है। मिट्टी की आद्रता, मिट्टी में मौजूद तत्वों, सूक्ष्म तत्वों व घुलनशील लवनों की जानकारी, अनाज भण्डारों को ज्यादा कारगर बनाने के लिए अनाज में आद्रता का मापन, भूमि की अमलीयता व क्षारीयता का आकलन इत्यादि के लिए उपयोग में लाए जा रहे मापक यन्त्रों व उपकरणों द्वारा इलेक्ट्रानिकी के अनेक प्रयोग इन क्षेत्रों में हो रहे हैं। इन क्षेत्रों पर इलेक्ट्रानिकी के सदुपयोग पर विशेष विशेष प्रकाश डाला है श्रीमती विजया अग्रवाल ने, जो कृषि अभियांत्रिकी महाविद्यालय, जवाहर लाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर

कार्यरत है। भविष्य में भी भारतीय किसान अपने कृषि कार्य में कम्प्यूटर पर आधारित इलेक्ट्रानिकी का अधिक उपयोग कर सकेंगे।

कृषि को एक विज्ञान का रूप देने के काफी क्रांति आई है। कम्प्यूटर, सुपर कम्प्यूटर व रोबोट आदि का जहां आज के आधुनिक इलेक्ट्रानिक युग में कई क्षेत्रों में प्रयोग हो रहा है, वहां कृषि भी अछूता नहीं है। प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में धीरे-धीरे इलेक्ट्रानिकी के उपयोग कृषि क्षेत्र में बढ़ रहे हैं। ऐसी कई उपकरणों व मशीनों का योगदान प्राप्त हो रहा है। खेतों में उर्वरकों की कितनी मात्रा दी जानी चाहिए तथा पौधे किस प्रकार की बीमारी व जीवाणु से ग्रस्त हैं। इन बातों का निर्धारण अब इलेक्ट्रानिकी उपकरणों द्वारा किया जाता है।

पानी का कृषि में महत्वपूर्ण योगदान है। अधिक उत्पादन के लिए जरूरी है कि पानी की उचित मात्रा बनी रहे। भूमि में आद्रता या नमी का आकलन करके जरूरी सिंचाई करना ही उचित होती है जिससे बरबादी भी न हों, अधिक पानी का जमाव भी न हो व ऊर्जा की भी बचत है। इलेक्ट्रानिकी आद्रता मापी से भूमि में उपस्थित आद्रता का सीधा आकलन किया जाता है। अप्रत्यक्ष रूप से इनफ्रारेड द्वारा खड़ी फसल का तापमान नापकर भी यह पता लगाया जाता है कि पौधों को पानी की आवश्यकता है या नहीं। इलेक्ट्रिकल रेजिस्टेंस के मापन से मिट्टी की आद्रता का मापन किया जाता सकता है।

अनाज के भण्डारण की महता सर्वविदित है। अनाज में नमी की मात्रा भण्डारण को काफी प्रभावित करती है। भण्डारण किया हुआ अनाज आड़े दिनों में काफी काम आता है। इसमें अनाज की नमी का मापन बहुत महत्वपूर्ण है। यदि अनाज सही आद्रता पर भण्डारित किया जाये तो भण्डार में होने वाले नुकसान और अनाज को खराब होने से बचाया जा सकता है। माइक्रोवेविव पामन पद्धति या इम्पिउन्स पामन पर आधारित इलेक्ट्रानिकी आद्रता मापक यन्त्र अनाज की नमी के आकलन में काम आ रहे हैं।

पी०एच० मापी से मिट्टी की अम्लीय या क्षारीय पद्धति का पता चलता है। इस जानकारी से मिट्टी के गुणों को सुधारने में सहायता मिलती है। यदि मिट्टी का पी०एच० 5 और 9 के बीच न हो तो भूमि कृषि योग्य नहीं होती है। पी०एच० मापन इलेक्ट्रानिकी विधि से अत्यन्त सरल हो गया है। मिट्टी में घुलनशील लवण कितनी मात्रा में है यह जानना भी अत्यन्त आवश्यक है। खारी भूमि कृषि उत्पादन के लिए अच्छी नहीं होती। सिंचाई के साधन बढ़ने व सिंचित पानी का ठीक से निकास न होने से यह समस्या बढ़ती जा रही है। इलेक्ट्रानिकी सर्किट पर आधारित कंडीक्टिवटी मापी मिट्टी में घुलनशील लवणों की मात्रा के आकलन के उपयोग में लायी जाती है।

नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटेशियम फसलों के पोषक तत्व हैं। क्लोरोमीटर फलेम फाटोमीटर व इस प्रकार के कुल अन्य इलेक्ट्रानिकी उपकरण मिट्टी के पोषक तत्वों व सूक्ष्म तत्वों के मापन के लिए उपयोग में लाए जाते हैं। इन उपकरणों से मिट्टी में कितनी मात्रा में पोषक तत्व है, यह जनकर पोषक तत्वों की जो कमी है वह उचित व आवश्यक मात्रा में उर्वरक देकर पूरी की जाती है।

अब ऐसे उपकरणों का विकास हो रहा है जिनसे किसान स्वयं ही अपने खेतों की मिट्टी का परीक्षण कर सकेंगे। यह उपकरण एक छोटे से ट्रांजिस्टर रीडियो के समान बैटरी चालित होंगे, इन उपकरणों को कहीं भी ले जाया जा सकता है।

माइक्रोप्रोसेसर तकनीक का उपयोग इस प्रकार से उपकरणों में अति सफलता से किया जा सकता है। इस प्रकार के विकास का प्रयास प्रयोगशाला स्तर पर चालू है। माइक्रोप्रोसेसर पर आधारित उपकरणों की यह विशेषता रहेगी कि केवल साफ्ट वेयर से ही ये उपकरण भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में उपयोग में लाये जाएंगे। इससे कृषि उत्पादकता बढ़ेगी जिसका लाभ कृषकों को मिलेगा और उनकी आर्थिक स्थिति सुधरेगी।

इनके अतिरिक्त कृषि से सम्बन्धित अनुसंधान में भी कई विशिष्ट प्रकार के इलेक्ट्रानिकी उपकरण यन्त्र उपयोग में लाये जाते हैं। जैसे-गैस क्रोमटोग्राफ, गैस एनालाइजर, न्यूक्लियर काउंटर, इलेक्ट्रान माइक्रोस्कोप, सोलर, रेडियेशन मीटर, एन०एम०आर० स्पेकट्रोमीटर इत्यादि।

कृषि का क्षेत्र कम्प्यूटर, माइक्रो कम्प्यूटर और निजी कम्प्यूटरों के उपयोग से वंचित नहीं रह पाया है। सांख्यिकी विश्लेषण, जानकारी का संकलन इत्यादि में कम्प्यूटरों का उपयोग कृषि क्षेत्र में भी धीरे-धीरे बढ़ रहा है।

भविष्य में देश के गांव-गांव में कम्प्यूटर टर्मिनल स्थापित होंगें जो देश के मुख्य कम्प्यूटर से जुड़े रहेंगे। इस दिशा में कार्य शुरू हो चुका है। किसान अपने ही गांव के कम्प्यूटर टर्मिनल से यह जानकारी प्राप्त कर सकेंगे कि उन्हें खेतों के बारे में कब ओर क्या करना है, कब और कितनी मात्रा में उर्वरक देना, कौन सी कीटनाशक दवाई का कितनी मात्रा में किस प्रकार उपयोग करना चाहिए, पौधों को बीमारी व कीड़ों से बचाने के लिए क्या करना है व कब और कितनी सिंचाई करनी है। यह इस प्रकार संभव होगा कि मुख्य कम्प्यूटर में मौसम सम्बन्धी दिन प्रतिदिन की जानकारी, बीमारी व कीड़ों के प्रकोप की जानकारी, खेतों में समय-समय पर किये गये मिट्टी परीक्षण पर आधारित मिट्टी के तत्वों की जानकारी, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक दवाइयों व सिंचाई के साधनों की क्षेत्रीय उपलब्धता आदि संग्रहीत रहेगी व मुख्य कम्प्यूटर इनका विश्लेषण करेगा। इस आधार पर किसान के किसी विशिष्ट खेत के लिए कब और क्या करना है, यह जानकारी गांव के कम्प्यूटर पर सहजता से उपलब्ध हो सकेगी।

भारतीय अर्थव्यवस्था के मूलभूत आधार कृषि के क्षेत्र में इलेक्ट्रानिकी का एक और भी महत्वपूर्ण उपयोग है-वह है सिंचाई का क्षेत्र। कृषि का उत्पादन मुख्य रूप में प्राकृतिक वर्षा एवं अन्य उपलब्ध सिंचाई साधनों पर निर्भर करता है। देश के पश्चिमी अर्दशुष्क एवं शुष्क क्षेत्रों में वर्षा अनियन्त्रित तथा अपर्याप्त होती है और समुचित जल स्त्रोतों के अभाव में सिंचाई सुविधाएं भी अति सीमित हैं। मरुस्थलीय क्षेत्रों में रेतीली भूमि की मन्द जल धारण क्षमता एवं अन्तः स्राव और वाष्पीकरण का आधिक्य सिंचाई की समस्या को और अधिक गम्भीर बना देता है। ऐसे क्षेत्रों में सिंचाई की नूतन निपात प्रणाली (ड्रिप इरीगेशन) समुन्नत सिंचाई परिणामों की ओर एक नया कदम है। इस प्रणाली पर गहनता से प्रकाश डाला है इलेक्ट्रानिकी एवं संचार विभाग, अभियांत्रिकी संकाय, जोधपुर विश्वविद्यालय के अध्यक्ष डा० पी०एं० तिवारी ने।

सिंचाई की इस विधि में पौधे की अनुमानित उपभोग दर अनुपात में उपलब्ध जल को जड़ क्षेत्र तक पहुंचा कर अनुकूलतम स्थिति प्राप्त की जाती है। कृषि अनुसंधानों द्वारा यह निष्कर्ष निकला है कि पौधे के जड़ क्षेत्र की मिट्टी में अनुकूलतम नमी की मात्रा रखने से पैदावार को बढ़ाया जा सकता है और दो फसलों के बीच के समय को कम किया जा सकता

है। अनुकूलतम ढंग से जल की उपयोगिता द्वारा फसल की अधिकतम पैदावार उपलब्ध कराने की एक इलेक्ट्रानिक नियन्त्रित विधि है-निर्यात सिंचाई प्रक्रिया (ड्रिप सिंचाई)। इस प्रणाली के अन्तर्गत इच्छित कृषि क्षेत्र में पौधों के जड़ क्षेत्र में नमी की अवस्था को इलेक्ट्रानिक द्वारा मॉनिटर करने के उद्देश्य से एक निश्चित संख्या में समुचित स्थितियों में नमी संवेदक लगाए जाते हैं। सिंचाई प्रक्रिया का समग्र नियंत्रण एक सूक्ष्म संसाधित (माइक्रोप्रोसेसर) द्वारा सम्पन्न होता है। इस प्रकार के मतांकन नयाचार (पोलिंग प्रोटोकोल) का पालन करते हुए नमी संवेदकों का निर्गम टी०डी०एम०ए० (टाड डिविजन मल्टीपल एक्सेस) ढंग से मुख्य सूक्ष्म नियंत्रक (मास्टर माइक्रो कन्ट्रोलर) द्वारा रेडियो प्रेषित (रेडियो ट्रांसमिटेड) होता है। नमी से संबंधित प्राप्त डेरा के आधार पर निर्मित सॉफ्टवेयर प्रोग्राम निष्पादित होकर सिंचाई पाइप जाल के सर्वामोटर द्वारा प्रचालित जल-बहाव-नियंत्रक वाल्वों का नियंत्रण करता है। इलैक्ट्रॉनिकी प्रणाली के प्रचालन के लिए कृषि क्षेत्र में ही स्थित सौर-सेलों द्वारा ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है।

इस प्रकार की अनुकूलतम प्रक्रिया द्वारा फसल की अधिक पैदावार के अतिरिक्त वर्ष में फसलों की संख्या को बढ़ाया जा सकता है। यदि यह प्रणाली सहकारी आधार पर लगाई जाए तो आर्थिक दृष्टिकोण से स्वीकार्य प्रतिफल की डर देने में समर्थ है। अनुमानतः एक माइक्रोप्रोसेसर आसानी से लगभग 300 हेक्टेयर भूमि में सिंचाई का नियंत्रण कर सकता है। इसका तात्पर्य होगा कि इलेक्ट्रानिक नियंत्रण पर सामान्यतः निर्यात सिंचाई प्रणाली का 3 प्रतिशत से 5 प्रतिशत पर होगा। अतः कम पूंजी निवेश द्वारा निर्यात सिंचाई प्रक्रिया की उपयोगिता कइ गुना बढ़ाई जा सकती है।

भारत के बहुसंख्यक कृषक अशिक्षित हैं। अतः ऐसा आभास होता है कि सिंचाई के लिए इलेक्ट्रानिकी की उपयोगिता संदेहास्पद है। परन्तु ऐसा सोचना सही नहीं है। यह सत्य नहीं है। यद्यपि यह सत्य है कि निर्यात सिंचाई जैसी प्रणाली और इलेक्ट्रानिकी द्वारा उसका नियंत्रण एक विशेषज्ञ का कार्य है तथापि इस प्रणाली को भारत जैसे देश में भी कार्यान्वित करना सम्भव है। आरम्भ में कृषि के भागों का उचित विभाजन, पाइप जाल का विन्यास, मुख्य नियंत्रक वाल्वों की स्थापना आदि के लिए प्रशिक्षित टैक्नीशियन की आवश्यकता होगी। परन्तु बाद में इलेक्ट्रानिकी परिपथों की विश्वसनीयता के कारण टेक्नीशियन की अनुपस्थिति में भी सिंचाई नियंत्रण प्रणाली सुनियोजित ढंग से कार्य कर सकेगी। हां, हर फसल के आरम्भ में भी कृषक को टेक्नीशियन की सहायता की आवश्यकता पड़ सकती है, जिससे इलेक्ट्रानिकी प्रणाली का पूर्वायोजन सम्भव हो। प्रचलित न होने के कारण निर्यात सिंचाई प्रणाली की लागत कुछ अधिक है। इलेक्ट्रानिक नियंत्रण की सहायता से यह अधिक लाभप्रद होने पर प्रचलित हो सकती है।

इलेक्ट्रानिकी द्वारा नियन्त्रित इस तरह की प्रणाली से सिंचाई जल की कुल आवश्यकता आधी से भी कम हो सकती है। इससे जल पम्पों के प्रचालन के लिए आवश्यक ऊर्जा में कमी होगी और इस सम्भावना पर प्रयास हो सकता है कि जल-पम्पों के लिए भी सौर ऊर्जा का प्रयोग हो। प्रयुक्त इलेक्ट्रानिकी में थोड़ी भी अभिवृद्धि से इस प्रणाली को उपयोगी बनाया जा सकता है जिससे मौसम की विशेष प्रतिकूलता से फसलों की सुरक्षा की जा सके।

कृषि के क्षेत्र में इलेक्ट्रानिकी के कुछ और भी सदुपयोग हैं। दुग्ध विश्लेषक (मिल्क एनेलाइजर), मृदा परीक्षण यन्त्र आदि जैसे कई इलेक्ट्रानिक उपकरण तैयार हो गए हैं। इस दिशा में और अधिक अनुसंधान तथा विकास कार्यों की जरूरत है। हमें ऐसे तकनीकों और साधनों की जरूरत है जिनके इस्तेमाल से कम से कम लागत पर अधिक उत्पादन हो और किसानों को अपनी जमीन से पूरी उपज प्राप्त हो सके। "केपार्ट" के महानिदेशक श्री आर राजामणी का आह्वान है कि इस क्षेत्र में काम कर रही संस्थाएं उनके संगठन की मदद ले सकती हैं। इस प्रकार के उपकरणों के माध्यम से ही इलेक्ट्रानिकी को किसानों तक पहुंचाना सम्भव हो सकेगा जिससे पूरा समाज लाभान्वित होगा।

ग्रामीण क्षेत्र के स्कूलों, कालेजों/विद्यालयों में भी कम्प्यूटर साक्षरता तथा अध्ययन (क्लास) परियोजना उतनी ही उपयोगी है जितनी शहरों में। इलेक्ट्रानिकी विभाग कम्प्यूटर शिक्षा विशेष ध्यान देना आया है और उसकी बढ़ोतरी के लिए कई परियोजनाओं को भी पता चला रहा है अथवा आर्थिक सहायता दे रहा है। "क्लास" यानि कि विद्यालयों के कम्प्यूटर साक्षरता तथा अध्ययन परियोजना का विस्तार ग्रामीण क्षेत्र में भी करने की उतनी ही आवश्यकता है।

ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा, मनोरंजन और जनसेवाओं में भी इलेक्ट्रानिक के अनेकानेक उपयोग हैं। विकास वैज्ञानिक शिक्षा की सभी विधाओं में हुआ है परन्तु यह सर्वविदित है कि विद्युत सम्बन्धी अविष्कारों जैसे ग्रामोफोन, टेलीग्राफ, रेडियो, कम्प्यूटर, टेलीविजन आदि ने सम्पूर्ण जगत को आश्चर्यचकित कर दिया है। ग्रामीण क्षेत्रों में भी उनका निरन्तर विस्तार हो रहा है।

इलेक्ट्रानिक की टाइम श्रव्य युक्ति शिक्षा का एक आधुनिक एवं अनिवार्य अंग बन गई है। औपचारिक, अनौपचारिक अथवा प्रौढ़ शिक्षा का ही क्षेत्र क्यों न हो, सभी क्षेत्रों में टेलीविजन एवं वी०सी०आर० का सर्वस्व है। टेलीविजन शिक्षा, मनोरंजन तथा जन सेवाओं का एक सशक्त माध्यम बन गया है। इनका ग्रामीण क्षेत्रो में दिन-प्रतिदिन विस्तार हो रहा है। शिक्षा के साथ-साथ मनोरंजन के साधन के रूप में भी टेलीविजन को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। कृषि दर्शन के अन्तर्गत एवं अन्य ऐसे कार्यक्रमों जैसे मौसम की भविष्यवाणी आदि द्वारा ग्रामीण भाइयों को नियमित रूप से शिक्षित किया जा रहा है।

दूरसंचार के क्षेत्र से ग्रामीण जनशक्ति में काफी विस्तार हुआ है। प्रकृति निर्मित विषमताओं को पाटने में दूरसंचार एक महान भूमिका अदा कर सकता है। जन-शिक्षा, औद्योगिकरण, लघु उद्योगों की ट्रेनिंग, दूरदर्शन परिपत्रों का विस्तार, यह सब दूरसंचार के विकास से ही सम्भव है। भारत के देहातों को दूरसंचार के नक्शे पर लाने का एक महान कार्य किया जाना है। 57 लाख गांवों में से केवल 50,000 में ही टेलीफोन सुविधा है, वे भी सार्वजनिक टेलीफोन। क्या इतने मात्र से ही हम किसी राष्ट्रीय परिपथ की बात कर सकते हैं? देहाती एक्सचेंजों के अभिकल्पन में काफी सीमित प्रगति हुई है। पिछले दशकों में दूरसंचार के क्षेत्र में जो प्रगति हुई है, वह अपर्याप्त है। हमें इसके विकास के लिए कुछ दूरगामी उपाय सोचने होंगे। वर्तमान सरकार ने गांवों में प्रत्येक ब्लाक में टेलीफोन व्यवस्था करके उन्हें मुख्य धारा से जोड़ देने की घोषणा की है एवं प्रयत्नशील भी है।

भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) के विकास तथा शिक्षा-संचार इकाई ने "संचार-क्रांति" विषय पर एक अध्ययन किया था। उनके इस अध्ययन के अनुसार वीडियो टेक्नालाजी का प्रभाव इतना उल्लेखनीय है कि यह आज ऐसे दूर-दराज के क्षेत्रों में पहुंच चुका है, चाहे वह मिजोरम की पहाड़ियां हो या फिर हरियाणा के ग्रामीण क्षेत्र या महाराष्ट्र का औद्योगिक क्षेत्र या फिर नीलगिरि की पहाड़ियों का चाय का बागान जहां भारतीय सिनेमा 75 वर्षों में नहीं पहुंच पाया।

इलेक्ट्रानिक उपकरणों का समुचित उपयोग ग्रामीण क्षेत्रों में भी होना अति आवश्यक है। अतः सभी विभागों/संगठनों आदि को इन उपकरणों के उपयोग के बारे में आवश्यक प्रशिक्षण दिलाने की व्यवस्था करनी चाहिए। इन उपकरणों की उपयोगिता जितनी बढ़ेगी उतना ही यह समाज के लिए लाभप्रद होगा और अधिक मात्रा में उत्पादन होने से इनकी लागत में भी कमी आएगी जिसके फलस्वरूप इनकी कीमतें काफी कम हो जाएंगी। हमारे देश में साधन उपलब्ध हैं, मौलिक सुविधाएं उपलब्ध हैं। इसलिए इलेक्ट्रानिक्स का अब तक जो भी विकास हुआ है, उसका हमें पूरा फायदा उठाना चाहिए। इस प्रक्रिया में एक ओर जहां रोजगार के नये-नये अवसर पैदा होंगे, वहीं दूसरी ओर देश भी समृद्धशाली बनेगा।

ग्रामीण क्षेत्रों में इलेक्ट्रानिक विकास के लिए समय-समय पर देहातों में ही संगोष्ठियां आयोजित करने की आवश्यकता है। कम्प्यूटरों पर हिन्दी में काम करने के लिए इलेक्ट्रानिक्स विभाग द्वारा प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किये जाने चाहिए। द्विभाषी उपकरणों/कम्प्यूटरों की कीमतें कम करने के लिए कदम उठाये जाने चाहिए।

निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इलेक्ट्रानिक्स की भारी घुसपैठ हो चुकी है। हमारे ग्रामीण क्षेत्र भी इससे अब अछूते नहीं हैं। इनके कारण मानवमूल्यों की परिभाषा एवं परिसीमाओं में आश्चर्यजनक परिवर्तन आ गए हैं। कई कार्य जो पूर्व में असम्भव की श्रेणी में गिने जाते थे। वे सब अब सम्भव की श्रेणी में आ गये हैं और यदि इलेक्ट्रानिक्स के विकास का यही क्रम बना रहा तो असम्भव से सम्भव की श्रेणी परिवर्तन का यह अटूट क्रम भविष्य में और भी तीव्र हो जाएगा। इलेक्ट्रानिक्स प्रकृति को नियन्त्रित करने की दिशा में अग्रसर है, बस प्रकृति ही उसे नियन्त्रित कर सकती है। 21 वीं सदी में सर्वतोमुखी विकास के अग्रणी रूप में इलेक्ट्रानिक्स का वर्चस्व बना रहेगा। ग्रामीण क्षेत्रों में भी इसका निःसन्देह चहुंमुखी विकास होगा।

□

पृष्ठ 15 का शोषांश

अंग होता है। उस भाषा को इसलिए मूल्यवान समझा जाता है कि उसके माध्यम से दूसरे लोग उस देश की बौद्धिक स्थिति को जान सकते हैं।...

"साहित्य के उत्थान और प्रगति के लिए राष्ट्रभाषा के इतिहास के आधार पर कह सकते हैं जिन्होंने अपनी मौलिकता के लिए प्रयास किए हैं। ऐसे सभी राष्ट्रों ने अपनी भाषा को इतना महत्व दिया है कि अन्य भाषाओं के साहित्य से उन्होंने अंतरतम से घृणा की या उसकी उपेक्षा की। फ्रांस के लोगों ने अपने सुंदरतम दिनों में इंग्लैण्ड के आगस्टन काल की सर्वश्रेष्ठ साहित्यिक कृतियों को तुच्छ ही समझा।...

"औपनिवेशिक जीवन में कुछ ऐसी बात अवश्य है जो साहित्यिक मौलिकता के विरुद्ध जाती है....इससे यह धारणा बन जाती है कि नये विषयों और विशेषकर विभिन्न नये दृश्यों और नये सम्पर्क से उठने वाले विचार के लिये नये शब्दों के निर्माण की प्रवृत्ति को अधिक से अधिक दबाया जाना चाहिए। हर प्रकार के सुधार के लिए इसकी दृष्टि विदेश की ओर लगी रहती है, साहित्यिक स्वर के लिए यह अपनी भूतपूर्व मातृभूमि की ओर देखता है और इसकी साहित्यिक मौलिकता भारत के अर्थ-विधि शास्त्र की मौलिकता के समान है जिसे अपनी योग्यता-अयोग्यता के संबंध में जानने के लिए लंदन स्थित उच्च अधिकारियों के निर्णय पर निर्भर रहना पड़ता है।

श्री वाल्टर चेनिंग के लेख के ये उद्धरण भारत के अंग्रेजी-परस्त बुद्धिजीवियों के लिए विचारणीय होने चाहिए। लेकिन क्या वे अपने पूर्वाग्रहों से मुक्त होने को तैयार हैं।

पृष्ठ 17 का शोषांश

10. अनुवाद करते समय अटकने की स्थिति में उस पद्यांश या गद्यांश को कुछ देर के लिए छोड़ देना चाहिए और आगे अनुवाद जारी रखना चाहिए। बाद में छोड़े हुरूए अंश को दुबारा देखने से उसका अनुवाद आसानी से हो जाता है।
11. अनुवाद के अंतिम प्रारूप की भाषा, सरल, स्पष्ट और बोधगम्य होनी चाहिए।
12. मूल पाठ में संयुक्त वाक्य प्रायः किसी गहन विचार को व्यक्त करने के लिए रखे जाते हैं। यदि संभव हो, तो संयुक्त वाक्यों को अनावश्यक रूप से तोड़कर सरल नहीं बनाना चाहिए।
13. जिन शब्दों का अर्थ व्यापक हो और अनुवाद एक शब्द से न हो पा रहा हो, उनका अनुवाद करते समय एक से अधिक शब्द का प्रयोग कर लेना चाहिए।
14. अनुवाद को द्वितीय कोटि का काम नहीं समझना चाहिए, बल्कि उसे मौलिक लेखन की तरह ही महत्व देना चाहिए।

लिंग

—सी० आर० रामचन्द्रन*

अहिन्दी भाषी को हिन्दी भाषा के अध्ययन में जिस कठिनाई का सामना करता है उसे दूर करने का एकमात्र मूलमंत्र है लिंग निर्धारण की पद्धति का सरलीकरण। हिन्दी को छोड़ अन्य सभी भारतीय भाषाओं में तीन लिंगों का विधान है। जबकि हिन्दी भाषा में केवल दो ही लिंग है। इस कारण प्रशिक्षार्थी को शब्दों के लिंग निर्धारण में कठिनाई महसूस होती है और वह संकोच करने लगता है कि सही भाषा का प्रयोग मैं कर रहा हूं या नहीं। यह भाषा अधिगम में अवरोध बनता है। परन्तु मैं अपने अनुभव और अध्यापन के दौरान प्राप्त पुनर्मिवेशन के आधार पर यह सुस्पष्ट करना चाहता हूं कि हिन्दी में लिंग जानना अत्यन्त सरल कार्य है और सही मानों में यह सुग्राह्य भी है।

जैसा कि आपको मालूम है संज्ञा शब्दों को प्राणिवाचक (ANIMATE) एवं अप्राणिवाचक इन दो वर्गों में रखा गया है। जहां तक प्राणिवाचक शब्दों का संबंध है वहां लिंग की पहचान बड़ी आसानी से हो जाती है। अप्राणिवाचक संज्ञाओं के लिंग निर्धारण में निम्नलिखित बातें सहायक सिद्ध हो सकती हैं। यहां मैं पुल्लिंग व स्त्रीलिंग शब्दों को पहचानने का सरल तरीका प्रस्तुत कर रहा हूं।

(अ) पुल्लिंग

उदाहरणः— (अकारान्त संज्ञाएं) घर, देश, कार्यालय, नगर, शहर, मैदान, आकाश, पेड़, आम, वर्ष, दिन, चावल, पत्र, कागज आदि।

अपवादः— किताब, पुस्तक, कलम, दीवार, आंख, मूंछ, पूंछ, देह, देन, नाक, मेज।

(आकारान्त संज्ञाएं) कमरा, पंखा, पहिया, पैसा, कपड़ा, आटा, दरवाजा, सोना, लोहा, तांबा, लिफाफा, मसौदा आदि।

अपवादः— हवा, दवा, सजा, दुनियां।

(आ) स्त्रीलिंग

(1) "इ" कारान्त एवं "ई" कारान्त सभी अप्राणिवाचक संज्ञाएं स्त्रीलिंग की कोटि में आती हैं।

उदाहरण ("इ" कारान्त संज्ञाएं)-नीति, रीति, भक्ति, शक्ति, बुद्धि, रूचि, विधि, निधि, प्रकृति, गीत, पुष्टि आदि (संस्कृत भाषा पर आधारित)

("ई" कारान्त संज्ञाएं)-कहानी, रोटी, चिट्ठी, छुट्टी, टिप्पणी, गाड़ी, कुर्सी, टोपी, नदी आदि।

अपवादः— पानी, दही, मोती घी, जी

(2) संस्कृत भाषा के शब्द (दक्षिण की भाषाओं के शब्द) जो आकारान्त होंः—

उदाहरण—भाषा, दया, माया, शाखा, सूचना, ममता, रचना, चर्चा, इच्छा, अभिलाषा, आवश्यकता, कृपा, प्रेरणा, समस्या, प्रार्थना, क्षमा, पूजा, वर्षा, योजना, आलोचना, क्रिया आदि।

(3) ऊन वाचक संज्ञाएंः—

उदाहरण-पूड़ा शब्द से पुड़िया
डिब्बा शब्द से डिबिया
खाट शब्द से खटिया आदि।

(4) क्रियार्थक संज्ञाएंः—

उदाहरण-बैठक, लिखावट, बनावट, सजावट, रूकावट, पहुंच, समझ, खरीद आदि।

(5) "त" कारान्त संज्ञाएंः—

उदाहरण- छत, बात, बातचीत, शिकायत, शरारत, हिम्मत, आदत, लत, लात, लागत, कीमत, तबीयत, बनावत, हालत, दावत, जरूरत, मरम्मत आदि।

अपवाद- भात, खत, खेत।

उपर्युक्त नियमों के आधार पर 99% शब्दों का लिंग निर्धारण सरल हो जाता है हिन्दी भाषा में इस कारण समान अर्थ वाले दो शब्दों के लिंग बनावट के कारण अलग-अलग भी हो सकते हैं।

आदेश	(पु०)	आज्ञा	(स्त्री)
प्रबन्ध	(पु०)	व्यवस्था	(स्त्री)
तप	(पु०)	तपस्या	(स्त्री)
विचार-विमर्श	(पु०)	चर्चा	(स्त्री)
अनुदेश	(पु०)	हिदायत	(स्त्री)
धैर्य	(पु०)	हिम्मत	(स्त्री)

कार्यालयीन सन्दर्भ में प्रचलित लिप्यंतरित अंग्रेजी शब्दों का लिंग जानना भी अतिआवश्यक हैः—

(अ) आम तौर से लिप्यंतरित अंग्रेजी संज्ञाएं पुल्लिंग हैंः—

रजिस्टर, चेक, बैंक, लेटर आदि।

पर निम्नलिखित शब्द स्त्रीलिंग हैंः—

फाइल, रिपोर्ट, पुलिस

(आ) लिप्यंतरित अंग्रेजी संज्ञाओं के अन्त में जहां "ing" का प्रयोग हो अर्थात् क्रियार्थक संज्ञाएं हों तो वे स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होती हैं।

उदाहरण-मीटिंग, प्रिंटिंग, बुकिंग, मार्किंग, गेटिंग आदि।

*सहायक निदेशक, हिं०शि०यो०, हैदराबाद

जिन्दा विश्वकोश थे प्रभाकर माचवे

—जगदीश चतुर्वेदी*

डा० प्रभाकर माचवे के निधन से मुझे ऐसा लगा कि मेरे पारिवारिक बुजुर्ग, आत्मीय एवं मित्र का आकस्मिक अवसान हो गया है। एक ऐसी वेदना जिसे महसूस किया जा सकता है और ऐसी स्मृति जो कभी भी धूमिल नहीं हो सकती। मैं माचवे जी को करीब चालीस, पैंतालीस वर्षों से जानता हूं। कई रूपों में जानता हूं। उनके बहुभाषाविद् एवं सुधी विचारक रूप से परिचित रहा हूं और उनके अलमस्त, फक्कड़ और मिलनसार स्वभाव का कायल रहा हूं।

मेरे और माचवे जी के जीवन में थोड़ी समानता भी रही है। मेरा जन्म भी ग्वालियर में हुआ और 26 दिसम्बर, 1917 को माचवे जी का जन्म भी ग्वालियर में हुआ। बाद में वह माधव कालेज उज्जैन में कई वर्ष (1938—48) प्राध्यापक रहे। मैं भी कुछ वर्ष माधव कालेज, उज्जैन में प्राध्यापक रहा। फिर माचवे जी नागपुर में रहे और आकाशवाणी में नौकरी की। बाद में दिल्ली चले आये और साहित्य अकादमी के सहायक सचिव तथा सचिव रहे। 1975 में 58 वर्ष की आयु में सेवा निवृत्त हुए। मैं भी 1959 में दिल्ली चला आया और फिर यहीं से सेवा निवृत्त हुआ। माचवे जी ने यह समानता स्वयं कई बार बताई थी और हम इस पर ठहाका लगाते थे।

माचवे जी से हमेशा ही मुलाकातें होती रहीं। बचपन में उनको उज्जैन में देखा था। वह माधव कालेज, उज्जैन में पढ़ाते थे और मैं स्कूल का विद्यार्थी था। मुझे बचपन से ही कविता लिखने का शौक था और अपने शहर के वरिष्ठ कवियों से मेरा परिचय था। हमारे शहर में उस समय दो कवि रह रहे थे, जिनको मैंने समीप से देखा था। कालान्तर में ये दोनों कवि आधुनिक हिन्दी कविता के प्रमुख हस्ताक्षर माने गये। इनमें एक थे मुक्तिबोध और दूसरे डॉ प्रभाकर माचवे। 1946 के वे दिन मुझे भूले नहीं हैं जब उज्जैन की विभिन्न साहित्यक गोष्ठियों में डा० प्रभाकर माचवे से मुलाकात होती थी और उनके संयत और गुरू गंभीर वक्तव्यों से मैं प्रभावित होता था। मुक्तिबोध ज्यादातर चुप रहते थे और माचवे जी उतना ही अधिक बोलने में प्रवीण थे। यों माचवे जी की वह वाकपटुता जीवन भर अक्षुण्ण रही। किसी भी विषय पर धाराप्रवाह बोलने की अदम्य क्षमता प्रभाकर माचवे में थी और उनको हम सब साहित्यकार "जिन्दा विश्वकोश" कहा करते थे। वे किसी भी विषय पर बोल सकते थे, लिख सकते थे और बहस कर सकते थे।

'तारसप्तक' में उनकी कविताएं 1943 में प्रकाशित हुई। अज्ञेय द्वारा संपादित यह संकलन आधुनिक हिंदी कविता का संदर्भ ग्रन्थ माना गया। उज्जैन में रह रहे मुक्तिबोध और माचवे इस संकलन के महत्वपूर्ण कवियों में से थे। इसके पूर्व भी माचवे की दो इंप्रेशनिस्ट कविताएं (1938) "विशाल भारत" में प्रकाशित हुई थीं और उनकी बहुत चर्चा हुई थी। अज्ञेय उस समय "विशाल भारत के संपादक थे।

सन् 1939 में वह महात्मा गांधी के संपर्क में आये और आधुनिक कवि ने स्वदेशी वेशभूषा को स्वीकार किया। 8 नवम्बर, 1940 को सेवाग्राम में महात्मा गांधी के निर्देश पर शरद पारनेरकर के साथ विवाह हुआ और एक ऐसी जीवन संगिनी मिली जो कवि, विचारक और मस्तमौला प्रभाकर का ध्यान रखती रहीं और उनकी प्रेरणास्रोत रही। माचवे की अध्ययन पिपासा को अनवरत रखने में श्रीमती माचवे का सहयोग सर्वोपरि रहा है। माचवे जी कहा करते थे कि उनके विवाह में केवल नौ आने खर्च हुए थे और हाथ से कते सूत की साड़ी कस्तूरबा गांधी ने वधू को भेंट में दी थी। गांधी जी ने स्वयं अपने हाथ से 108 तार कातकर माचवे जी के गले में पहनाये। शरद पारनेकर महात्माजी और कस्तूरबा जी की पुत्री की तरह वहीं आश्रम में रहती थीं। शादी में सम्मिलित हुए थे खान अब्दुल गाफ्फार खान, जवाहर लाल नेहरू, मौलाना आजाद, सरोजनी नायडू, जमनालाल बजाज और आचार्य कृपलानी आदि।

प्रभाकर माचवे का विवाह जब गांधी जी ने सेवाश्रम में कराया तब वे माधव कॉलेज, उज्जैन में दर्शन के प्राध्यापक थे। वह बचपन से ही बहुत मेधावी छात्र थे। स्वयं मराठी भाषी थे किन्तु शिक्षा मध्यप्रदेश में होने के कारण हिन्दी उनकी मातृभाषा की तरह थी। उन्होंने सन् 1943 में अंग्रेजी साहित्य में एम० ए० किया और कालान्तर में वे मराठी, हिन्दी और अंग्रेजी तीनों ही भाषाओं में आजीवन लिखते रहे। यूं तो उन्होंने अधिकतर लेखन हिन्दी में ही किया किन्तु मराठी और अंग्रेजी में भी उन्होंने बहुत सी प्रसिद्ध कृतियां लिखी हैं। कई भाषाएं सीखना भी उनका व्यसन था। वे बंगला, तमिल, फ्रेन्च, रूसी और बल्गारियाई भाषाओं के भी ज्ञाता थे। 1948 में उन्होंने राहुल सांकृत्यायन के साथ "शासन" शब्दकोश का सम्पादन किया था। यह शब्दकोश अपनी किस्म का बहुत ही विशिष्ट शब्दकोश था और माचवे जी ने इसे तैयार करने में तीन वर्ष बिताए थे।

प्रभाकर माचवे जी ने घुमक्कड़ी और सतत अध्ययन का व्रत राहुल जी से ही ग्रहण किया था और जीवन-पर्यन्त अपनी साधना को अक्षुण्ण रख सकें। उन्होंने करीब 125 पुस्तकें लिखी और अभी भी ऐसे डेढ़ दो हजार पृष्ठ होंगे जो कि पत्रिकाओं में बिखरे हुए हैं और जिन्हें पुस्तक का रूप नहीं दिया गया है। उनके संबंध में श्री जगदीश नारायण वोरा ने ठीक ही कहा है "किसी चीज को सीखने की शक्ति और साहस उनमें अतुल्य है। मराठी मातृभाषा है, बंगाली कालेज में सीखी, उर्दू सेवाग्राम में, सन् 1948 में कटक में उड़िया, रेडियो में पंजाबी, अहमदाबाद में गुजराती, कुछ दिन डा० शारलोत क्राउजे से जर्मन, राहल जी से रूसी और स्वयं शिक्षकों से फ्रेन्च और तमिल सीखने का यत्न उनकी बहुभाषाविदता को प्रकट करता है।"

उनका लेखन किसी एक विधा तक सीमित नहीं था। कविता, कहानी, उपन्यास, एकांकी, निबंध, यात्रा वर्णन और समीक्षा आदि के साथ-साथ वे धर्म और दर्शन तथा राजनीतिक विषयों पर भी लिखते रहे हैं। विभिन्न विषयों पर लगातार लिखते रहने और किसी एक विषय पर अधिक ध्यान

*सी-2 / 32-ए, लारेन्स रोड, दिल्ली-110035.

ने देने के कारण यह हुआ कि डा० प्रभाकर माचवे जिन्दा डिक्शनरी तो माने गये किन्तु किसी भी विद्या के विशेषज्ञ के रूप में मान्य नहीं हो सके। यूं यदि उनकी प्रसिद्धि के अनुपात में उनके साहित्य पर बात की जाये ते यह कहा जा सकता है कि वे अन्य विधाओं की अपेक्षा कवि रूप में अधिक प्रसिद्ध हुए हैं।

कविता के लिए उनका मन बचपन से ही प्रतिबद्ध रहा। साथ ही इस विद्या में कुछ नया कर गुजरने की लालसा भी उनमें प्रारंभ से रही थी। सन् 1938 में अज्ञेय ने जब उनकी दो इम्प्रेशनिष्ट कविताएं विशाल भारत" में प्रकशित की" तो वह विद्वानों के बीच चर्चा का विषय बनी रहीं। हो सकता है कि अज्ञेय से उनकी मित्रता का कारण भी यही कवितायें रही हो। 1943 में अज्ञेय ने "तारसप्तक" का प्रकाशन किया और डा० प्रभाकर माचवे उसके एक सहयोगी कवि थे। माचवे उन दिनों माधव कालेज, उज्जैन में प्राध्यापक थे और 'तारसप्तक' के एक अन्य कवि मुक्तिबोध भी उज्जैन में रह रहे थे। दोनों कवि बाद में हिन्दी कविता के अनन्य हस्ताक्षर माने गये। माचवे शुरू से ही अत्यंत मेधावी छात्र थे। विभिन्न साहित्यिक गोष्ठियों में उनकी वकतृत्व कला प्रभावपूर्ण होती थी। "तारसप्तक" में उनका एक वक्तव्य ऐसे कवि का प्रतिवेदन है जो निरी भावुकता को कविता नहीं मानता और न ही उसको अमरता को पर्याय मानता है। माचवे का मत था कि कला की अपनी स्वयं निर्णीत तर्क-पद्धति होती है। इसलिए रचना की प्रक्रिया पर ही कुछ कहा जा सकता है। कोलरिज के कथन का जिक्र करते हुए उन्होंने लिखा था "युग की वाणी जैसे गरीबी पर निरे निष्क्रिय आंसू बहाकर या बुर्जवा को दस पांच गाली देकर समाप्त नहीं हो जाती, वैसे ही युग-युग की वाणी भी ममियों की भाषा का विवेकशून्य अनुकरण कर अप्रस्तुत अलंकार योजना से ही पूरी नहीं होती। असल में काल के मानदंड से वाणी का यह वर्गीकरण ही गलत है।" "साहित्य में अमरता" इस शब्द में ही एक मुगालता है, एक अनैतिहासिकता छिपी हुई है, कविता इतिहास की जननी न होकर पुत्री है।" उन्होंने अपने इस वक्तव्य में छायावाद को हिस्टीरिया की तरह हिन्दी कविता का मानसिक रोग माना था।

अति नवीन का आग्रह रखने वाले माचवे शुरू से ही कविता में प्रयोग, नया वाक्त विन्यास और शाब्दिक बुनावट पर विश्वास करते हैं। सन् 1943 में "तारसप्तक" में जो उनकी कवितायें प्रकाशित हुई उनमें कुछ निश्चय ही छायावादी प्रतीत होती हैं, किन्तु कुछ कवितायें उनके फक्कड़पन, मनमौजी व्यक्तिव और सहज कविता का उदाहरण है। "वह एक" शीर्षक से अखबार बेचने वाले पर लिखी गई उनकी कविता भाषा की सहजाता एवं गतिमयता के कारण निराला की याद दिलाती है:

वह एक
मैला-सा कुर्ता पहने बेच रहा अखबारः
अरजुन, स्वराज, जन्मभूमि, आज, अधिकार,
दो पैसे या कि चार-चार।
* * * *
उसको न परवाह कांगरेस नैया की पतवार
वामपक्ष-पै है या हराम पक्ष पै है,
वहा जानता है महावार,
तनखा साढ़े तीन कल्दार!

इस कविता में उनका व्यंग्य अत्यंत सजीव एवं मारक है। माचवे में शुरू से ही एक सचेष्ट व्यंग्यकार की आंख विकसित रही है। उन्होंने तो कई श्रेष्ठ गद्य की व्यंग्य रचनायें भी लिखी है। "निम्न मध्यवर्ग" नामक उनकी कविता जो "तारसप्तक" में थी, उसकी निम्नलिखित पंक्तियां भारतीय निम्न मध्यवर्ग की स्थिति का जीवंत चित्रण है-

"नोन-तेल-लकड़ी की फ्रिक में लगे घुन से,
मकड़ी के जाले से, कोल्हू के बैल-से।
मकां नहीं रहने को, फिर भी ये धुन से,
गन्दे, अंधियारे और बदबू-भरे दड़बों में
जनते हैं बच्चे।"

"तारसप्तक" के बाद उनके जो महत्वपूर्ण संग्रह आगे प्रकाशित हुए वे हैं-"स्वप्न भंग" (1955), अनुक्षण" (1958), "तेल की पकौड़िया" (1962)। मेपल (1963)। इनके अतिरिक्त उन्होंने अभी कुछ समय पूर्व "विश्वकर्मा" नाम से एक खण्डकव्य भी लिखा है। माचवे जी का अनुभव विस्तृत अध्ययन गंभीर और दृष्टिकोण मानवतावादी है। इतिहास और दर्शन के विद्वान होने के कारण उनकी कविता में कई संदर्भ और दार्शनिक उत्प्रेक्षायें आ जाती हैं। उन्हें सामाजिक रूढ़ियों तथा कुरीतियों से अरूचि रही हैं, इसलिए उनकी कविता भी रूढ़िमुक्त और एक नये यथार्थ से साक्षात्कार कराती है।

माचवे देश और विदेश में बहुत घूमे हैं। उनकी प्रवृत्ति यायावरी, घुमान्तू है। उन्होंने अपने कविता संग्रह "स्वप्नभंग" की एककविता में लिखा है-

"मेरे मन के भीतर में कोई जिप्सी या
घुमन्तू बैठा,
यात्रा, यात्रा केवल यात्रा, यात्रा, यात्रा, यात्रा!

यो तो माचवने ने अधिकतर कविताओं में सहज भाषा का ही प्रयोग किया किन्तु कई स्थानों पर उन्होंने कई देशज, तत्सम और विदेशी शब्दों का भी उन्मुक्त प्रयोग अपनी कविताओं में किया है। ब्रज और मालवी के कई मीठे शब्द भी उन्होंने अपनाये हैं जैसे "दैया", "बिजुरी", "बंदरिया", "पाती", "छलावा", "मजूर", "घुमन्तू" आदि। "मेपल" में उन्होंने कई अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया है। वैसे भी "मेपल" की अधिकांश कवितायें विदेश में ही लिखी गई और वहीं के वातावरण के अनुरूप हैं। उन्होंने कई कविताओं में यह भी किया कि वहीं शब्द दे दिये हैं जो विदेशों में प्रचलित है। उनका अर्थ संकेत मात्र कहीं-कहीं टिप्पणी में मिलता है। जैसे-अबराकांडवा (पश्चिमी तर्कशास्त्र में एक निर्थक अर्थ समूह), कवललिन (चीन में बुद्ध की प्रतिमा), हुमाया हुमाया हुमा-हुमाया हुमा-हुमा-----(नरभक्षियों का गीत), बरलेक्स (एक विदेशी नृत्य) आदि। माचवे जी में एक काव्यप्रकृति और पायी जाती है, वह है अपनी कविताओं के बीच-बीच अन्य कवियों के उद्धरण रख देते हैं ऐसा अन्य कुछ कवियों ने भी किया किन्तु माचवे जी के यह प्रयोग कहीं-कहीं सहज न होकर चमत्कारिक से लगते हैं। यूं तो

वे एक प्रयोगधर्मी कवि हैं और कभी सोनेट, कभी गजल, कभी गीत-नाट्य और ग्रामगीतों की धुनों को भी अपनी कविताओं में धड़ल्ले से प्रयोग करते हैं। हिन्दी में माचवे को इस प्रकार के साहसिक प्रयोगों का कवि माना जाता रहा है।

माचवे जी ने सामयिक विषयों, मत्वपूर्ण व्यक्तियों, ऋतुओं, त्यौहारों,

दर्शनीय स्थलों, जयन्तियों, पर्वों आदि पर काफी कवितायें लिखीं। कुछ कावंतायें जीवन, समाज या व्यक्ति से सम्बद्ध तथ्यों पर भी हैं, लेकिन वे कविताएं एक ही सिटिंग या इतनी जल्दी में लिखते रहे हैं कि उसकी सम्पूर्ण अन्विति प्रभावपूर्ण नहीं हो पाती है। लगता है कि वे कवि कर्म को सीरियसली नहीं लेते थे। निश्चय ही उनकी प्रयोगपरक दृष्टि बहुत तेज थी किन्तु इस विशिष्टता के सम्पूर्ण उपयोग में वे एकाग्रता नहीं बरतते थे। उनकी कुछ कविताएं ऐसी मिल जाएंगीं जिनकी कुछ पंक्तियों के भाव प्रभावित करते हैं और कुछ ऐसी रचनाएं होगीं जो समग्र रूप में न सही कुछ दृश्यचित्रों के माध्यम से आपको वर्षों याद रहेंगी।

भाषा संबंधी उनके प्रयोग अनगढ़ लग सकते है किन्तु कहीं-कहीं यह कमी उनके आधुनिक मन की पर्याय है। युवा हिन्दी कवि माचवे को पसंद करते रहे हैं क्योंकि उनकी कविता का लहजा सहज है और सपाटबयानी का है। केदारनाथ सिंह ने एक जगह लिखा है—"यह आकस्मिक नहीं है कि कुछ दिनों पूर्व नई पीढ़ी के कवियों ने माचवे की कविता के साथ संबंध जोड़ने का प्रयास किया था। उनके काव्य में जो स्थितियों का एक हल्का-फुल्कापन और काव्य के बुनियादी ढांचे के साथ रचनात्मक खिलवाड़ का सा भाव है, वह नई पीढ़ी की काव्यात्मक मनोदशा के अधिक निकट है।" कदाचित केदारनाथ सिंह का यह वक्तव्य अकविता के कवियों के संदर्भ में है। अकविता काल में मैंने भी माचवे की कविता को अपनी समकालीनता में महसूस किया था और हमारे कवि मित्र माचवे जी को अपने समकालीन से कहीं अधिक आधुनिक और समसामयिक कविता के समीप मानते थे।

प्रभाकर माचवे जीवन के अंतिम समय तक सक्रिय रहे। उनकी कविताएं तमाम पत्र-पत्रिकाओं में दिखाई देती रही। अभी कुछ समय पूर्व मैंने उनकी एक कविता "धर्मयुग" में देखी थी जिसमें कवि ने मृत्यु से साक्षात्कार का एक सार्थक बिम्ब उपस्थित किया था। लगता है कि मृत्यु पूर्व कवि की यह अपने प्रति भविष्यवाणी थी। कुछ समय पूर्व उनकी एक कविता और छपी थी। शीर्षक था "अपने मन से"—

"हुए प्रभाकर अब तुम सत्तर,
मियां दुकान उठा लो अपनी
और समेटो कागज पत्तर!"

हालांकि वे जीवन के अंतिम दिन तक सक्रिय रहे। मुझे उनके पुत्र असंग माचवे ने बताया कि दिल का दौरा जब पड़ा उस समय भी वह एक छात्रा को उसके शोध प्रबन्ध के संबंध में कुछ लिखा रहे थे। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उनके संबंध में ठीक ही लिखा हैं—"आजकल ऐसे कम ही साहित्यकार मिलते है जिनमें चिन्तन, मनन, अध्ययन और सरसता का ऐसा मणिकांचन योग हो"।

एक चर्चित कवि के साथ माचवे बड़े सशक्त गद्यकार भी रहे, उन्होंने कहानियां भी लिखीं, उपन्यास भी और बहुत सारे लेख भी। उनकी कहानियों का संग्रह "संगीनों का साया" सन् 1942 में छपा था। इस संग्रह में पॉसिस्ट विरोधी कहानियां संकलित की गई थीं। अन्तरराष्ट्रीय दृष्टि से उनकी सहानुभूति वामपक्षीय देशों के साथ थी। माचवे जी के संबंध में यह भी कहा जाता है कि उन्होंने कई उपन्यास एक या दो बार में ही लिख लिये थे। उनके ज्यादातर उपन्यास छोटे ही हैं और समसामयिक विषयों से सम्बद्ध है।

माचवे जी ने स्वतः अपने उपन्यासों के संबंध में लिखा है कि मूलतः यह लेखन अपने ही मन की घुंडी खोलने की कोशिश में से उपजा है। यहां उपन्यास नहीं लेखन शब्द का प्रयोग किया है। लगता है कि अपने वैयक्तिक प्रश्नों का समाधान उन्होंने उपन्यासों के माध्यम से खोजने का प्रयास किया है। उनके उपन्यास ऐसे विषयों से सम्बद्ध हैं जिनकी चर्चा अपेक्षाकृत कम की गई है। कहीं उन्होंने आज की ज्वलंत साम्प्रदायिक समस्या को कथा का माध्यम बनाया है, कहीं अछूतों के मानसिक विकास और कहीं पूंजीवाद से उत्पन्न विनाशकारी तत्वों और युवापीढ़ी में फैले अनाचार को अपनी कृतियों का आधार बनाया है। इनके लघु उपन्याओं में इन बड़ी समस्याओं का सफलतापूर्वक निर्वाह किया गया है। माचवे जी के प्रमुख उपन्यास हैं "परन्तु" (1951), "दाभा" (1952), "सांचा" (1964) "जो" (1965) "किशोर" (1969), "तीस चालीस पचास" (1973), "दर्द के पैबन्द" (1974), "किसलिये" (1975) द्युत (1976), "लक्ष्मी बेन" (1976), "कहां से कहां" (1978), "दसभुजा" (1981) "आंखें मेरी वाकी उनका" (1983) "लापता" (1984) "अनदेखी" (1988)।

"परन्तु" की विधवा, "एकतारा" की आभा, "तीस चालीस पचास" की तीन पीढ़ियां, "दर्द के पैबन्द" के मजदूर, "द्युत" की द्रोपदी आदि का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण माचवे जी ने विशिष्टता के साथ किया है। उनको परंपरागत शिल्प से अरूचि है क्योंकि वे रूढ़िगत भावुकता पसंद नहीं करते। सभी उपन्यास प्रतीकात्मक शैली में लिखे गये हैं। ऐसा लगता है कि मानव जीवन के परिप्रेक्ष्य में विभिन्न समस्याओं को आधुनिक चिन्तक के रूप में समझने का प्रयास लेखक ने किया है। वे यथार्थ का निरूपण अपने ढंग से करते हैं। उनकी तुलना किसी अन्य कलाकार से नहीं की जा सकती, वे अपने कथ्य एवं शिल्प प्रयोग में अनन्य है।

व्यंग्य के तो वे अत्यंत सफल पारखी रचनाकर थे। "खरगोश के सींग", "विसंगति" और "खबरनामा" हिन्दी साहित्य की अमूल्य कृतियां हैं। "विसंगति" के संबंध में अज्ञेय ने लिखा था- "विसंगति पढ़ गया, खूब मजा लेकर। दो एक जगह लगा कि शब्दों से खिलवाड़ को अधिक खींचा गया है, और यह तो जानता हूं कि सभी जानते हैं कि आजकल आते-जाते अज्ञेय को अकारण भी एक धौल जमा देने से समालोचना को अनुकूलता मिल जाती है। फिर भी पढ़ने में मजा आया.....रस सुख के लिए आपका ऋणी हूं, कुछ निबंध तो बड़ी मार्मिक चोट करने वाले हैं।" लगता है कि "विसंगति" में माचवे जी ने अज्ञेय के व्यक्तिव पर जो छींटाकशी की उसका उत्तर बाद में अज्ञेय ने अपने मित्र को दिया—

"मेधावी थे माचवे पर होते गये पोंगा,
कान से लगाये-लगाये अकादमी का चोंगा,
सब को मनाते,
हां में हां मिलाते,
घिघियाते-घिघियाते आखिर रह गये घोंगा।"

मित्रों का यह आपसी मखौल मुझे सुखद ही लगा। यों माचवे अकादमी के सचिव से लेकर भारतीय भाषा परिषद के निदेशक तक रहे और सभी भारतीय भाषाओं के लेखकों से अभिन्न संबंध जोड़े रहे। वह ज्ञान का एक ऐसा कोष थे जो कभी भी रिक्त नहीं होता। ऐसे मनीषी सदियों में पैदा होते हैं भारतीय साहित्य सदैव ही इस चिन्तक को याद करता रहेगा और उनके ग्रन्थ आगामी पीढ़ी के लिए संदर्भ का काम देते रहेंगे। □

फारसी काव्य के महान शिल्पी

—शारदा वशिष्ठ*

आर्य और सेमिटिक जातियों के महान संगम से उद्‌भूत आधुनिक ईरान ने अपने वाङ्मय चिंतन द्वारा विश्व को अनेक अविस्मरणीय और आश्चर्यजनक उपहार प्रदान किए हैं; जिनमें से एक है फारसी काव्य। इस भाषा के काव्य का इतिहास बहुत पुराना है। कहा जाता है कि साइरस के शासनकाल के बहुत पूर्व यादि 546 ई०पू० से ईरान में धार्मिक गीतों के गाये जाने की परम्परा प्रचलित थी। इस भाषा के काव्य का इतिहास कभी भी किसी काल विशेष की सीमाओं में बंधकर नहीं रहा। उन्मुक्त आकाश तले विचरण करना इस भाषा के काव्य की अद्वितीय विशेषता थी। वैसे तो फारसी के काव्य प्रांगण में अनेकशः कवियों ने अपनी रचनाओं द्वारा ईरान की सांस्कृतिक विरासत को समृद्ध करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, पर उन सबका विवरण प्रस्तुत करना यहां संभव नहीं है। यहां पर हम केवल फारसी काव्य के उन महान सर्जकों का परिचय दे रहे हैं जो एक तो समकालीन थे और दूसरे जिन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा ईरानी कला, संस्कृति, धर्म और दर्शन की अवधारणाओं को न केवल अपने देश में, अपितु उसे विश्व के कोने-कोने में प्रचारित और प्रसारित करने में महत्वपूर्ण अवदान प्रस्तुत किया है-क्रमशः उनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है:—

फिरदौसी: विश्व प्रसिद्ध यूनानियों के इलियट और भारतीयों के महाभारत से टक्कर लेने वाले "शाहनामा" नामक महाकाव्य के प्रेणता फिरदौसी फारसी काव्य के एक महान स्तंभ थे। इनका पूरा नाम "अबुल-कासित फिरदौसी" था। इस काव्य की सर्वभौमिकता और विश्वजनीनता के संदर्भ में "शानामा" से उदृत लेखक का स्वयं का यह कथन देखा जा सकता है—

"मैंने अपने शब्दों से संसार को स्वर्ग बना दिया है, इसके पहले किसी ने काव्य के बीज (इतनी अच्छी तरह) नहीं बोये थे।

"मैंने इन तीन वर्षों में अनेक कष्ट सहे, मैंने इसे फारसी के द्वारा अजम को पुनः जीवित कर दिया।

वर्षा और सूर्य के ताप के अनेक समृद्ध भवन नष्ट हो जाते हैं। मैंने अपनी कविता से एक ऐसे उच्च प्रसाद की प्रतिष्ठा की है जिसे वर्षा और आंधियां भी कोई क्षति नहीं पहुंचा सकतीं यह पुस्तक युगों तक रहेगी और जो बुद्धिमान हैं वे सभी लोग इसे पढ़ेंगे।

अब मैं नहीं मरुंगा क्योंकि अपने वक्तव्य द्वारा मैं अमर हो गया हूं। जिसके भी पास बुद्धि, न्याय शक्ति और श्रद्धा होगी वह मृत्यु के अनन्तर मेरी प्रशंसा करेगा।" उमर खैयाम अपनी अमर रुबाइयों के लिए विश्व प्रसिद्ध, महान वाणितज्ञ और दार्शनिक, निकाय के एक सदस्य थे। इनके द्वारा रचित रुबाइयों में जीवन के अदृश्य और अलौकिक रहस्यों को व्यक्त करने की अद्‌भूत क्षमता है। भौगोलिक सीमाओं से बंधन को तोड़ने वाली इसकी रुबाइयों का अनुवाद विश्व की अनेक भाषाओं में हुआ है और इन रुबाइयों को मूल के ही समान ही लोकप्रियता हासिल हुई है। विश्व की शक्ति और महत्ता के समक्ष मनुष्य के बोनेपन को दशनि वाली रुबाइओं का एक अनूदित अंश दृष्टव्य है:

"अरे आया क्यों जग के बीच।
कहा से तृण-सा मुझको तोड़।
बहा लाई है कोई धार
गई जो जगती-तट पर छोड़।"

मौलवी:-इस समुद्र परम्परा के एक अन्य प्रमुख कवि जलालुद्‌दीन मोहम्मद बल्खी जो "रूमी" के नाम से प्रख्यात हैं। इन्होंने अपनी रचनाओं में उल्लिखित भावप्रवण मीतों की उपमा तथा अपरांग व्यंग्य द्वारा विश्व के अनेक रहस्यों को अनाकृत किया। विश्व के भौतिक वैज्ञानिकों की दृष्टि में आने से बहुत पहले ही इस कवि ने अणु और परमाणु की नियम का तपता अपने अंतः चक्षु द्वारा प्राप्त कर लिया था। सरल एवं काव्यात्मक भाषा में इस नियम का निरुपण कवि की कारयित्री प्रतिभा का अनोखा उदाहरण माना जा सकता है:-

प्रत्येक क्षण हम और संसार परिवर्तित होते जा रहे हैं और हमें इस परिवर्तन का ज्ञान नहीं है।

जीवन उस सरिता के समान है जिसका जल निरन्तर बदल रहा है जबकि शरीर निरन्तर बदल रहा है, आत्मा स्थिर है।

इस परिवर्तन की त्वरा इसे ठीक वैसे ही सातत्य का रूप प्रदान करती है जैसे चल स्फुलिंग, जो अटूट प्रकाश का भ्रम उत्पन्न करता है।

यदि एक मशाल एक ओर से दूसरी ओर घुमा दी जाय तो वह अग्नि का लंबा-स्तंभ सा प्रतीत होगी।

समय का विस्तार और सृष्टि की गति रचनात्मक सत्ता के परिचायक हैं।

रूमी की मृत्यु 1273 ईस्वी में हुई।

निजामी: इस परम्परा के अगले वाहक निजामी थे। गंजा (काकेशिया) में जन्में निजामी ने फारसी में रचित अपनी मसनवियों में द्वारा रहस्वाद और आचारशास्त्र की सार्वजनिक व्याख्या प्रस्तुत कर तत्कालीन समाज को आश्चर्य-चकित कर दिया था। विश्व और सौर जगत की विराटता से संबंधित रहस्य जो वैज्ञानिक प्रणालियों और सुस्पष्ट गणनाओं के आधार पर बहुत बाद में खुले और प्रमाणित हुए उनका उल्लेख निजामी की रचनाओं में बहुत पहले ही आ चुका था। इस संबंध में लेखक का स्वयं का अनूदित कथन दृष्टव्य है:—

"नौ नील कंगूरों की तुलना में पृथ्वी समुद्र में अफीम के बीज की तरह है। तुम अच्छी कल्पना कर सकते हो कि तुम इस अफीम के बीज के कितने छोटे कण हो और तुम्हें तब अपने ऊपर हंसी आएगी।"

भौतिक विज्ञान के मुख्य नियम गति और स्थैर्य का निरूपण करते हुए कहते हैं:

शेष पृष्ठ 36 पर

*सैक्टर-1/200, आर०के० पुरम, नई दिल्ली-110022

उर्दू कवि इकबाल और मानव-गरिमा

—डॉ॰ राम दास 'नादार'*

इकबाल न केवल एक उच्चकोटि के कवि ही थे बल्कि एक महान दार्शनिक एवं चिन्तक भी। उन्होंने अपने जीवन-दर्शन से उर्दू-काव्य को समृद्ध किया और इसे एक अक्षुण्ण पूँजी प्रदान की। वे मानवीय गुणों और गौरव से पूर्णतः परिचित थे। उनकी दृष्टि में मानव ईश्वर की सर्वोतम और महती कृति है।

इकबाल का मानव प्रकृति का अनुकर्ता या उसका दास नहीं बल्कि वह तो प्रकृति में अभिवृद्धि करने वाला तथा उसे सुन्दर बनाने वाला है। वे लिखते हैं—

आं हुनरमन्दे कि बर फिघत फ़जूद,
राज़े खुद रा बर निगाहे मा बशूद।

(अर्थ वह एक ऐसा हुनरमन्द (कौशलयुक्त) है कि उसने प्रकृति में अभिवृद्धि की और अपने भेद को मुझ पर प्रकट किया।)

प्रकृति-विजय पर इकबाल की उत्कृष्ट और सुन्दर कविताएँ प्राप्त होती हैं। इकबाल का निम्नलिखित गीत मानव-महता का गुणगान करता है।

सितारों से आगे जहां और भी हैं,
अभी इश्क के इम्तिहां और भी हैं।
सही जिन्दगी से नहीं ये फजाएँ
यहां सैकड़ों कारवां और भी हैं।
तू शाही है परवाज़ है काम तेरा,
तेरे सामने आसमाँ और भी हैं।
किनाअत में कर आलमें रंगों बू पर,
चमन और भी आशियाँ और भी हैं।
इसी रोज़ोशब में उलझकर न रह जा,
कि तेरे जमानो मकां और भी हैं।

(अर्थः सितारों से परे और भी संसार हैं और तेरे प्रेम की अनेक परीक्षाएं और भी होनी शेष हैं। अभी वायुमण्डल जीवनरहित नहीं हुआ। यहां सैकड़ों काफिले और भी हैं। तू एक बाज है और तेरा काम उड़ना है। अभी तेरे सम्मुख अगणित आकाश विद्यमान हैं। तुझे रंग और सुगन्ध के संसार पर ही सन्तोष कर नहीं बैठे रहना चाहिए। तेरे सामने अभी और भी उपवन है। तथा और भी नीड़ हैं। तुझे दिन रात के इस संघर्ष में ही खोकर नहीं रह जाना चाहिए, क्योंकि अभी तेरे सामने स्थान और काल का विस्तृत अवकाश है।)

इक़बाल मानव को प्रकृति का विजेता समझते हैं। वे उसका गौरवमान करते हैं। उनका विश्वास है कि मानव ही समस्त सृष्टि का केन्द्रबिन्दु तथा धुरी है। सारी सृष्टि की क्रियाएं-प्रतिक्रियाएं उसके संकेत पर नृत्य करती हैं। उनका कथन है:—

उरुजे आदसे खाकी से अंजुम सहमे जाते हैं,
कि यह टूटा हुआ तारा महे कामिल न बन जाए।

(अर्थः सितारे इस पार्थिव मनुष्य के उत्थान को देखकर त्रस्त हैं। उनको डर है कि यह टूटा हुआ तारा कहीं पूर्ण चन्द्र न बन जाए। और फिर कहते हैं:

सुना है खक से तेरी नुमुद है लेकिन,
तेरी सरिश्त में है कोकबी-ओ-महताबी।

(अर्थः सुना है कि तेरा जन्म मिट्टी से हुआ है किन्तु तेरी, प्रकृति में सितारों और चन्द्रमा के-से गुण विद्यमान हैं।)

इस पर ही वे समाप्त नहीं करते। कहते हैं:—

उरुजे आदि मे खाकी के मुन्तज़िर है तमाम,
यह कहकशा यह सितारे, यह नीलग् अफलाक।

(अर्थ—आकाश गंगा, सितारे, और एक नीलाम्बर सभी मनुष्य मात्र के उत्थान की प्रतीक्षा कर रहे हैं।)

और फिर उनकी कविसम्मत सौन्दर्याभिव्यक्ति का जादू देखिए। आत्मा पार्थिव मानव का अभिवादन करती है:—

हैं तेरे तसुरुफ में ये बादल, ये घटाएँ,
ये गुंबदे अफलाक्, ये खामोश फजाएं।
ये कोह, ये सेहरा ये समुन्दर की हवाएं,
थी पेशेनज़र कल तो फरिश्तों की अदाएं।

आईनाः ए-अय्याम में आज अपनी अदा देख
समझेगा जमानः तेरी आंखों के इशारे,
देखेंगे तुझे दूर से गर्दू के सितारे।
नापैद तेरे बहे- तखय्युल के किनारे,
पहुंचेंगे फ़लक तक तेरी आहों के शरारे।।

तामीरे खुदी का असरे आहे रसा देख।
खुशीदे जहांताब की जो तेरे शरर में,
आबाद है इस ताज़ा जहां तेरे हुनर में।
जचते नहीं बख्शे हुए फिर्दोस नज़र में,
जन्नत तेरी पिन्हां है तेरे खूने जिगर में।।
ऐं पैकरे गिल, कोशिशे पैहम की जज़ा देख।

(अर्थः ये बादल, ये घटाएं, ये आकाशीय गुबंद ये मौन परिवेश में पर्वत, मरूस्थल, सागर, हवाएं सभी तेरे अधिकार, क्षेत्र में हैं। कल तक तू फरिश्तों की अदाओं पर मुग्ध था, परन्तु आज तू समय-दर्पण में अपनी अदाओं को निरख। ज़माना आज तेरी आंखों के संकेत समझेगा। आकाश के तारे तुझे दूर से देखेंगे। तेरी कल्पना के सागर के किनारे अप्राप्य हैं।

*20/80, मोती नगर, नई दिल्ली-15

अब तेरी आहों के स्फुलिंग आकाश तक पहुंचेंगे। अब तू स्वाभिमान का निर्माण कर और अपनी आहों का प्रभाव देख। संसार को दीप्त करने वाले प्रभाकर की कान्ति तेरी चिंगारियों में है। तेरे कौशल में अब एक नया विश्व आबाद हैं। तेरी दृष्टि में स्वर्ग का कोई महत्व नहीं। अब सो तेरा स्वर्ग तेरे जिगर के लहू में ही निहित है। ऐ पंकजन्य रूप, तू अपने सतत प्रयास का फल देख।)

इक़बाल का काव्य मानव-मैत्री, स्वातन्त्रय-प्रेम और मानव महता का महान् प्रतीक है। प्रकृति विजय की कल्पना विभिन्न रूप में मानव महता की कल्पना है, क्योंकि मनुष्य अन्दर गति और शक्ति का संचार हो रहा है जिससे वह कार्य प्रवृत होता है, क्योंकि यदि प्रकृति के नियम उसके मार्ग में कोई व्यवधान प्रस्तुत करतें हैं, तो वह उनके सम्मुख नतमस्तक होने की बजाए उनसे लोहा लेने को उद्यत होता है और उनपर नियन्त्रण करने का प्रयास करता है। इकबाल का मानव उत्कृष्ट शक्तियों का स्वामी है। उसका बाह्य रूप चाहे कुछ भी हो उसके अन्तराल में अमूल्य शक्तियों के खज़ाने छिपे हैं।

इकबाल के काव्य में मनुष्य और परमात्मा का सम्बन्ध स्वामी दास का नहीं बल्कि सखा का है। वे मनुष्य को परमात्मा का ही अंश मानते हैं। परमात्मा और आत्मा का एक शाश्वत सम्बन्ध है। मनुष्य ईश्वर है, इससे कुछ भिन्न नहीं, वह ईश्वर की आँखों में 'आखें डालकर उससे बातें कर सकता है, क्योंकि सृजन प्रक्रिया में वह उसके एक अधीनस्थ कार्यकर्ता के रूप में साझीदार है। इकबाल के मानव-जन्म, इब्लीस के इंकार, इकबाल और मानव, आदिम का अपक्षरण तथा स्वर्ग और पृथ्वी आदि विषयों पर अनेक रचनाएं की है और उनपर इस प्रकार से प्रकाश डाला है जो साधारण इस्लामी चिन्तन से कुछ भिन्न हैं।

इकबाल का मानव हर जगह सर ऊँचा किए दिखाई पड़ता है। वह धुन का पक्का, सशक्त और गौरवमय दृष्टिगोचर होता है। वह पाप की अनुभूति से उद्विग्न एवं प्रायश्चित करता प्रतीत नहीं होता बल्कि वह अनुभव करता है कि उसका पृथ्वीतल पर आविर्भाव ईश्वरेच्छा से एवं सप्रयोजन हुआ है। परिवर्तन की प्रक्रिया में वह ईश्वर का सहायक है और उसका हाथ बंटाता है। ईश्वर और मनुष्य के पारस्परिक सहयोग के फलस्वरूप सृष्टि का क्रम चलता है, जो मानव-महता का चरमोत्कर्ष है।

इकबाल के सम्मुख इंसान का जीवन विवशता का जीवन नहीं। वह तो स्थान और काल की सीमाओं को लांघकर अदृश्य जगत का सिंहावलोकन कर सकता है और ईश्वर का सहयोगी बन सकता है। इस मंजिल तक पहुंचने के लिए उसका संघर्ष आशा और विश्व का संघर्ष है जो मानव की महता और जनता को परिलक्षित करता है।

इकबाल का मानव सजीव है केवल पार्थिव शरीर नहीं। उसके लिए जीवन एक विकाशसील सत्य है, जो मृत्यु की गोद में जाकर समाप्त नहीं हो जाता। इकबाल का मानव अजर-अमर है। वह कभी नहीं मरता। सदा जीवित और प्राणवान रहता है। उसको मृत्यु भी नष्ट नहीं कर सकती। उसके संघर्ष का कभी अन्त नहीं होता। इकबाल का मर्देमोमिन मरता नहीं। इकबाल के काव्य में उसे पग पग पर विनाश का सामना करना पड़ता है, किन्तु वह सदा विजयी होता है, यहां तक कि मौत भी उस से हार मानती है और उसे रास्ता देती है। मरने के बाद भी वह जीवित रहता है। देखिए इकबाल क्या कहते हैं—

मौत तजदीदे मज़ाके जिन्दगी का नाम है,
ख्वाब के पर्दे में बेदारी का इक पेगाम है।

(अर्थः मौत जीवन के पुनः सर्जन का नाम है। स्वप्न के रूप में वह जागृति का सन्देश है।)

इकबाल के विचार में आत्मा अमर है, वह कभी नष्ट नहीं होतीः—

जोहरे इंसां अदम से आशना होता नहीं,
आँख से गायब तो होता है फना होता नहीं।

(अर्थः आत्मा अनस्तित्व से कभी परिचित नहीं होती। वह भले ही दृष्टि से ओझल हो जाए किन्तु नष्ट नहीं होती।)

इकबाल तो यहां तक भी कह जाते हैः—

यह भी मुम्किन है कि तू मौत से भी मर न सके।

(अर्थः- यह भी सम्भव है कि मौत से भी तू मर न सके।)

और फिर उन्हें यह कहने में भी इंकार नहीं कि मौत केवल शरीर को नष्ट कर सकती है, आत्मा को नहींः—

फ़रिश्ता मौत का छूता है जो बदन तेरा,
तेरे बुजूद के मर्कज से दूर रहता है।

(अर्थः- यमराज तेरे शरीर को तो छू सकता है, किन्तु तेरे अस्तित्व के केन्द्र से दूर रहता है।)

मौत के बाद जीवन के शेष रहने के विश्वास से इकबाल के मानव को शक्ति एवं बल प्राप्त होता है। उसकी आशाओं और आकांक्षाओं में एक नए विश्वास का संचार होता है। इकबाल ने मानव जीवन की शाश्वता और नित्यता पर साक़ीनाम मे कुछ अनुपम शेर लिखे हैं।

हुआ जब उसे सामना मौत का — कठिन था बहुत थामना मौत का।
उतर कर जहाने मुकाफ़ात में, — रही जिन्दगी मौत की घात में।
मज़ाके दुई से बनी जौज़ जौज, — उठी दश्ता कोहसार से मौज-मौज़।
गुल इस शाख से टूटते भी रहे, — इसी शाख से फूटते भी रहे।
समझते है नादां इसे बेसबात, — उभरता है मिट-मिट के नक्शें हयात।

(अर्थः जब उसे मौत का सामना हुआ तो मौत को थामना बहुत कठिन था। जीवन के प्रतिशोध के संसार में उतर कर मौत की घात में रहा। दूई की भावना के परिणामस्वरूप दो अलग-अलग अस्तित्व दिखाई पड़ते थे जैसे अरण्य और पर्वत से लहरों उठ रही हों। इसी टहनी से फूल टूटते भी रहे और फिर इसी टहनी से नए फूल फूटते भी रहे। अज्ञानी लोग इसे नश्वर समझते हैं हालांकि जीवन का बिम्ब मिट-मिट कर उभरता हैं।)

मौत और जीवन के अधर में लटका मानव मौत पर उस समय विजय प्राप्त कर लेता है जब उसके जीवन का उद्देश्य सामूहिक कल्याण बन जाता है और समस्त मानव जाति के लिए आनन्द और विश्वास की पूंजी बन कर हर्ष का संदेशवाहक बनता है।

इक़बाल के लिए जीवन एक सत्य है। वह स्थिर और गौरवपूर्ण वस्तु है जो स्वयं साधन नहीं अपितु उद्देश्य प्राप्ति का एक साधन है। उनके समीप संघर्ष से पलायन जीवन का निषेध है और पराजय भी ।

गुरेज़ु बश्मकशे ज़िन्दगी से मर्दों का,
अगर शिकस्त नहीं है तो और क्या है शिकस्त।

अर्थः यदि जीवन-संग्राम से भागना पराजय नहीं तो फिर और पराजय क्या हो सकती है जब वह अज्ञान और अविद्या के कारण अपनी शक्तियों एवं क्षमताओं को भूल जाता है, तो इकबाल उसे झंझोड़ने से भी नहीं चूकते।

आती है दमे सुबह सदा अर्शे बरीं से,
खोया गया किस तर्ह तेरा जोहरे इदाक।
किस तरह हुआ कुंद तेरा निश्तरे तहकीक,
होते नहीं क्यों तुम से सितारों के जिगर चाक।
तू ज़ाहिरों बातिन का खिलाफ का सज़ावार,
क्या शोला भी होता है गुलामें खसो खाशाक,
मिहो महो ऊंजुम नहीं महकूम तेरे क्यों,
क्यों तेरी निगाहों से लरज़ते नहीं अफ्लाक।

(अर्थः- प्रातः ही अन्तिम आकाश से यह आवाज आती है कि तेरी चेतना शक्ति का सत्व कैसे खो गया है और तेरी शोधशक्ति का शल्ययन्त्र किस प्रकार कुण्ठित हो गया है, अब तू सितारों के जिगर क्यों नहीं चीर सकता। तेरे अन्तर-बाह्य में विरोध है और इसका तू स्वयं उतरदायी है। क्या कभी अंगारा भी घास-फूस का दास बन सकता है। सूर्य, चन्द्र और सितारे तेरे अधीन क्यों नहीं और तेरी दृष्टि से अब आकाश क्यों नहीं कांपते।)

यहां इस बात का भी संकेत प्राप्त होता है कि इकबाल का मानव सर्जन और निर्माण का प्रतीक होने के साथ-साथ जहां परिश्रमी है, वहां अहानिकारक होने के साथ-साथ उससे रक्तपात की भी बू आती है। शायद वे अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध विनाशकारिणी शक्ति के प्रयोग को भी मानवीय गौरव मानते हैं। यह मानवीय महता का एक और अंश है और मानव-कर्तव्य में सम्मिलित है।

पृष्ठ 33 का शोषांश

"प्रत्येक बुद्धिमान व्यक्ति के मस्तिष्क में यह बात है कि प्रत्येक चल-वस्तु के पहियों के पीछे उसका चालक है। एक वृद्धा चर्खा चलाती हैं, आकाश के पहियों के भी विषय में तुम वही देख सकते हो। जब उस परम बुद्धिमान का हाथ किसी वस्तु को चलाता है, तब वह कुछ समय तक चलती रह सकती है।"

इसकी मृत्यु 1204 ई० में हुई।

सादीः "युग के अंतिम कवि" की उपाधि से विभूषित मुर्शाफदीन मुस्लेह अब्दुल्ला "सादी" इस निकाय के उन महत्वपूर्ण रचनाकारों में से हैं जिन्होंने अपने विशिष्ट उद्बोधन गीतों के माध्यम से विश्व जनमानस को आचार-विचार और आध्यात्मिक चिंतन की शिक्षा दी। इनके द्वारा रचित उद्बोधन गीतों में से "मानवता" पर ही विशेष बन दिया गया है। साहित्य सृजन चाहे किसी भी भाषा में हो उसका मूल उदेश्य मानव कल्याण ही होता हैं, ऐसा उनके गीतों में देखा जा सकता है। "मनुष्य के शरीर में आत्मा की स्थिति होने से शरीर पवित्र हो जाता है, स्वयं आकर्षक परिधान मानवता का प्रतीक नहीं है। यदि नेत्र, मुख्यकान और नाक के आधार पर हम मनुष्य होने का दरवा करें तो भित्ति-चित्र और मनुष्य में क्या अंतर रह जाएगा? वास्तव में मनुष्य बनों, क्योंकि पक्षी भी मनुष्य की बोली बोल सकता है।

क्या तुम मनुष्य नहीं जो शौतान के शिकार हो गए हो, क्योंकि मानव विकास में देवदूत भी प्रवेश नहीं पा सकते?

यदि तुम्हारी प्रकृति का यह पशुत्व नष्ट हो जाए तो तुम अपनी आत्मा के सहारे सदैव जीते रहोगे।"

ये शीराज में रहे और इनकी मृत्यु 1291 ई० में हुई। हाफिज -स्वर्गिक रहस्यों के व्याख्याता" या "अदृश्य की जिह्वा" जैसे गीतों के रचयिता शीराना के संत ऊँचाइयों को छुआ है जिसे फारसी साहित्य के अन्य कवियों के लिए दुर्लभ माना जा सकता है।

उनमें सौंदर्य के प्रति गंभीर रूचि, जन्मजात वक्तत्व तथा युबीन सभ्यता का गंभीर ज्ञान था जो इस साहित्य के अन्य कवियों के लिए सहज नहीं था। उन्होंने अपनी रचनाओं में पूर्ववर्ती कवियों की अपेक्षा कुरान को अपनी रचनाओं का अधार बनाया। उन्होंने अपने काव्य में नैसर्गिक रहस्यों तथा दार्शनिक और रहस्यवादी तथ्यों का निरूपण एक साथ किया है।

वहशीः किरमान के एक गांव में जन्में वाफक वहशी प्राकृतिक सौंदर्य के एक भावविभोर कवि तथा सजग दृष्टा थे। उनकी रचनाएं ज्वलन्तप्रेम से भरे हृदय तथा कल्पनाओं से भरे मस्तिष्क का परिचय देती हैं। उनके जीवन का अधिकांश भाग मरूभूमि में बीता। इसी कारण उनकी रचनाओं में सामाजिक संस्कारों की अनुभूतिजन्य पीड़ा दिखाई पड़ती है। गुरूतावाकर्षण के सिद्धान्त की खोज से बहुत पहले वहशी ने इस अस्पष्ट रूप में खोज ही नहीं लिया था बल्कि एक सुन्दर अनुच्छेद में उसका विवेचन भी किया था। अनुवाद दृष्टव्य हैः—

"प्रत्येक कण में एक नृत्यशील कामना है जो उसे एक विशेष केन्द्र की ओर खींचती है।

स्वर्गिक तथा पृथ्वी की प्रत्येक वस्तु की प्रत्येक गतिविधि, जिसे तुम देखते हो, इसी काम के कारण है।

केवल एक यही कामना, एक मात्र यही कामना विष्मान है।"

जामीः— इस निकाय के अंतिम कवि जिन्हें विश्वकोष ज्ञान का समन्वित भंडार कहा जाता है, ने इस्लामी संस्कृति के विकास की नौ सदियों के बीच इस्लामी परम्पराओं को विकासित करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। यद्यपि उनके स्रोत का अधार अरबी ग्रंथ ही थे फिर भी उन्होंने अपने द्वारा रचित "सप्तकी" में विचारोतेजक विषय वस्तु का एक विशाल संग्रह संलकत किया है जिसमें फारसी काव्य की सात सुन्दर मसनवियां हैं।

अंतर्राष्ट्रीय क्षितिज पर फारसी काव्य के इन्हीं महान सर्जकों के योगदान के कारण ईरान की सांसकृतिक विरासत आज भी अक्षुण्ण और चिरस्मरणीय है।

□

भारतीयता में रंगे अब्दुर्रहीम खानखाना

विश्वंभर प्रसाद "गुप्त-बंधु",*
एफ०आई०ई० (इं), विशारद (द्वय)

अब्दुर्रहीम खानखाना मुगल सम्राट अकबर के नव-रत्नों में से एक थे। हिंदी साहित्य को उनकी देन महत्वपूर्ण है। उनके बहुत से दोहे जन-जन के कण्ठहार बन चुके हैं और अत्यंत सरल वाणी में कहे हुए उनके विचार लोगों के लिए कल्याण का पथ-प्रशस्त करते हैं। उदाहरण के लिए एक दोहा:

'रहिमन' वे नर मर चुके जे कहुँ माँगन जाहिं।
तिनते पहिले वे मुए जिन मुख निकसत 'नाहिं'।

कितना सरल और कितना गंभीर है। खानखाना कितनी उचच कोटि के साहित्य कार थे, हिन्दी साहित्य के इतिहास के पन्नों में इसका गौरवपूर्ण उल्लेख है। गोस्वामी तुलसीदास ने अच्छे साहित्य की कसौटी रखी है:

"कीरति भनिति भूति भलि सोई।
सुरसरि सम सब कहँ हित होई।" (मानस, बालकाण्ड 14/5)

अर्थात् कीर्ति, साहित्य और ऐश्वर्य वही अच्छे कहे जा सकते हैं जो गंगा के समान जन-जन के लिए, धनी-निर्धन, साक्षर-निरक्षर, विशिष्ट-सामान्य सभी मनुष्यों के लिए हितकर हो। रहीम का साहित्य इस कसौटी पर खरा उतरता है, इसका प्रमाण यही है कि उनके बहुत से दोहे और बरवै लोगों को कंठस्थ हैं।

किंतु इस लेख का उद्देश्य उनके साहित्य की प्रशंसा करना नहीं, वरन् उसमें से झलकती भारतीयता का दिग्दर्शन कराना मात्र है। वे मुसलमान थे और उनकी उपाधि "खानखाना" ही यह सिद्ध करती है कि वे भारतीय मूल के नहीं थे। फिर भी वे भारतीय थे, भारतीय दर्शन और भारतीय संस्कृति से ओत-प्रोत। उपर्युक्त दोहे को ही देखिए: उन्होंने भीख मांगना अत्यंत निकृष्ट कर्म बताया है और कहा है कि भीख मांगने वाले मरे हुए के समान हैं। अब मनुस्मृति का यह श्लोक देखिए:

"विद्या, शिल्पं, भृतिः, सेवा, गोरक्ष्यं, विपणिः, कृषिः।
धृतिः, भैक्ष्यं, कुसीदं च दश जीवन हेतवः
11 ("मनुस्मृति 10/16)

अर्थात् धन कमाने के दस साधन (उत्तरोत्तर निकृष्टता के क्रम से) ये हैं: अध्ययन-अध्यापन करना, शिल्प-विज्ञान, किसी के घर नौकरी करना, किसी संस्था की सेवा करना, गो-रक्षा अर्थात् पशु-पालन, दुकान या व्यापार करना, खेती करना, सन्तोष पूर्वक जो मिल जाए उस पर ही गुजर करना, भिक्षा मांगना और व्याज कमाना या साहूकारा, सूदखोरी। यहां भीख मांगना प्रायः निकृष्टतम श्रेणी का (दस पेशों में से नवां) है और ब्याज कमाना इससे भी बुरा है। किसी को सूदखोर कह देना गाली देने के समान है और अंग्रेजी के प्रसिद्ध नाटककार शेक्सपीयर ने तो अपने सूदखोर पात्र शाइलाक को सारे संसार की घृणा का पात्र ही बना छोड़ा है। काम करते हुए ही जीवन-यापन करना वैदिक संस्कृति का मूल है, तभी तो भीख मांगना और ब्याज खाना पाप है। यजुर्वेद कहता है:

"कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।
"(यजु० 40/2, ईशोपनिषद्)

अर्थात् कर्म करते हुए ही हम सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करें। मुफ्तखोरी या खाट में पड़े-पड़े खाना भारतीय संस्कृति में वर्जित है।

फिर दोहे के अगले चरणों में रहीम ने दान देने से इनकार करने वालों की भर्त्सना की है। अदान भावना अभारतीय है। ऋग्वेद कहता है:
मा प्र गाम पथो वयं मा यज्ञादिन्द्र सोमिनः। मान्तः स्थुर्नो अरातयः।।
"(ऋग्वेद 10/57/1)

अर्थात् हम वैदिक पथ से कभी विचलित न हों, ऐश्वर्य की इच्छा वाले हम कभी सौम्य गुण वाले परमात्मा के निमित्त यज्ञों (श्रेष्ठ कार्यों या लोक-कल्याण कार्यों) का त्याग न करें और हमारे अंदर अरातयः (अदान-भावनाएं) न हों, अर्थात् हम दानी बनें। यज्ञ-मय जीवन अर्थात् दान करते हुए जीने की ही अनुमति वेद में है: "तेन त्यक्तेन भुंजीथाः" (यजुर्वेद 40/1, इशोपनिषद 1) इसलिए त्याग करके भोग करो। पुनः-

"इन्द्रं वर्द्धन्तो अप्तुरः। कृण्वन्तो विश्वमार्यम्। अपघ्नतो अराव्णः।।
(ऋग्वेद 9/63/5)

अर्थात् विश्व को श्रेष्ठ बनाते हुए, जीवात्मा को बढ़ाते हुए, त्वरा सहित कर्म साधना सम्पन्न करते हुए और कृपणताओं (अदान-भावनाओं) को दूर भगाते हुए (हमें इस संसार में विचरना-व्यापना है)।

कहने की आवश्यकता नहीं कि वेद और स्मृति में कर्म, त्याग, दान आदि के संबंध में इतने विस्तार से कहे हुए विचारों का सार मात्र एक दोहे में इस खूबी से कह देना कि वह जन-जन के गले उतरकर हृदय में गहरे पैठ जाए और जिह्वा पर भी नाचता रहे, रहीम जैसे मर्मज्ञ का ही काम है। वे तुलसी से बहुत प्रभावित थे, उनके प्रशंसक थे और पत्राचार द्वारा संपर्क बनाए रखते थे। कहां रहीम शाही दरबार के कवि-रत्न, और कहां निःस्व तुलसी जिनके लिए 'मांगि के खाइबो, मसीत को सोइबो" रोज का काम था, फिर भी जो भारतीय संस्कृति का एक सर्व-सुलभ, लोकोपयोगी भाष्य

*बी-154, लोक विहार, दिल्ली-110 034

शेष पृष्ठ 41 पर

वर्ष 1993 का हिन्दी का साहित्यिक-सांस्कृतिक परिदृश्य

डा० सर्वदानन्द द्विवेदी*

वर्ष 1993 की पूर्व संध्या पर हिन्दी की प्रमुख पत्रिका "साप्ताहिक हिन्दुस्तान" का प्रकाशन बन्द हुआ। इसकी संपादक मृणाल पाण्डेय को दैनिक हिन्दुस्तान का संयुक्त संपादक बनाया गया। बाद में समाचार संपादक बनाया गया। राजस्थान पत्रिका के संस्थापक-संपादक कर्पूरचन्द कुलिश को मीडिया इंडिया द्वारा प्रायोजित "सीता-पुरस्कार प्रदान किया गया।

दिल्ली में नव दिवसीय बाल पुस्तक मेले का आयोजन और 41 वें अन्तराष्ट्रीय फिल्म महोत्सव का आयोजन हुआ। म०प्र० हिन्दी साहित्य सम्मेलन भोपाल के अधिवेशन में सर्वश्री प्रभात त्रिपाठी। सुधीर सक्सेना, तेजिंदर और वालेश्वर प्रसाद शर्मा की वर्ष 1991 में प्रकाशित कृतियों पर "वागीश्वरी पुरस्कार" और प्रो० प्रमोद वर्मा को "भवभूति अलंकार प्रदान किया गया।

के०के० बिड़ला फाउंडेशन द्वारा प्रायोजित 'द्वितीय सरस्वती पुरस्कार' ओड़िया साहित्यकार रमाकान्त रथ को उनकी काव्यकृति "श्री राधे" पर प्रदान किया गया और प्रो० शिव प्रसाद सिंह (वाराणसी) के उपन्यास "नीला चांद" पर उन्हें (व्यास पुरस्कार) दिया गया। कलकत्ता में पुस्तका मेले का आयोजन हुआ। हिन्दी अकादमी दिल्ली में राहुल सांस्कृत्यायन जन्मशती का आयोजन किया।

के०के० बिड़ला फाउंडेशन द्वारा संस्कृत का वर्ष 1992 का वाचस्पति पुरस्कार रणबीर संस्कृत विद्यापीठ जम्मू के प्राचार्य डा० जगन्नाथ पाठक को दिया गया। तथा "बिहारी पुरस्कार" नन्द चतुर्वेदी (उदयपुर) को उनकी काव्य कृति "यह समय मामूली नहीं पर दिया गया।

"प्रतियोगिता दर्पण" पत्रिका के संस्थापक संपादक महेन्दर जैन को इंटनेशनल फेलोशिप सोसायटी आफ इंडिया, दिल्ली ने 'विजय रत्न अवार्ड" से सम्मानित किया। प्रसिद्ध कन्नड़ लेखक यू० आर० अनंतमूर्ति को साहित्य अकादमी का अध्यय और उड़िया लेखक रमाकान्त रथ को उपाध्यक्ष चुना गया। हिन्दी भाषा के प्रतिनिधि के रूप में भीष्म साहनी चुने गए।

अखिल भारतीय पत्रकार निलयम दिल्ली ने डा० श्याम सिंह "शशि का सास्वत सम्मान किया गया। साहित्य अकादमी के वर्ष 1992 के पुरस्कारों से 21 लेखकों सहित श्री गिरिराज किशोर को उनके हिन्दी उपन्यास "ढाई घर" पर "अकादमी पुरस्कार" प्रदान किया गया।

गत 17 वर्षों में आयोजित हो रहे पुस्तक मेले की श्रृंखला में 18वां पुस्तक मेला कलकत्ता में सपन्न हुआ। नरेश मेहता को वर्ष 90-91 का 28वां ज्ञानपीठ पुरस्कार दिया गया।

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान ने अखिल भारतीय सर्वभाषा सम्मेलन का आयोजन किया व राष्ट्रकवि सोहन लाल द्विवेदी की जयंती मनायी गई श्री कमलेश्वर और नवभारत टाइम्स के पत्रकार आलोक मेहता को राष्ट्रीय एकता व सौहार्द विषयक "हार्मोनी पुरस्कार" दिल्ली में दिए गए। हास्य-व्यंग्य के "काका हाथरसी" पुरस्कार से नागपुर के मधुप पाण्डेय को समलंकृत किया गया।

केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद की आशुलिपि, टंकण, टिप्पण प्रारूपण, हिन्दी निबंध तथा वैज्ञानिक लेखा प्रतियोगिता के प्रथम पुरस्कार क्रमश हरीशचंद विष्ट (दिल्ली), यशवंत भोपटकर (इन्दौर), विजय कुमार कश्यप (दिल्ली), वी० वेंकटरमण (उज्जैन) और देशराज नागपाल (कानपुर) को दिए गए।

बिहार सरकार ने राज्य के 54 साहित्यकारों को पुरस्कृत कर सम्मानित किया।

राजस्थान साहित्य अकादमी ने एक विशेष समाहरो में अठारह जाने माने लेखकों को वर्ष 1992-93 के लिये वार्षिक साहित्यिक पुरस्कारों से सम्मानित किया। सर्वोच्च साहित्यिक "मीरा पुरस्कार" कोटा के डा० कन्हैया लाल शर्मा को उनकी पुस्तक "पूर्वी राजस्थानी उद्भव एवं विकास के लिये दिया गया।

डा० रामप्रसाद को उनके काव्य संग्रह "तुम एक इच्छा हो" के लिये 'सुधीन्द्र' पुरस्कार से सम्मानित किया गया। तीन जाने माने साहित्यकारों डा० रामेश्वर खंडेवाल, डा० हेतु भारद्वाज तथा डा० बद्रीप्रसाद पंचोली को भी समारोह में सम्मानित किया गया।

भोपाल में मध्य प्रदेश फिल्म विकास निगम ने वर्ष 1992 में बनी हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ फिल्मों का उत्सव आयोजित किया। इस बार श्री श्याम बेनेगल की नयी फिल्म "सूरज का सातवां घोड़ा" को वर्ष की सर्वश्रेष्ठ फिल्म और सर्वश्रेष्ठ निर्देशन का पुरस्कार मिला। "सूरज का सातवां घोड़ा" हिन्दी प्रदेश के निम्न मध्य वर्गीय जीवन को प्रामणिकता, मार्मिकता और कलात्मकता के साथ चित्रित करती है। सिनेमाई बुनावट के स्तर पर भी यह फिल्म नयी उंचाइयां हासिल करती है। धर्मवीर भारती के प्रख्यात हिन्दी उपन्यास पर आधारित यह फिल्म मूल कृति के साथ न्याय करते हुए एक सिनेमाई कृति की विश्वसनीयता को भी सिद्ध करती है।

उल्लेखनीय है कि पिछले वर्ष हिन्दी में अनेक अच्छी फिल्में एक साथ बनीं। "माया मेमसाहब", "रूदाली", "सूरज का सातवां घोड़ा", मुझसे दोस्ती करोगे", जो जीता वही सिकंदर", "राजू बन गया जैंटलमैन", आदि अनेक फिल्में 1992 में बनीं।

गैर हिन्दी भाषी क्षेत्रों के 15 हिन्दी लेखकों को हिन्दी साहित्य में उनके

*ग्राम व डाकखाना-घाना, जि० उन्नाव (उ० प्र०)

योगदान के लिए 1991-92 के राष्ट्रीय हिन्दी पुरस्कारों से सम्मानित किया। इस साल के 'कुसुम कुमारी' पुरस्कार पाने वालों के नाम हैं- इंदर राज शर्मा, डा० नरेश चंदन नेगी (पंजाबी) मनोहर बंदोपाध्याय (बंगला) लीता तलरेजा (सिंधी), पी० वेंकटाचारी (तमिल) रवीन्द्र केलेकर (कोकंणी), डा० दमोदर खडसे (मराठी), डा० उपेन्द्र रैना, प्रो० हरिकृष्ण कौल (कश्मीरी) डा० एन०एस० दक्षिणामूर्ति (तेलुगू), डा० एन०पी० कुट्टन पिल्लै, डा० शीला रजाक (मलयालम), डा० माधुरी छेदा, आबिद सुरती (गुजराती) और डा० पी० एच० सतमाधव राव (कन्नड़)।

दिल्ली में 16वां अखिल भारतीय नागरी लिपि सम्मेलन हुआ। प्रधान मंत्री की अध्यक्षता में केन्द्रीय हिन्दी समिति का पुनर्गठन किया गया। भारतीय भाषा परिषद कलकत्ता ने रमेशचन्दर शाह को हिन्दी साहित्य के लिए पुरस्कृत किया।

गोपोल प्रसाद व्यास को वर्ष 1993 का "अट्टहास शिखिर पुरस्कार" लखनऊ में दिया गया । संस्कृति प्रतिष्ठान नई दिल्ली ने साहित्य पत्रकारिता कला एवं सामाजिक सांस्कृतिक क्षेत्र में विशिष्ट उपलब्धियों वाले पांच व्यक्तियों को वर्ष 1992 के "संस्कृति पुरस्कार" दिए।

पी०टी० आई० के मीनाषी सुन्दरम् "भाषा" के सुरेन्द्र मोहन तरूण, यू०एन०आई० के एम०के० लाल, "यूनीवार्ता" के सुभाष निगम", नवभारत टाइम्स के विन्गेद हर्ष, "दैनिक हिन्दुस्तान" की शैल बाला, "पंजाब केसरी" के चेतन शारदा, "जनसत्ता के ओम प्रकाश, "राष्ट्रीय सहारा" के आशुतोष अग्निहोत्री, दूरदर्शन के जगमोहन भसीन सहित भोपाल के 'नवभारत टाइम्स" गाजियाबाद के "प्रलयंकर सांध्य-दैनिक आदि 26 पत्र-पत्रकारों को 17वें "मातृ श्री" पुरस्कारों से समलंकृत किया गया।

भारतीय भाषा संरक्षण दिल्ली के पदाधिकारियों को संघ लोक सेवा आयोग के सामने धरना देने के कारण गिरफ्तार किया गया। न्यायालय ने रिहा किया और पुलिस ने फिर गिरफ्तार किया। हिन्दी अकादमी दिल्ली ने डा० नामवार सिंह को वर्ष 90-91 के "शलाका-सम्मान" के साथ ही प्रो० विजयेन्द्र स्नातक विष्णचंद शर्मा, प्रभाष जोशी, रामशरण जोशी व विनोद दुआ को भाषा, साहित्य, पत्रकारिता और राजभाषा प्रचार के लिए "साहित्यकार-सम्मान" दिया।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग का वार्षिक अधिवेशन 20-21 मार्च 93 को दिल्ली में हुआ। भारतीय प्रकाशक संघ द्वारा दिल्ली में आयोजित भारतीय भाषाओं के प्रकाशकों के राष्ट्रीय सम्मेलन में हिन्दी प्रकाशक श्री कृष्ण चंद बेरी सहित 13 प्रकाशकों को "प्रकाशक-सम्मान" से समलंकृत किया गया।

हिन्दी प्रचारिणी समिति कानपुर का रजत जयंती समारोह उपराष्ट्रपति के मुख्य आतिथ्य में संपन्न हुआ। कानपुर विश्व विद्यालय ने अपने 11वें दीक्षोपरान्त सम्मेलन के अवसर पर उपराष्ट्रपति के हाथों शिक्षा शास्त्री आचार्य पं० अयोध्यानाथ शास्त्री साहित्यकार विदान सिंह चौहान और सांसद अटल बिहारी वाजपेयी को डी० लिट् की मानव उपाधि से समलंकृत किया। गिनीज बुक पब्लिकेशन्स के सहयोग से "गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड" का हिन्दी व मलयालम संस्करण हिन्दी पाकेट बुक्स दिल्ली ने प्रकाशित किया।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा 23-24 अप्रैल, 93 को कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में कुरूक्षेत्र गणित शोध-गोष्ठी 93 का आयोजन हुआ।

उ०प्र० हिन्दी साहित्य सम्मेलन के मेरठ अधिवेशन में बद्री नारायण तिवारी संयोजक मानस-संगम कानपुर का सारस्वत-सम्मान किया गया। विश्व विद्यालय अनुदान आयोग दिल्ली के हिन्दी सलाहकार डॉ० बरसाने लाल चतुर्वेदी की अध्यक्षता में सूरदास का जन्म दिवस-समारोह आयोजित किया गया।

साहित्य कला-परिषद दिल्ली ने डॉ० कपिला वात्स्यायन को "परिषद-सम्मान" से समलंकृत किया। विश्व विद्यालय अनुदान आयोग ने हिन्दी भाषी प्रदेशों में इंजीनियरिग की स्नातक स्तर की पढ़ाई हिन्दी-माध्यम से करने का अनुमोदन किया। व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई को वर्ष 92-93 के "शरद जोशी पुरस्कार" से मध्य प्रदेश में पुरस्कृत किया गया।

संगीतकार आर० डी० बर्मन को "लता मंगेशकर पुरस्कार" बम्बई में दिया गया। भारती प्रसार परिषद बम्बई ने डा० उषा मेहता (बम्बई) को उनकी हिन्दी सेवाओं के लिए वर्ष 1992 का "भारती गौरव पुरस्कार" दिया। आथर्स गिल्ड आफ इंडिया का तीन दिवसीय वार्षिक सम्मेलन दिल्ली में हुआ। श्री लाल शुक्ल (दिल्ली) को हरियाणा सरकार का "शरद जोशी पुरस्कार" दिया गया।

वर्ष 91-92 का "श्रीकान्त वर्मा पुरस्कार" कवि वीरेन डंगवाल को उनकी काव्य-कृति "इसी दुनियां में" पर दिया गया। महाकवि काली शोध केन्द्र उरई (उ०प्र०) में मानस संगम से संयोजक श्री बद्रीनारायण तिवारी (कानपुर) को "आयाचन्द माहेश्वरी सम्मान" प्रदान किया। पांचाल शोध संस्थान कानपुर का सातवां वार्षिक अधिवेशन कानपुर में संपन्न हुआ। हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग का 45वां अधिवेशन 14-15 मई को पटना में संपन्न हुआ। हिन्दी साहित्यकार सम्मेलन के प्रधान मंत्री डॉ० प्रभात शास्त्री को संस्कृत साहित्य की उत्कृष्ट सेवाओं के लिए सम्मानित किया गया।

अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन एवं मणिपुरी संस्कृति-दर्शन का आयोजन इंफाल में 21 मई को हुआ। जवाहर लाल नेहरु विश्व विद्यालय के प्रो० नामवर सिंह को शोध में उल्लेखनीय योगदान के लिए प्रोफेसर एमिरेट्स" की उपाधि प्रदान की गई।

सूरीनाम में 5 जून से 7 जून, 93 तक तीन दिवसीय अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी सम्मेलन हुआ। पश्चिम बंगाल हिन्दी अकादमी स्थापना के अवसर पर उपन्यासकार श्री भैरव प्रसाद गुप्त को "राहुल पुरस्कार" एवं श्री बालकृष्ण हर्ष को "प्रेमचन्द पुरस्कार" प्रो० सत्यस धन चक्रवर्ती ने कलकत्ता में प्रदान किया।

भारतीय मूल के नागरिकों के लिए सूरिनाम में सांसद होने के लिए हिन्दी भाषा का जानना अनिवार्य किया गया। मातृभाषा मुक्तिवाहिनी एवं विश्व विद्यालय विचार मंच दिल्ली ने हर स्तर पर अंग्रेजी की अनिवार्यता समाप्त करने की मांग की। सिविल सेवा परीक्षा 1993 के राजनीति विज्ञान के प्रश्न पत्र के हिन्दी भाषा में अनूवादित प्रश्न सं० 29 में "ब्यूरोक्रेसी" को गलत अनुवाद "जनतंत्र" रूप में किया गया। हिन्दी माध्यम के प्रतियोगियों ने इस पर संघ लोक सेवा आयोग को एक ज्ञापन दिया।

देश के एक मात्र "माधव राव सप्रे समाचार पत्र संग्रहालय, भोपाल" ने मध्य प्रदेश के वयोवृद्ध पत्रकार श्री धन्नालाल शाह को वर्ष 1993 के "लाल बलदेव सिंह पुरस्कार" से सम्मानित किया। दक्षिण भारत

हिन्दी-प्रचार सभा केरल के तीन दिवसीय अमृतोत्सव-सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए केरल के परिवहन मंत्री आर० बालकृष्ण पिल्ले ने केरल, में पहली कक्षा से ही हिन्दी की पढ़ाई पर जोर दिया।

संघ की भाषा-नीति के सर्वश्रेष्ठ कार्यान्वयन के लिए राष्ट्रपति ने दि० 26-6-93 को "इंदिरा गांधी राजभाषा शील्ड" से नेशनल अल्यूमिनियम कम्पनी भुवनेश्वर को पुरस्कृत किया। मध्य प्रदेश साहित्य परिषद भोपाल ने रमेशचन्द्र शाह कृत "नदी भागती आयी" को "भवानी प्रसाद मिश्र पुरस्कार" प्रभु जोशी की लम्बी कहानियों पर "वीर सिंह देव पुरस्कार" तथा सुरेन्द्र वर्मा की कृति "एक दूनी एक" पर "सेठ गोविन्द दास पुरस्कार" और वीरेन्द्र जैन के उपन्यास "डूब" पर "वीर सिंह देव पुरस्कार" दिया।

गाजियाबाद में गोपालदास "नीरज" को "कुंबर वैधेन" पुरस्कार दिया गया। इसी अवसर पर कवि नित्यानन्द तुषार को "युवा-कवि पुरस्कार" भी दिया गया। क्रिएटिव न्यूज फाउंडेशन दिल्ली ने अपनी हिन्दी मासिक पत्रिका की द्वितीय वर्ष गांठ पर डॉ० गिरिजा व्यास को (साहित्य), कमल शेखरी, महेश दर्पण को पत्रकारिता और हबीब तनवीर व माला हाशमी को कला के लिए "क्रिएटिव न्यूज अवार्ड" 93 से सम्मानित किया।

श्री प्रकाश शातम्ब्रेकर (बम्बई) को मराठी से हिन्दी अनुवाद पर और सुश्री बी० आई० ललिताम्बा (इंदौर) को कन्नड़ से हिन्दी अनुवाद पर भारतीय अनुवाद परिषद "दिल्ली ने पुरस्कृत किया। नागरी सथापना के सौ वर्ष पूरे किए। तुर्की विश्वविद्यालय की हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ० नूरजहां बेगम ने हिन्दी संगोष्ठी का आयोजन किया।

केन्द्र सरकार ने, राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान दिल्ली की वैज्ञानिक डा० प्रतिमा जौहरी की हिन्दी में लिखी पुस्तक "गहन समुद्र में बहुधात्विक पिंडिकाएं" को द्वितीय पुरस्कार दिया। डॉ० शिव मंगल सिंह "सुमन" को उ०प्र० हिन्दी संस्थान के "भारत-भारती पुरस्कार" से समलंकृत किया गया। युवा कवि अनिल कुमार सिंह इलाहबाद को "कथा" पत्रिका में प्रकाशित उनकी कविता "अयोध्या 1991" को वर्ष 1993 का "भारत-भूषण पुरस्कार" दिया गया।

गुजरात में हिन्दी अकादमी की स्थापना हुई। कुबेरनाथ को उनके निबंध संग्रह "कामधेनु" पर 10वां मूर्ति देवी पुरस्कार प्रदान किया गया। श्रीमती मीनाक्षी सिन्हा दिल्ली को बिहार सरकार के राजभाषा पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 30 माह की ताला बंदी के बाद कलकत्ता के दो प्रमुख समाचार पत्र "युगान्तर और "अमृत बाजार पत्रिका" समाचार पत्र पुनः प्रकाशित हुए।

अन्तर्राष्ट्रीय कला एवं संस्कृति परिषद (नजीबाबाद) के संस्थापक संरक्षक श्री सुभाष चन्द अग्रवाल ने 30 अक्टूबर, 1993 को होने वाले सप्तम् साहित्यिक कुम्भ के लिए कुसुम अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान के नामों की घोषणा में एक प्रैस विज्ञप्ति जारी करते हुए बताया कि इस वर्ष समग्र लेखन पर 11,000 रुपये के पुरस्कार के लिए केरल के डा० नूरपि ईश्वर विश्वनाथ अयय्र का चयन किया गया है। उन्होंने बताया कि 2000, 2000 रुपयों वाले कथा वर्ग में बिहार के श्री सी० भास्करराव के "दिशा" उपन्यास को, काव्य वर्ग में महाराष्ट्र की सुश्री पद्मजा घोरपड़े की काव्यकृति "जख्मों के हाशिये" अनुवाद वर्ग में आंध्र प्रदेश के डा० एम० रगैय्या की पुस्तक "हम सब एक है" विविध वर्ग में तमिलनाडु के श्री शौरिराजन की पुस्तक "दक्षिण भारत की काव्य कथाएं" पत्रिका सम्पादन् वर्ग में पश्चिमी बंगाल की "अनुवाद पत्रिका" के सम्पादक श्री वैशम्पायन घोषाल को, राजभाषा हेतु गोवा शिपयार्ड वास्को द गामा (गोवा) के हिन्दी अधिकारी श्री की० रोराय्या और शोध समीक्षा वर्ग में, "हिन्दी रीति काव्य तथा तमिल संगम काव्य में श्रृंगार निरुपण का तुलनात्मक अध्ययन ग्रंथ के लेखक तमिलनाडू के डॉ० टी०एस० कुप्पुस्वामी को (मरणोपरान्त) 3500 रुपये का पुरस्कार सम्मान दिया जायेगा। प्रकाशन वर्ग में नई दिल्ली के श्री ऋषभचरण जैन एवं सन्तति प्रकाशन को चल वैजयन्ती सहित 5000 रुपयों के पुरस्कार के सम्मनित किया जाएगा।

समारोह के मुख्य अतिथि सिक्किम उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति श्री एस० एन० भार्गव थे। विशिष्ट अतिथि पोलेन्ड के भारत में राजदूत प्रो० मा० प्रक्षातोफ बृस्की, चैक के भारत में राजदूत डा० आदोलेन स्मेकल व गढ़वाल विश्वविद्यालय के कुलपति डा० बी० एस० राजपूत होगें। सम्मान में उक्त राशि के अतिरिक्त प्रशस्तिपत्र एवं प्रतीक भी प्रदान किये जाते है।

यह सम्मान माता कुसुम कुमारी अंतर्राष्ट्रीय हिंदीतर भाषी हिंदी लेखन सम्मान के अंर्तगत हिन्दीतर भाषियों को उनके उल्लेखनीय प्रकाशित हिन्दी साहित्य पर 1947 से प्रति वर्ष साहित्यिक कुम्भ पर दिया जाता है।

कवि लीलाधर जगूड़ी को उनके काव्य संग्रह "भय भी शक्ति देता है" पर 'पल-प्रतिपल" के संपादक देश निर्मोही और "आधार प्रकाशन" नई दिल्ली द्वारा संयुक्त रूप से वर्ष 1991 में प्रारम्भ किये गये "रधुबीर सहाय स्मृति पुरस्कार वर्ष 1993" से सम्मानित किया गया। महावीर प्रसाद केड़िया हिन्दी साहित्य संस्थान गोरखपुर ने मनोहर श्याम जोशी को उनके कहानी-संगह "मंदिर के घाट की पेड़ियों पर "शारदा पुरस्कार" दिया।

भारतीय दलित साहित्य अकादमी दिल्ली ने साहित्कार-पत्रकार राजशेखर व्यास को वर्ष 1993 के "डा० अंबेदकर विशिष्ट सेवा सम्मान" से पुरस्कृत किया। उत्तर प्रदेश की हिन्दी-उर्दू साहित्य समिति ने कथाकार गुलशेर खां "शानी" को हिन्दी पुरस्कार से सम्मानित किया। वाराणसी में प्रथम राष्ट्रीय पुस्तक मेला 11 से 19 सिंतबर तक शिक्षाविद् प्रो० करूणापति त्रिपाठी की अध्यक्षता में हुआ। मेले का उद्घाटन कवि त्रिलोचन ने किया। मारिशस की हिन्दी की पाठ्य पुस्तकों में कबीर, तुलसी, सूर, मीरा की वाणियां सम्मिलित की गई हैं।

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान आगरा ने शायर नजीर "बनारसी" को "सुब्रहमण्यम स्वामी पुरस्कार" वाराणसी में श्री शंकर दयाल सिंह ने प्रदान किया। विश्व हिन्दी समिति न्यूयार्क के संस्थापक श्री रामेश्वर अशांत ने 12 से 19 सितम्बर" 93 तक न्यूयार्क में हिन्दी सप्ताह का आयोजन किया। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के महासचिव डा० प्रभात शास्त्री ने 17 से 19 सितम्बर 93 तक सम्मेलन का अधिवेशन पुरी में आयोजित किया।

हिंदी सहात्यि सम्मेलन प्रयाग का सम्मेलन 28 सितम्बर 93 से 3 अक्तूबर 93 तक इलाहाबाद में आयोजित किया गया। इस सम्मेलन का आयोजन डा० श्रीधर शास्त्री (इला०) ने किया। नागार्जुन को बिहार सरकार ने "91-92 का राजेन्द्र शिखर पुरस्कार" और गुणाकार मुले को "कर्पूरी ठाकुर स्मृति पुरस्कार" प्रदान किया।

मारिशस में हुये चौथे हिन्दी सम्मेलन में ब्रिटेन, अमरीका, रूस, जापान, इटली, आस्ट्रेलिया, इंडोनेशिया, हंगरी, सिंगापुर, नेपाल, दक्षिण अफ्रीका,

फिजी, त्रिनिडाड तथा दक्षिण अफ्रीका के हिन्दी प्रेमी विद्वानों के साथ भारत मारिशस के हिन्दी रचनाधर्मियों ने इसमें भाग लिया। के० के० बिड़ला फाउंडेशन दिल्ली ने कवि गिरिजा कुमार माथुर और डा० रधुवंश को उनकी कृतियों "मैं वक्त के हूं सामने" कौर "मानवीय संस्कृति का रचनात्क आयाम" पर वर्ष 1993 के "व्यास" और "शंकर" पुरस्कार प्रदान किये।

गायत्री सिद्ध पीठ कानुपर, चित्रकूट (बादा) महुआ (गुजरात) और दिल्ली में अखिल भारतीय रामायण सम्मेलनों का आयोजन 10 से 19 दिसम्बर 93 तक किया गया। संयोजक लल्लन प्रसाद ने 21 देशों के प्रतिनिधियों को इसमें सम्मिलित करके चार गौरव गाथाएं आयोजित की। के० के० विड़ला फाउंडेशन नई दिल्ली ने नाटकार विजय तेंदुलकर को उनकी कृति "कन्यादान" पर वर्ष 1993 के "सरस्वती सम्मान" से समंलकृत किया।

रूस का प्रमुख समाचार पत्र "प्रावदा" जो गत तीन सप्ताह से बंद था, दि० 10-12-93 से पुनः प्रकाशित होना प्रारम्भ हुआ। राष्ट्रपति डा० शंकर दयाल शर्मा ने साहित्य और भाषायी पत्रकारिता के लिए साहित्कार राजी सेठ,, हिंदी सेवी शंकर दयाल सिंह, डा० विद्या निवास मिश्र को "अनन्त गोपाल शेवडे स्मृति पुरस्कार" प्रदान किये।

वर्ष 1992-93 के पं० हरिदत्त शर्मा जवन्ती पुरस्कार से श्री जगदीश चतुर्वेदी (दिल्ली) को सम्मानति किया गया। □

पृष्ठ 37 का शोषांश

तैयार करने में लगे होने के कारण सम्राट् का निमंत्रण यह कहकर ठुकराने का साहस रखते थे कि:

"हम चाकर रघुबीर के पटौ लिखो दरबार।
तुलासी अब का होंहिंगे नर के मनसबदार।।"

रहीम शायद इसी कारण उनके भक्त और भारतीय संस्कृति के अध्येता बने हों और संस्कृत भी पढ़े हों। कुछ भी हो, भारतीय संस्कृति में वे ऐसे रच-बस गए थे कि क्षुद्र संप्रदायवाद से कोसों दूर भागकर राम की शरण में पहुंचकर ही शांति पाते थे। वे भारतीय संस्कृति के वाहन संस्कृत और हिन्दी साहित्य के विद्वान थे। वनवासी राम उनके आराध्य थे जिनकी स्तुति में व्यंजना-पूर्वक उन्होंने कहा था:

"चित्रकूट में रमि रहे रहिमन अवध-नरेश।
जापर विपदा परत है सो आवत एहि देस।।"

जिसे विपत्ति से उद्धार की इच्छा हो वह चित्रकूट चलकर वन-वासी राम की शरण ले। उन्होंने संस्कृत पढ़कर उसका भी साधिकार प्रयोग करते हुए वनवासी राम की स्तुति की है:

अहल्या पाषाणः प्रकृतिपशुरासीत् कपिचमू-
र्गुहो भुच्चण्डालस्त्रितयमपि नीतं निजपदम्।
अहं चित्तेनाश्मा पशुरपि तवार्चादिकरणे
क्रियाभिश्चाण्डालो रघुवर न मामुद्धरसि किम्।।
(सुक्ति-सुधाकर, गीता प्रेस)

अर्थात् हे राम। अहल्या पाषाण थी, वानर सेना स्वभाव से ही पशु थी और गुरु चाण्डाल था, पर आपने इन तीनों को ही अपने परम धाम की प्राप्ति कराई। मैं भी अपने चित्त से तो पाषाण हूं, आपकी पूजा-अर्चा आदि करने में पशु हूं और अपने कर्मों से चण्डाल हूं, तो भी हे रघुवर! आप मेरा उद्धार क्यों नहीं करते?

राम तो आदर्श पुरुष, मर्यादा पुरुषोत्तम थे ही, कृष्ण भी वैदिक संस्कृति के एक जाज्वल्यमान रत्न थे, योगिराज थे। भारतीय संस्कृति के पुजारी रहीम ने कृष्ण की भी जो स्तुति संस्कृत में की है, विद्वानों के हृदयों में तथा संस्कृत सूक्तियों में उसका अनूठा स्थान है। रहीम कहते हैं:

रत्नाकरस्तव गृहं गृहिणी च पद्मा किं देयमस्ति भवते जगदीश्वराय।
आभीरवामनयना हृतमानसाय दत्तं मनो यदुपले कृपया गृहण।।"
(सूक्ति-सुधाकर, गीता प्रेस)

अर्थात् रत्नाकर (क्षीर सागर) तो आपका घर है, साक्षात् लक्ष्मी जी आपकी स्त्री हैं, आप स्वयं जगदीश्वर हैं, भला, आपको क्या दिया जाए (आपको देने योग्य हमारे पास क्या है? हां। (गोपियों ने अपने नेत्र-कटाक्ष से आपका मन हर लिया है (जिसकी कमी आपको खटकती होगी) अतः मैं अपना मन आपको अर्पण करता हूं जिसे, हे यदुनाथ, कृपया ग्रहण कीजिए।

भारतीय संस्कृति विश्ववारा संस्कृति है, विश्व में सबसे श्रेष्ठ संस्कृति है। इसलिए सभी विद्वान् लोग इसकी ओर आकर्षित होते रहे हैं और भारतीय बनकर गौरवान्वित होते रहे हैं। भारतीय संस्कृति समन्वयवादी है और आगन्तुक विदेशियों को आत्मसात् कर लेती है वेदव्यास कहते हैं:

"किरात हूणान्ध्र पुलिन्द पुक्कसा आभीर कंका यवनाः खशादयः।
अन्ये च पापा यदपाश्रयाश्रयः शुद्धयन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः ।।"
(भागवत 3/2/18)

अर्थात् किरात, हूण, आन्ध्र, पुलिन्द, पुक्कस, आभीर, कंक, यवन और खश आदि अनार्य और अन्य लोग यहां तक कि पापी भी जिसके प्रभाव में आकर शुद्ध हो जाते हैं, उसको (संस्कृति को) नमस्कार है। यह भारत भूमि की ही विशेषता है जहां आकर सब घुल-मिलकर एक हो जाते रहे हैं। इसे:

"जनं विभ्रती बहुधा विवाचसं नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्।"
(अथर्ववेद 12/1/45)

अर्थात् अनेक प्रकार के, विविध प्रकार की वाणियां बोलने वाले, और अनेक प्रकार के धर्मों (कर्तव्यों) का पालन करने वाले लोगों को समान (एक साथ) घर में रहने वालों की भांति धारण करती हुई भूमि कहकर वेद भारत की समन्वयवादी प्रवृत्ति का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। रहीम राम और कृष्ण के भक्त हो चुके थे। कबीर रामानन्द के शिष्य बन गए थे। रसखान, जायसी, आलम, सालबेग, क़ैफ़ी आदि मुसलमानों ने भी भारतीयता में घुल-मिलकर भक्तिमार्ग अपना लिया था, जिनके लिए भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने लिखा है, "इन मुसलमान हरि-जनन पै कोटिक हिन्दू वारिये"। ऐसा है भारतीयता का समन्वयवादी रंग, जिसमें रहीम आकण्ठ-मग्न । □

पुरानी यादें नए परिप्रेक्ष्य

वैदिक गुप्तचर संस्था

डा० श्रीमती उर्वी*

प्रत्येक राजा अपने राज्य की रक्षा के लिए गुप्तचरों की नियुक्ति करता है। राज्य के प्रत्येक क्षेत्र में इन गुप्तचरों का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। ये गुप्तचर भेदिये भी कहलाते हैं इनका कार्य वेश बदल कर अपने या दूसरे राज्य के राजतंत्र में या अन्य किसी क्षेत्र में हो रही गतिविधियों को देखना है और इसलिए सर्वत्र इनका निर्बाध विचरण होता है। उन सभी बातों की जानकारी ये गुप्तचर अपने-अपने स्वामियों अथवा उच्चाधिकारियों को देते हैं जो आगे की कार्यवाही करते हैं। गुप्तचरों को नियुक्त करने की प्रथा बहुत प्राचीन काल से चली आ रही है तथा अनेक संस्कृत ग्रन्थों में गुप्तचरों का उल्लेख भी हुआ है।

मनुस्मृति में राजा के कर्तव्यों को बताते हुये कहा गया है कि वह सांयकाल का सन्ध्योपासन करके दूसरी कक्षा के भीतर एकान्त स्थान में स्वयं शस्त्र को धारण करके गुप्त समाचारों को बतलाने वाले गुप्तचरों के कार्यों को सुने और उसके पश्चात् जाने की अनुमति देकर परिचारिकाओं से परिवृत होकर भोजन के लिए पुनः अन्तःपुर में प्रवेश करे —

सन्ध्यां चोपास्य श्रृणुयादन्तर्वेश्मीन शास्त्रभृत।
रहस्याख्यायिनां चैवं प्रणिधीनां च चेष्टितम्।।
गत्या कक्षान्तरं त्वन्यत्समनुज्ञाप्य तं जनम्।
प्रविशेद्भोजनार्थ च स्त्रीवृतोऽन्तः पुरं पुनः।।

मनु० 7—223—224

इस उद्धरण के अनुसार मनु ने गुप्तचर को प्रणिधि कहा है।

किरातार्जुनीयम् के प्रथम सर्ग के चतुर्थ श्लोक में गुप्तचरों को "चार" नाम देते हुए तथा उनका महत्व बताते हुए कहा गया है कि वे राजाओं के नेत्र का कार्य करते हैं। राजा स्वयं सर्वत्र जाकर सब कुछ नहीं देख सकते। ये चार
अथवा गुप्तचर ही इधर उधर जाकर राजा के लिये सूचनाएं एकत्र करते हैं। इसी प्रकार हितोपदेश में भी कहा गया है कि जिसके पास अपने दूसरे राज्यों के कार्यों को देखने वाले गुप्तचर नहीं हैं वह राजा अन्धे के समान है—

भवेत्स्वपरराष्ट्राणां कार्याकार्यावलोकेने।
चारचक्षुर्महीभर्गुर्यत्य नास्त्यन्ध एव सः।। हितोपेदेश 2.34.

वेद में गुप्तचरों को स्पश् कहा गया है। वेद में गुप्तचरों का उल्लेख राज्य की संस्था के रूप में नहीं है, परन्तु वरूण के स्पशों का प्रायः उल्लेख हुआ है। कुछ अन्य देवताओं के साथ भी स्पशों का उल्लेख हुआ है।

*53 बी, एम० आई० जी० फ्लैटस, पाकेट सी, फेज-3, अशोक विहार, दिल्ली—110052।

स्पश् शब्द की निष्पत्ति स्पश् (बाधनस्पर्शनियोः) धातु से क्विप् प्रत्यय के द्वारा होती है। जहां यह शब्द अकारान्त है, वहां अच् प्रत्ययान्त माना गया है। तदनुसार स्पश् स्पर्श करने वाला, पकड़ने वाला, बांधने वाला है। एक मन्त्र (ऋ 10.35.8) में सूर्य को उषाओं का स्पश् अर्थात् स्पर्श करने वाला कहा गया है—विशवा इदुस्राः स्पदुदेति सूर्यः। स्वामी दयानन्द के अनुसार "स्पशम्" का अर्थ बन्धाकम् 4.13.3 ऋग्वेद तथा दूतम् 33.60 यजुर्वेद है।

ऋ० 1.33.8 में वृत्र के अनुचर युद्ध के लिए उद्यत इन्द्र को जीतने में समर्थ नहीं हुए तब उन्हें वहीं पर रोकने के लिये इन्द्र ने सूर्य से उन बाधक वृत्र के अनुचरों को रोक दिया। यहां स्पश् का अर्थ-सूर्य से है जो कि बन्धक है— चक्राणासः परीणहं पृथिव्या हिरण्येन मणिना शुम्भमानाः।
न हिन्वानासस्तितिरुसत इन्द्रं परि स्पशों अदधात्सूर्येण।।

ऋ० के 4.4.3 मन्त्र में अग्नि को कहा गया है—हे अग्नि (तू) तीव्रगामी है तू सत्य और झूठ को जानने के लिए शत्रुओं के प्रति पश्चिाधक (परबाधकम्) रश्मियों अर्थात् गुप्तचरों को प्रेरित कर। किसी से भी अहिंसित तू अपनी प्रजा का पालक बन—

प्रति स्पशो वि सृज तूर्णितमोभवा पायुर्विशो अस्या अदब्धः। यहां स्पश् का संबंध अग्नि से है जो शत्रुओं के प्रति अपने स्पशों अर्थात् गुप्तचरों अथवा परिबाधक रश्मियों को प्रेरित करता है।

ऋ० 4.13.3 में सूर्य को भी एक गुप्तचर बताया गया है। यहान स्पश् सूर्य का विशेषण है—

त० सूर्य हरितः सप्त यह्वीः स्पशं विश्ववस्य जगतो वहन्ति।

इसमें कहा गया है कि महान् सात घोडे समस्त प्राणिसमूह के ज्ञाता सूर्य को धारण करते हैं अर्थात् सूर्य समस्त प्राणी जगत् को जानने वाला है। वह अपना प्रकाश सर्वत्र फैलाता है और सब कुछ जान लेता है। स्वामी दयानन्द ने यहां स्पश् का अर्थ दूतम् लिया है क्योंकि जैसे सूर्य सब कुछ जानने वाला होता है उसी प्रकार गुप्तचर भी सब कुछ जान लेता है। जैसे सूर्य का प्रकाश सर्वत्र व्याप्त होता है उसी प्रकार गुप्तचरों की गतिविधियां सर्वत्र व्याप्त हैं।

ऋ० 8.47.11 में स्पश् का "स्पष्टाः" यह अर्थ सायण ने लिया है वह बहुत स्पष्ट नहीं है—हे आदित्यों तुम नीचे स्थित हमें जानों जैसे जलाशय के किनारे स्थित होकर जल को जानने की इच्छा करते हैं। सायण ने जो दूसरा अर्थ दिया है उसके अनुसार स्पशः गुप्तचर हैं—

आदित्या अव हि ख्याधि कूलादिव स्पशः।

हे आदित्यों तुम नीचे स्थित हमें जानों। जैसे कोई गुप्तचर जलाशय के किनारे स्थित होकर उस जल में छिपे मनुष्य को देखता है उसी प्रकार हे आदित्यों तुम हमारी रक्षा के लिए हमें जानों। गुप्तचर का ही यह कार्य

होता है कि वह स्थान-स्थान पर अपराधी को खोजे तदनुसार वह अपराधी को जल में भी देखता है अतः सायण का दूसरा अर्थ अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। यह अर्थ स्पष्ट भी है।

ऋ० के 8.61.15 में सायण ने स्पश् का "सब कुछ जानने वाला" अर्थ दिया है—इन्द्रः स्पकुत वृत्रहा परस्या नो वरेण्यः। यह इन्द्र सबका ज्ञाता है यह वृत्र को मारने वाला, सबका परिपालक हमारा वरणीय है। गुप्तचर भी सब कुछ जानते हैं। पुनः आगे कहा है वह हमारी रक्षा करे अर्थात् गुप्तचर रक्षा करने के लिये ही होते है। वे अपनी गुप्त गतिविधियों से सब कुछ जानकर अपराधी को पकड़ लेते हैं। इन्द्र भी स्पश् है अर्थात् गुप्तरूप से शत्रु के विषय में सब कुछ जानकर उसे अर्थात् वृत्र को नष्ट कर देता है।

ऋ० 10.10.8 मन्त्र में स्पष्ट रूप से स्पश् को गुप्तचर कहा है—न तिष्ठन्ति न नि मिषन्त्येते देवानां स्पश इह ये चरन्ति। यम कहता है कि इस लोक में देवों से संबंध जो गुप्तचर दिनरात विचरण करते हैं वे सभी शुभ अशुभ लक्षणों, को कर्मो को देखने के लिए परिभ्रमण करते हैं। ये गुप्तचर क्षणमात्र भी विचरण के कार्य से रहित होकर नहीं बैठते हैं और निमेष भी नहीं करते हैं। जो कोई शुभ अशुभ कार्य करता है उसका निरन्तर निरीक्षण करते रहते हैं ये एक प्रकार से गुप्तचरों की विशेषताएं हैं।

ऋ० 6.67.5 में मित्रावरुण की रश्मियों अथवा गुप्तचरों का उल्लेख है जब तुम दोनों विस्तृत द्यावापृथिवी को घेर लेते हो तुम्हारे अहिंसित अमूढ़ अर्थात् सावधान गुप्तचर विद्यमान रहते हैं। सम्भवतया मित्रवरुण की रश्मियां ही गुप्तचर है।

परि यद्भूथो रोदसी चिदुर्वी सन्ति स्पशो अदब्धासो अमूराः।

यहां गुप्तचरों की दो विशेषाताएं ध्यान देने योग्य हैं। एक तो वे अदब्ध अर्थात निर्बाध होते हैं, दूसरे वे अमूढ अर्थात् विवेकशील तथा सावधान होते हैं। ऋ० 7.61.3 में मित्रावरुण के विषय में बताया गया है कि वे स्पश् अर्थात् रूप धारण करने वाले हैं—हे मित्रावरुण तुम गुणों से, स्वरूप से अति महान् हो तुम शोभन दान वाले हो। तुम सत्य मार्ग पर जाने वाले लोगों की निनिमेष रूप से व्यवधान रहित रक्षा करते हुए ओषधियों तथा प्रजाओं में रूप धारण करते हो। यहां रूप धारण करने के उल्लेख से कहा जा सकता है कि मित्रावरुण वेष बदलकर ओषधियों तथा प्रजा की रक्षा करते हैं। ओषधियों की रक्षा करने के लिए वे मेघ इत्यादि का तथा प्रजा की रक्षा करने के लिए गुप्तचरों के समान विविध वेष या रूप धारण करते हैं। अतः यहां भी इन्हें गुप्तचर कहा जा सकता है क्योंकि गुप्तचर वेष बदल कर घूमते रहते हैं—

स्पशो दधाथे ओषधीषु विक्ष्वृधग्यतो अनिमिषं रक्षमाणा।।

ऋ. के 1.25.13 में परिस्पशों निषेदिरे—वरूण के चारों और स्पश् स्थित हैं। हिरण्यस्पर्शी किरणें सब ओर स्थित हैं।

ऋ. 7.87.3 मन्त्र में स्पशों का स्पर्श करने वाला गुप्तचर कहा गया है।

परि स्पशो वरुणस्य स्मदिष्टा उभे पश्यन्ति रोदसी सुमेके।

वरूण के स्पश् अर्थात् (चर) गुप्तचर उसके साथ रहते हैं। और सुरूप द्यावा-पृथिवी को चारों ओर से देखते रहते हैं। अर्थात् दोनों लोकों के पुण्य और पाप करने वाले लोगों को देखते रहते हैं। जो लोग कर्मशील, यज्ञ करने वाले, प्राज्ञ, क्रान्तदर्शी स्तोत्र गाते हैं उन्हें भी देखते हैं।

गुप्तचरों का सर्वाधिक स्पष्ट और सुन्दर संकेत ऋग्वेद के सोम सूक्त में मिलता है जिसमें गुप्तचर की विशेषाताएँ बताई गई हैं कि एक अच्छे गुप्तचर की क्या विशेषताएँ होती है। आज भी वैसी ही विशेषताएं गुप्तचरों में पाई जाती हैं। वेद के अनुसार गुप्तचर को अपराधियों को पकड़ने का अधिकार होता था।

ऋ. के 9.13.4 तथा 7 में गुप्तचरों का बहुत सुन्दर वर्णन है—

अस्य स्पशो न निमिषन्ति भूर्णयः पदे पदे पाशिनः सन्ति सेतवः।।

इस सोम के गुप्तचर तीव्रगामी हैं, वे क्षणमात्र भी निमेष नहीं करते हैं। वे स्थान-स्थान पर संबद्ध होते हैं और पाप करने वालों के बाधक होते हैं अर्थात् ये गुप्तचर सहस्त्रों स्थानों पर जा सकते हैं। ये बहुत तीव्रगति वाले हैं। ये गुप्तचर पलक भी नहीं झपकते हैं निरन्तर जागरूक रहते हैं। ये अपने आप को राज्य से बांधने वाले होते हैं। राज्य से इनका सीधा सम्पर्क होता है तथा राजाओं को सारी सूचनाएँ देते रहते हैं। ये एक दूसरे से बंधे हुए है सम्बद्ध हैं। अतः अपराधियों का बन्धन करने वाले हैं। एक एक पग पर इनके पाश हैं, बन्धन हैं। ये अपराधियों के स्थानों को, कार्यों को जानकर उनको बन्धन में डालने वाले हैं। आधुनिक समय में गुप्तचर एक ही स्थान पर बैठे-बैठे गुप्तचर विभाग के पास सूचनाएँ भेज देते हैं। इनके पास वायरलैस सैट हैं जिनसे गुप्त बातों का पता लगाते हैं। अन्यथा भी राज्य द्वारा गुप्तचरों को अपना कार्य करने, आने जाने के लिए सब प्रकार के साधन-सुविधाएं सुलभ कराये जाते हैं। इसी सूक्त के सप्तम मन्त्र में भी सोम के गुप्तचरों की विशेषताएँ बताई गई हैं—

रूद्राक्ष एषभिषिरासो अद्रहः स्कचः सुदृशो नृचक्षसः।

सायण के अनुसार रूद्रपुत्र मरुत् विद्युत रूपी माध्यमिक वाणी द्वारा वश में करने वाले हो जाते हैं। बांधने वाले हो जाते हैं। गमनशील स्तोताओं से द्रोहन करने वाले अर्थात् दूसरों से अहिंसित, शोभन गतिवाले, सुदर्शन तथा मनुष्यों के कर्मों को देखने वाले होते हैं। यहाँ सायण ने सोम को चन्द्रमा मानकर अर्थ किया है। परन्तु गुप्तचर के अर्थ में इसकी संगति अधिक स्पष्ट है। वह इस पकार है—सोम के यह गुप्तचर बहुत कठोर हैं। वे सबको उनके कार्यों के अनुरूप फल, दण्ड देते हैं। (वैज्ञानिक रीति के अनुसार हम जो कार्य करते हैं उसकी वैसी प्रतिक्रिया भी होती है।) वे गुप्तचर गतिशील, द्रोहरहित तथा न्यायपूर्वक कार्य करने वाले होते हैं। वे गुप्तचर शोभन अर्थात् तीव्रगति वाले अथवा बाधा रहित इसलिए हों कि जिससे कहीं भी प्रवेश कर सकें किसी भी अपराधी को तुरन्त पकड़ सकें। वे गुप्तचर अच्छी दृष्टिवाले होते हैं जिससे वे अपराधी को पहचान सकें, निर्दोष को दण्ड न दें। ये सबका नेतृत्व करने वाले होते हैं। द्रोह के वशीभूत होकर गुप्तचर किसी को दण्डित नहीं करता। यह उसका विशेष आचरण है। इससे गुप्तचर का पक्षपातरहित न्यायशील होना स्पष्ट है।

इस प्रकार से यद्यपि वेद में गुप्तचर संस्था का स्पष्ट वर्णन नहीं है किन्तु गुप्तचरों के विषय में महत्वपूर्ण संकेत प्राप्त होते हैं।

विश्व हिंदी दर्शन

विश्व में हिंदी का रूप

—शान्ति कुमार स्याल

विश्व में लगभग 2800 भाषाएँ बोली जाती हैं। जिनमें बोलने वालों की संख्या की दृष्टि से चीनी भाषा भाषी एक अरब, अंग्रेजी भाषा भाषी 44 करोड़, तथा हिंदी भाषा भाषी 35 करोड़ हैं। युनेस्को ने हिंदी को मान्यता प्रदान की है। हिंदी अब भारत में ही नहीं दुनिया के कोन-कोने में स्कूलों, विश्वविद्यालयों तक पहुंच चुकी है। हिंदी कार्यशालाएं, हिंदी दिवस, हिंदी सम्मेलन, हिंदी कक्षाओं का प्रचलन शुरू हो गया है। विदेशों में हिंदी की पत्र-पत्रिकाएं भी प्रकाशित हो रहीं हैं। वहां के रेडियो, टेलीविजन पर हिंदी कार्यक्रम प्रसारित होते हैं। हिंदी भाषा के साहित्यकारों पर विदेशों में शोध हो रहे हैं।

देश में जहां राजभाषा हिंदी के प्रयोग में वृद्धि हुई है वहीं अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर भी हिंदी अध्ययन-अध्यापन कार्यक्रम द्रुतगति से आगे बढ़ रहा है।

रूस में हिंदी प्रचार-प्रसार के ठोस कार्य किये गये हैं। यहां हिंदी लेखकों के रूसी अनुवाद, हिंदी भाषा के व्याकरण तथा साहित्य पर उच्च स्तरीय शोधपरक कार्य हो रहा है।

फीजी के सरकारी कार्यों में हिंदी का प्रयोग अंग्रेजी के साथ आवश्यक है। वहां हिंदी की पत्र-पत्रिकाएं पिछले 50 वर्षों से प्रकाशित होती रही हैं। फीजी सरकार के सूचना विभाग द्वारा जारी कृषि एवं मौसम संबंधी सूचनाएं, पोस्टर और समाचार-पत्र भी हिंदी में निकलते हैं।

अमेरिका में भी भारतीय भाषाओं, संस्कृति तथा राजनैतिक चिंतन के प्रति यहां हिंदी के प्रति दिलचस्पी बढ़ना शुरू हुई। 1947 में सबसे पहले पेंसिलवेनिया में हिंदी के अध्यापन की व्यवस्था की जाने लगी। आज लगभग 27 विश्वद्यालयों में हिंदी शोध स्तर पर पढ़ाई जाती है। वर्जीनिया तथा एरिजोना विश्व विद्यालयों में हिंदी विद्यार्थियों को भाषाई परिवेश उपलब्ध कराने की दृष्टि से भाषाई प्रयोगशालाओं द्वारा हिंदी का गहन अध्ययन कराया जाता है। आज कई भारतीय अध्यापक अमेरिका विश्वविद्यालयों में पढ़ा रहे हैं। अमेरिकी विद्यार्थियों की हिंदी भाषा में ही रुचि नहीं बल्कि वे दर्शन, संस्कृति, समाज विज्ञान आदि विषयों का विशेष अध्ययन कर रहे हैं।

आज अमेरीका में भारतीय, पाकिस्तानी, बंगलादेशी, लंकाई एवं कुछ सीमा तक अफगानिस्तानी लोगों की आपसी बोल चाल की भाषा हिंदी ही बन गई है। हिंदी का प्रवेश विश्वविद्यालयों में हुआ है। सामान्य विषयों में आधे ग्रेड्स का प्रश्न-पत्र प्रायः हिन्दी का होता है। छात्रों को हिंदी पढ़ना और लिखना सीखने के लिए जोर दिया जाता है। आकाशवाणी व दूरदर्शन में 50% से ज्यादा कार्यक्रम हिंदी में होते हैं।

अमेरीका टीवी का अधिकांश समय जो फिल्मी गीतों को समर्पित होता है वह ज्यादातर हिंदी में ही होता है। प्रायः हिंदी की फिल्में दिखाई जाती हैं।

'भारत-समाचार' साप्ताहिक हिंदी पत्रिका न्यूयार्क से 26 जनवरी 1985 से प्रकाशित हो रही है। जनवरी 1984 से 'भारत-भारती' द्वैमासिक हिंदी पत्रिका का प्रकाशन इलिनॉय राज्य के प्रसिद्ध नगर शिकागो से हो रहा है। जिन नगरों में भारतीयों की संख्या अधिक है वहां पुस्तकालयों में हिंदी पुस्तकों का विशाल संग्रह है।

चीन में हिंदी की पढ़ाई सबसे पहले 1942 में एक प्रांत के पूर्वी भाषा महाविद्यालय में शुरू हुई। 1949 के बाद पेइचिंग विश्वविद्यालय में पूर्वी भाषा व साहित्य विभाग कायम किया गया। इस विभाग में एक हिंदी अनुभाग भी कायम किया गया है जहां हिंदी भाषा व साहित्य के अध्ययन-अध्यापन का कार्य सुचारू रूप से आरम्भ हो गया है। संस्कृत विद्वान डॉ॰ चिनखूम को इस विभाग का अध्यक्ष बनाया गया है। आज भी यह विश्वविद्यालय चीन में हिंदी का अध्ययन-अध्यापन करने वाला एक महत्वपूर्ण उच्च शिक्षा संस्थान है। इस विश्वविद्यालय और सामाजिक विज्ञान अकादमी के अधीन दक्षिण एरिया अध्ययन संस्थान में भी हिंदी साहित्य का अध्ययन-अनुसंधान किया जाता है। 1959 में प्रथम हिंदी-चीनी शब्दकोश बनाया गया था। हाल में ही चीनी-हिंदी मुहावरा-कोश प्रकाशित हुआ है।

'चीन सचित्र' चीन से हिन्दी में निकलने वाली एक मात्र पत्रिका है, जिसका पहला अंक 1957 में प्रकाशित हुआ।

रेडियो पेइचिंग से भारतीय श्रोताओं के लिए प्रतिदिन एक-एक घंटे के दो कार्यक्रम हिंदी भाषा में प्रकाशित किए जाते हैं।

जापान में लगभग 15 विश्वविद्यालयों में हिंदी सिखाई जाती है। यहां से एक हिंदी मासिक भी प्रकाशित होता है। इसके लेखक और संपादक सभी जापानी है।

पाकिस्तान में विभाजन से पूर्व पंजाब विश्वविद्यालय में हिंदी और संस्कृत के विभाग मौजूद थे। पाकिस्तान बनने के बाद ये दोनों विभाग समाप्त हो गये। 1985 में डॉ॰ शाहिदा हबीब को लौहार विश्वविद्यालय का अध्यक्ष बनाया गया। उन्होंने अन्य साहित्यकारों की सहायता से लाहौर विश्वविद्यालय में हिंदी का पठन-पाठन, पुनः प्रारम्भ करवाया। हिंदी प्रचार के लिए वहां डिप्लोमा कोर्स एवं सर्टीफिकेट कक्षाएं भी शुरू हो गई हैं। डॉ॰ शाहिदा ने लाहौर में 'हिंदी लिटरेरी सोसाइटी' की स्थापना की है।

कनाडा में टोरंटो, बैंकूवर, विंडसर तथा मैकगिल विश्वविद्यालयों में हिंदी शिक्षण की व्यवस्था है बैंकूवर तथा विंडसर विश्वविद्यालयों में मध्यकालीन तथा आधुनिक हिंदी साहित्य के पाठ्यक्रम चलाए जाते हैं। मैकगिल विश्वविद्यालयों में उर्दू तथा हिंदी का मिला-जुला पाठ्यक्रम चलता हैं। यहां से 'विश्वभारती' पाक्षिक पत्रिका प्रकाशित होती है।

नार्वे में प्राथमिक विद्यालय से विश्वविद्यालय स्तर तक हिंदी पढ़ाने की व्यवस्था की गई है। ओस्लो विश्वविद्यालय में इसके लिए अलग से विभाग हैं। पिछले 10 वर्षों में यहां हिंदी का प्रयोग बढ़ा है। भारतीय फिल्में तथा रेडियो पर खासकर हिंदी गीत-संगीत सुनाई देते हैं। यहां लगभग पांच हजार भारतीय हैं।

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् के तत्वावधान में रुमानिया, बुल्गारिया, पूर्वी जर्मनी और क्यूबा में कुछ हिंदी प्रोफेसर हिंदी पढ़ा रहे हैं। अन्य समाजवादी देशों में हिंदी अध्यापन का कार्य वहीं के अध्यापकों द्वारा किया जा रहा है। इन देशो में हिंदी का अध्यापन कार्य संबंधित देश की सरकार की प्राथमिकताओं एवं आवश्यकताओं के अनुसार विश्वविद्यालय स्तर तक चलता है।

चेकोस्लोवाकिया के विश्वविद्यालयों में हिंदी पाठ्यक्रम का उद्देश्य विद्यार्थियों को हिंदी भाषा, साहित्य तथा भारतीय अध्ययन के विभिन्न क्षेत्रों में व्यापक एवं व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करना है। यहां भाषा का सामान्य पाठ्यक्रम भी चलता है। जिससे भारत के प्रति जिज्ञासा रखने वाले विद्यार्थी अल्पकालिक पाठ्यक्रम के रूप में हिंदी सीखते हैं। चार्ल्स विश्वविद्यालय 'प्राहा' में सन् 1949 से हिंदी पाठ्यक्रम चलाए जा रहे हैं। वहां विदेशी भाषा संस्थान में भी हिंदी शिक्षण कार्य चलता है। यहां द्विवर्षीय वैकल्पिक पाठ्यक्रम के अंतर्गत 'सामान्य हिंदी' का कार्यक्रम चलाया जा रहा है।

हंगरी के दो विश्वविद्यालयों में हिंदी का प्रारम्भिक पाठ्यक्रम चलाया जाता है। यहां विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में विभिन्न आधुनिक हिंदी साहित्यकारों की रचनाओं के हंगरी अनुवाद प्रकाशित होते रहते हैं।

रोमानिया में 1965 में हिंदी अध्यापन का कार्य प्रारम्भ हुआ। 1971 से नियमित रूप से बुखारेस्त विश्वविद्यालय में हिंदी का चतुर्वर्षीय पाठ्यक्रम शुरू किया गया है। हिंदी-रोमानिया तथा रोमानियन-हिंदी कोश भी डॉ॰ विद्या सागर दयाल ने तैयार किया है।

बुल्गारिया में 1971 से हिंदी अध्यापन की व्यवस्था की गई। तब से यहां हिंदी वैकल्पिक विषय के रूप में द्विवर्षीय पाठ्यक्रम के अंतर्गत सोफिया विश्वविद्यालय में पढ़ाई जा रही है। डा॰ विमलेश कांति वर्मा के प्रयासों से हिंदी-बुल्गारिया कोश भी प्रकाशित हुआ है।

मारीशस में भारत के पश्चात् हिंदी संसार में सबसे अधिक बोली जाती है। पद्मश्री डॉ॰ लक्ष्मी नारायण दुबे के अनुसार मारीशस के पूर्व प्रधान मंत्री शिवसागर राम गुलाम को हिंदी को विश्व मान्यता दिलाने में अग्रणी बनने का श्रेय प्राप्त है। यहां तुलसीदास द्वारा और महर्षि दयानंद सरस्वती द्वार का निर्माण करके हिंदी की दो महान विभूतियों को अपना नमन प्रस्तुत किया। यहां राजभाषा के रूप में अंग्रेजी, फैशन की भाषा फ्रेंच, बाजार की भाषा क्रिओल और घरेलू भाषा भोजपुरी है। हिंदी भाषा और भारतीय संस्कृति के संरक्षण में यहां पुरुषों की अपेक्षा नारियों ने अधिक योगदान दिया है।

यहां भारतीय भाषाओं और संस्कृति को लेकर अनेक अन्तरराष्ट्रीय सांस्कृतिक सम्मेलन हो चुके हैं।

त्रिनिडाड-टुबैगो की राजधानी पोर्ट आफ स्पेन में 1992 में अन्तरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस सम्मेलन में भारत की ओर से श्री शंकर दयाल सिंह, संसद सदस्य के नेतृत्व में एक पांच सदस्यीय प्रतिनिधि मण्डल सर्वश्री बच्चू प्रसाद सिह, यशपाल जैन, राजन्द्र अवस्थी एवं श्रीमती माजदा असद ने भाग लिया। यहां के प्रधानमंत्री ने अपने उद्घाटन भाषण में त्रिनिडाड और टुबैगो के स्कूलों में हिंदी की पढ़ाई ऐच्छिक रूप से शुरू करने की बात कही थी। इस अन्तरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन का शुभारम्भ त्रिनिडाड के राष्ट्रपति श्री नूर हसन अली ने किया।

काहिरा, भूटान, बैंकाक तथा सूरीनाम में स्थित भारतीय राजदूतावासों और भारतीय सांस्कृतिक केन्द्रों द्वारा सरकारी कामकाज में आने वाली शब्दावली का परिचय, हिंदी में मूलरूप से टिप्पणियां, पत्रों के प्रारूप आदि तैयार करने के उद्देश्य से हिंदी कार्यशालाओं का आयोजन किया जा रहा है।

भारतीय भाषा संगम

ओड़िया कविता

"वस्त्र हरण"

मूल कवि—श्री बालकृष्ण मिश्र
स्नातकोत्तर शिक्षक
केन्द्रीय विद्यालय बाल्को

श्री राधा!
विरह विदग्धा रूप के हो प्राण
जिससे आबद्ध मेरा मन
शिल्पी!
आनन पर राजित यह आसक्ति
क्या। यही है तुम्हारा निजस्व?
पार्थिव स्रष्टा की
हो तुम एक सृष्टि
यदि तुम समर्पित हो कृष्ण को
फिर कहां रह गया स्वातंत्र्य
अविनश्वर फिर हुई कैसे
श्रृंगारित आनन स्वदेह
कर दिया जब प्राणं अर्पित।
अन्यान्य अभिसारिकाएँ
हो जाती हैं यथा
पूर्णांग से निज प्रिय समर्पित
'मामेकं शरणं ब्रज' का स्वर
इसी पर जीवन हुआ निर्भर
आलम्बित हुआ यह
कृष्ण भीगा स्वर।
कौन सा है मूल्य बोध
जिससे करूँ अस्वीकार
शब्द का सम्भार
कदम्ब पत्रों का मधुर झंकार।
उच्छिष्ठ जब तुम
बोध इतना कर सका मैं तुम हो सुंदर
काल्पनिक एक नारी तुम
अवज्ञा फिर करुँ कैसे
स्वबोध की प्रतिक्रियात्मक
इस प्रचेष्टा को
जिससे मेरा सिक्त है मन प्राण।
यदि कहो कि, मैं नहीं वह मैं
कि-जैसा सोचते हो तुम
यदि हो तुम श्रीराधा की काल्पनिक प्रतिमा
सिंधु एवं बिंदु से निर्मित
उस मिलन के लिए [illegible]
तथापि; यह तुम्हारी नामवाची रूप

अनजाने देता है आकर्षण
भावना में हृदय मध्य
भर देता आल्हादित स्पन्दन
यदि कहो यह तो है
मात्र एक मधुरिम सम्पर्क
मुझ तक ही सम्बन्धित
सामाजिक परिभाषा को करने परिभाषित।
तब तो तुम उन समस्त
नामों के समाहार
एवं नहीं भी किसी एक
नाम का ढोती प्रभार।
तो फिर क्या है सत्य और असत्य
यदि तुम हो अनंठ
अहरह प्रवहमान तथ्य
जीवन के प्रवाह मध्य व्याप्त सत्य।
तो क्यों था वह आवश्यक
पूर्वाभाषा, वात्सायित पूर्वराग
युगल नयनों में समाहित?
क्यों करेंगे वे विवश,
एक निर्दिष्टड सीमा में आबद्ध
नारी मूर्ति को श्रीराधा कहने
और जानने में बाध्य?
मैं भी करूंगा
अब तुम्हारी सृष्टि
और उसका नाम दूंगा श्रीराधा
जिसे देखा नहीं मैंने कभी भी
नारी वह आबद्ध है नहीं
है नहीं वह नर
अपितु वह है एक अभिनव कल्पना।
नाम बिन भी स्थित का है सत्य
रूप बिन है आस्तित्व का वह बोध
उसकी करुंगा सृष्टि मैं
या वह करेगी, करती रहेगी
सृजन मेरा।

अनुवादक—डॉ॰ प्रद्युम्नदास वैष्णव 'विद्यावाचस्पति'
बेलखंडी, ओड़िशा

ओड़िया कविता

वस्त्र हरण

मूल कवि—श्री मनु मल्लिक
हाटपदा, बरगढ़

हे कृष्ण!
युगे-युगे अवतरित होते
इस धरा पर, लोगों को देने उपदेश
तब; तुमने ही दी थी यह शिक्षा
यमुना के तट पर
कदम्ब की डाली पर बैठ।
निर्लज्ज गोपियों ने
कर दिया था अशुद्ध यमुना का जल
करके स्नान; होकर निर्वस्त्र।
इसीलिये किया था तुमने
तब वस्त्र हरण
लज्जा का देने को ज्ञान
उन मतिभ्रमित गोपियों को
जो कर रही थीं स्नान।
हुआ उन्हें यथार्थ का बोध
लज्जावनत दुखित मना
कह उठीं होकर कर बद्ध
कृष्णं शरणं गच्छामि।
किन्तु;
हे कृष्ण।
आज है ये वन चुका इतिहास
और तुम नहीं हो आज
अब किसकी करें हम आस
कौन देगा इन्हें शिक्षा
तथ्य का वह ज्ञान
आज की इन तरुणियों को
जिनका भ्रमित धूर्णित ध्यान।
आज की ये रमणियाँ
अर्द्धनग्न धूमती हैं बाजारों मध्य
मात पिता संग।
अनावृत्त यौवन उच्छृंखल आनन
अर्द्धनग्न देह, फैशन के नाम पर
कामिनियाँ।
इनका यह सजने का ढंग
नग्नता ढोती है लज्जा का नाम नहीं
सारा कुछ लगता बदरंग
कौन इन्हें देगा उपदेश
लज्जा का नहीं जहाँ लेश।
सिसक रही संस्कृति रोता है देश
कौन इन्हें
देगा प्रभथु ज्ञान
आ करके कौन यहाँ
खींचेगा ध्यान
हे कृष्ण!
कौन इन्हें देगा
.....उपदेश?

हिन्दी रुपांतर (अनुवादक) डॉ॰ प्रद्युम्नदास वैश्णव
'विद्या वाचस्पति'। राष्ट्रपति पुरस्कार प्राप्त हिंदीत्तर
भाषी हिन्दी साहित्यकार मु॰पो॰ बोलखंडी
जिला कलाहांडी ओड़िशा—766012

सिंधी कविता

अनेकता में एकता

मूलः श्री प्रभु वफा

प्यारा भारत देश हमारा
सारा भारत देश हमारा
एक ही है इतिहास सभी का
है आदर्श एक ध्येय हमारा।।
एक माता के बेटे हम हैं।
उसके सपने, आशाएं हैं
एक माता का खून नसों में
पले हुए हम एक गोदी में।
उस माता के नित गुण गाएं।
उद्‌भव जिससे हुआ हमारा।।
एक ही एकता के धागे में
गूंथे तरह तरह के मोती
रूप निराला रंग निराला
एक सभी में आतम-ज्योति
चाहे बोले अलग बोलियां
और भिन्न परिधान हमारा।। 2 ।।

हिंदी पद्यानुवादः- श्री किशोर शेवडे

आज मृत्यु-दिन

मूल कवयित्री —श्रीमती एस० सुगतकुमारी
13/507-1 नन्दावनम
तिररुवनन्तपुरम-695033

आज मृत्यु-दिन
इस शरीर को आज फेंक देना है
जिस को
नहलाती
पाटंबर पहनाती
कनक समान संभालती रही हूँ!
जलन महसूस होगी न?
सन्देह?
तेरे अन्दर जो जलन रही है
उस से ज्यादा गरम नहीं होगी लकड़ी।
डर रही हैं?
कि दफनायी जाए तो.....
मेरा विकल मन भी
आज फेंक देना होगा साथ-साथ
जिसे बांध रखा था
हज़ारों रिश्तों से।
गर्भ में मरे शिशु को भी
भूगर्भ में
माँ के साथ सो जाना पड़ेगा!
यह बहार
उषा का यह सौभग
यह छाया
हवा का यह तरल भाव!
आज
इस मृत्यु-दिवस पर
मैं जो गीत गा रही हूँ
उस का राग
अब तक के मेरे गीतों का नहीं
दर्द का गान नहीं
पुष्प का गीत नहीं
रात्रि की चौपाई का राग नहीं
यह तो कड़वी पुरानी हँसी का गीत है
अनसुना है
जो कि
सहस्त्रों अश्रु नदियों से बहता हुआ
आ रहा है
हवा के ताल पर।
किसी ने कहा-
मत रोओ
यों ही
स्वयं पोंछ लो
अश्रु-धारा।
कौन सा हाथ हैं पोंछने को?
अपने आँसू पोंछने को
अपने ही हाथ हैं केवल!
सूने अंधकार में
रात में
जब कि डर मुँह खोल रहा है
तकिया बना के रखने को
कौन सा हाथ है?
सिर्फ अपने ही हाथ हैं?
चलो, ये हाथ कुदाल बन जाएँ
अपनी प्यारी
अति प्यारी
पृथ्वी की छाती पर
गड्ढा सजा कर
अपने शरीर के साथ
अपने मन को भी दफना दूँ
जिस में
कुछ बीज
संगीत और प्रेम-मुग्धता की
रखवाली करते रहे हैं।
निशान के लिए
कोई शिला नहीं रखें।
घास और लताएँ पनपेंगी
उन पर फूल खिलेंगे
श्वेत मोती के समान
अरुणाभ दीर्घ तूलिका के समान
शलभों के शावक उड़ेंगे
अपने भूरे पंख फहराते!
आज मृत्यु का दिवस
अपने ही हाथ से
गड्ढा खोदना होगा न?

अनुवादक का पता—के०जी० बालकृष्ण पिल्लै
टी०सी० 5/1797 गीता भवन पेरुरकटा प्रो०
तिरुअनन्तपुरम पिन-695005 केरल

शाप मुक्ति

मलयालम मूलः श्री विष्णु नारायणन नम्पूतिरी

सुन सुन रे महाशाप!
धरती को पाताल बना देने वाले महाकाल
भूतल पर शुष्क बवण्डर लाने वाले महाक्रूर!
क्या तुम जलहीन श्वेतता आरोपित करने वाले
बादलों का निष्फल गरजन सुनते हो?
क्या जलते हुए मकानों
और धधकती आंखों के बीच
स्याह होकर बिखर जाने वाला विवेक देखते हो?
धनुर्धारी के हाथों में कम्पन क्यों है?
लिक्खाड़ अंगुलियों में दबे अक्षरों के काले धब्बे
मिट्टी का पोषण कर
सिंह शावकों में ढालने वाली
जिसकी शक्ति थी केवल नई पीढ़ी,

उसी शक्ति और सत्यता को ग़ायब कर दिया है
कमज़ोर नई पीढ़ी ने;
मगर कौन उबारेगा उसे
जब तक कि हम
आत्म बलिदान के द्वारा
स्वयं को इस महाशाप से मुक्त न करलें?
आइए, हम जुट जाएं
अपने रक्त की अन्तिम बूँद तक
और अंधेरे ये इस खौफ़नाक राक्षस को
कुचलकर नेस्तनाबूद कर दें।
लाखों-करोड़ों मेहनतकश हाथों का सहारा लेकर
धरती के लावण्य की रक्षा करें,
शीतल स्थित वायु में
संगीत के उष्ण निर्झर प्रवाहित करें
और एकनिष्ठ मज़बूत इरादा लेकर
धरती के कण कण में
सूर्य का तेज़ जाग्रत करें!

हिंदी अनुवादकः—शेरजंग गर्ग,
जी-261-ए, सेक्टर—22, नौएडा-201301

फट गी पो, किन्तु मेरा देश सोया है
शान्त औ गतिहीन
ऐश्वर्य की लहराती पताकाएँ
और इन लहराती पताकाओं के समान
नीला नीला धुआँ
छतों से ऊपर नहीं उठ पाता
ये काले-स्याह धब्बे
सिर्फ पिछली रात की देन हैं
इन्हें पोंछने वाले पैरों की आहट भी सुनाई नहीं देती
कहां हैं पीपल के पत्तों की सरगोशियां
और कहां है परमपावन वनों में चिड़ियों का चहचहाना?
खेतों की सोंधी सोंधी खुशबू
और बाग़ीचों की मदहोश हवायें
आखिर कहाम ग़ायब हो गई हैं?

कल मुखरित हुई थी जो
पर्वत-मालाओं से
युद्ध के नगाड़ों की आवाज़
और जिसने समूचा आसमान गुंजायमान कर दिया था
आज एकाएक गूंगी कैसे हो गई है?
सत्य के धागों से निर्मित
हमारे खादी के कवच ने
कभी लोहे के ज़िरह बख्तरों को भी शरमिन्दा कर दिया था
उसे आज कीड़े खा गए हैं
हमारी सहिष्णुता का वह शिरस्त्राण
जिसपर होने वाली गोले गोलियों की वर्षा
पुष्प वर्षा का रूप धारण कर लेती थी
और धर्म का तेज़धार खड्ग
जो सूर्य के समान तेज़ रोशनी से चमचमाता हुआ
अन्याय की जड़ों पर तीखा प्रहार करता था
क्या वे सभी
निष्फलता के अभिशाप को ढोते हुए
किसी महाशाप से आहत होकर
मिट्टी की गोद में विलीन हो गए हैं।

प्रेरणा पुंज

श्री र० शौरिराजन हिंदी और तमिल के सुप्रसिद्ध लेखक हैं। हिंदी और तमिल भाषा तथा दोनों भाषाओं के साहित्य में आपका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आप दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के संपादक और सचिव भी रह चुके हैं। तमिल भाषी हिंदी लेखकों में आप अग्रगण्य हैं। हिन्दी और तमिल साहित्य के परस्पर आदान-प्रदान के क्षेत्र में आप एक सेतु की भूमिका अदा करते हैं। पाठकों की सूचना के लिए इनका परिचय नीचे दिया जा रहा है:

(संपादक)

र० शौरिराजन, एम०ए०,

(तमिलभाषी हिंदी प्रचारक,

तमिल और हिन्दी का लेखक - पत्रकार

परिचय

1. मातृभाषा ...तमिल
2. इतर ज्ञात भाषाएं ...संस्कृत मलयालम, अंग्रेजी, हिंदी
3. जन्मतिथि ...11 दिसंबर 1927
4. जन्मस्थान ...गांव-कार्प्यकाडु (तमिलनाडु)
5. शैक्षिक योग्यताएं
   - अ. तमिल में 'विद्वान' (एम०ए० समकक्ष - मद्रास विश्वविद्यालय)
   - आ. संस्कृत में 'तर्क शिरोमणि' (एम०ए० समकक्ष - मद्रास विश्वविद्यालय)
   - इ. हिन्दी में 'विद्वान' (एम०ए० समकक्ष - मद्रास विश्वविद्यालय) दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की उच्चतम परीक्षा 'राष्ट्रभाषा प्रवीण' तथा एम०ए० (मैसूर विश्वविद्यालय)
6. सामान्य सेवाएं
   - अ. छात्र कांग्रेस संगठन में स्वयंसेवक के रूप में सन् 1941 से 1950 तक खादी प्रचार में मानसेवी के रूप में आज तक
   - आ. स्वतंत्रता-आंदोलन में सन् 1942-50 में सक्रिय भागीदारी
   - इ. सन् 1952 में हिंदी प्रचार में पूर्णकालीन सेवा—हिंदी वर्ग चलाना, साहित्यिक लेखन आदि दक्षिण भारत हिंदी प्रचार

सभा, मद्रास में सेवारत, ग्रंथपाल, सचिव एवं संपादक पद पर दीर्घकालीन सेवा

ई. जनवरी 1986 से भारतीय धार्मिक - सांस्कृतिक मासिक पत्रिका 'ज्ञानभूमि' (तमिल और हिंदी) के संपादन कार्य से संबंद्ध

7. साहित्यिक सेवा

अ. प्रकाशित पुस्तकें--हिंदी में--

1. तमिल संस्कृति (दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा का प्रकाशन)
2. द्रविड़ संस्कृति का समन्वयात्मक इतिहास -- 'हमारी परंपरा' (संपादकः श्री वियोगी हरि) प्रकाशक : सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली
3. तमिल जैन साहित्य का इतिहास प्रकाशक : जैन महासभा, कलकत्ता
4. स्वतंत्रोत्तर तमिल साहित्य (राजभाषा परिषद् पटना)
5. तमिल साहित्य का परिचय (भारतीय भाषा परिषद् कलकत्ता)
6. राजभेरी (तमिल ऐतिहासिक उपन्यास का अनुवाद, भारतीय भाषा परिषद् कलकत्ता)
7. चौदह दिन (तमिल उपन्यास का अनुवाद, सेतु प्रकाशन, झांसी)
8. जयकांतन की कहानियां (तमिल कहानियों का अनुवाद, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली)
9. बीस साल के देश में बीस दिन की यात्रा (पूर्वी जर्मनी का यात्रा वृतान्त - अनुवाद)
10. भारती के राष्ट्रीय गीत - आकाशवाणी भोपाल के लिए विशेष सामग्री)
11. तमिल की काव्यकथाएं (एन०सी०ई०आर०टी०, नई दिल्ली)
12. आजादी की बिगुल बजी, मार्गदर्शी महात्मा आदि सात बालोपयोगी पुस्तकें
13. आधुनिक तमिल कविताओं का अनुवाद

आ. तमिल में

मौलिक कहानी संग्रह	-	3
निबंध	-	5
बालोपयोगी प्रकाशन	-	15
हिंदी, मलयालम, संस्कृत से अनुवाद	-	30

उल्लेखनीयः प्रेमचंद की कहानियों का संग्रह
रेणुजी का 'मेला आंचल'
राहुलजी का 'राजस्थानी रनिवास'
धर्मवीर भारती का 'सूरज का सातवां घोड़ा'
भीष्म साहनी का 'तमस' 'गुरुनानक वाणी'
शरत की 'शुभद्रा'
आधुनिक हिंदी कहानियों और कविताओं के अनुवाद आदि

इ. संपादन

'हिन्दी प्रचार समाचार' (मासिक) 'दक्षिण भारत' (त्रैमासिक) दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास हिंदी - तमिल - अंग्रेजी कोश तमिल की प्रतिनिधि कहानियां तमिल की प्रगतिवादी कविताएं तमिल माध्यम से हिंदी सीखने की अनुस्तरित पुस्तकें आदि

ई. हिंदी सलाहकार समिति, फिल्म सेंसर बोर्ड (भारत सरकार), साहित्य, अकादमी, नेशनल बुक ट्रस्ट, अखिल भारतीय तमिल लेखक संघ, आर्थस गिल्ड आफ इण्डिया, भारतीय लेखक मंच, नागरी लिपि परिषद का सदस्य

ङ सम्मान पुरस्कार

1. केन्द्रीय हिंदी निदेशालय, नई दिल्ली
2. केन्द्रीय हिंदी संस्थान, आगरा (भारत सरकार)
3. उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ
4. राजभाषा विभाग, बिहार सरकार
5. हिंदी प्रतिष्ठान, हैदराबाद
6. ज्ञानविकास केन्द्र, मद्रास
7. साहित्यानुशीलन समिति, मद्रास
8. दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास
9. हिंदी साहित्य कला परिषद, अंदमान-निकोबार

983, मार्ग-41, सेक्टर-8
के०के० नगर, मद्रास - 600 078

शाबाश गोपाल

प्रखर आशुलिपि प्रतिभा के धनी तथा हिन्दी आशुलिपि में 250 शब्द प्रति मिनट का विश्व कीर्तिमान स्थापित करने वाले डा॰ गोपाल दत्त विष्ट प्रथम भारतीय हैं जिनका नाम "गिनीज बुक आफ वर्ल्ड रिकार्ड" में अंकित किया गया है। उन्होंने आशुलिपि विषय में शोध कार्य करके पी॰एच॰डी॰ की उपाधि अर्जित की है।

आशुलिपि के विषय में उत्कृष्ट योग्यता रखने वाले डा॰ विष्ट ने हिन्दी और अंग्रेजी आशुलिपि तथा टंकण में 18 पुस्तकों की रचना की है। इनमें से 4 पुस्तकें शिक्षा मंत्रालय की सहायता से प्रकाशित की गई हैं जिनमें आशुलिपि विज्ञान एवं आशुलिपि शब्दकोष प्रमुख है। आशुलेखन के उत्कृष्ट ज्ञान एवं उच्चतम रिकार्ड को कायम करने के लिए उन्हें 6 स्वर्ण पदक प्राप्त हो चुके हैं। संस्कृत आशुलेखन के व्यावहारिक प्रदर्शन के लिए उन्हें भारत सरकार द्वारा श्री गणेश पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। उन्होंने नेत्रहीनों के लिए आशुलिपि कोड के निर्माण में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

उत्तर प्रदेश के अल्मोड़ा जिले के एक साधारण परिवार से आए डा॰ विष्ट वर्तमान समय में राज्य सभा में वरिष्ठ संसदीय रिपोर्टर है।

(सिविल सर्विसेज न्यूज खण्ड 7 क्र॰ 5 मई 1994 से साभार)

डा॰ गोपाल दत्त विष्ट

परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद के वरिष्ठ वैज्ञानिकः विजय कुमार भार्गव

अखिल भारतीय हिन्दी प्रतिष्ठापनमंच, बंबई के उपाध्यक्ष व परमाणुऊर्जा नियामक परिषद के वरिष्ठ वैज्ञानिक विजय कुमार भार्गव ने भौतिक शास्त्र में अपना शोध प्रबंध हिन्दी और अंग्रेजी अर्थात् द्विभाषिक प्रस्तुत कर बम्बई विश्वविद्यालय से पी॰एच॰डी॰ प्राप्त कर परमाणु ऊर्जा परिवार के प्रथम वैज्ञानिक होने का गौरव प्राप्त किया है। डा॰ भार्गव को परमाणु ऊर्जा आयोग के अध्यक्ष डॉ आर॰ चिदाम्बरम ने अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन में स्मृति चिन्ह देकर राष्ट्रभाषा हिन्दी का गौरव बढ़ाया है। अमरीका में दो वर्ष तक रहे डॉ॰ भार्गव ने हिन्दी में कई संगोष्ठियां वैज्ञानिक विषयों पर आयोजित की हैं व कई लेख प्रकाशित करवा चुके हैं। विज्ञान के क्षेत्र में हिन्दी के प्रतिष्ठापन हेतु लगातार सक्रिय हैं।

विजय कुमार भार्गव

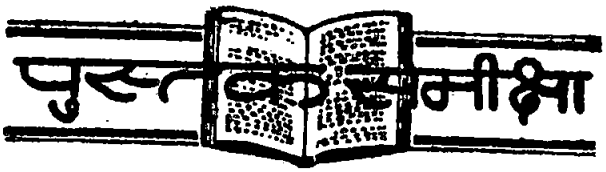

पुस्तक समीक्षा

चित्रों से झांकता मानव इतिहास

"बाबरनामा" जहीरुद्दीन मोहम्मद बाबर के जीवन का एक ऐसा वृतान्त है जिसमें हम पंद्रहवीं शताब्दी के अंतिम पांच वर्षों और सोलहवीं शताब्दी तीन दशकों के इतिहास से परिचित होते हैं। इस जीवनवृत केन्द्र में यद्यपि बाहर है तथापि उस काल के मध्य एशिया और भारत के जन जीवन घटनात्मक साक्ष्य इतने सघन हैं कि उनका परिचय पाकर आज भी आश्चर्य मिश्रित कौतूहल होता है। "बाबरनामां" जैसी ख्यात पुस्तक ने विश्वभर के इतिहासज्ञों, जीवनीकारों, मध्य एशिया विशेषज्ञों, मध्यकाल में रूचि रखने वाले रसज्ञों और सामान्य पाठकों को समान रूप से विमोहित किया है। मध्य एशिया के एक वीर, रणनीति कुशल, कूटनीतिज्ञ एवं कला प्रेमी के जीवन का रोमांचक वृतान्त अपने आप में अद्भुत कथावृत है। इस कथावृत ने संस्कृति प्रेमियों, उद्यान विशेषज्ञों और वास्तुविदों को तो प्रमाणित किया ही है चित्रकारों को भी बहुत प्रभावित किया है। "बाबरनामा" उभरने वाले व्यक्तित्व के जीवन की अनेक ऐसी घटनाएं हैं जो मार्मिक, मानवीय एवं प्रेरणादायी हैं। चित्रकारों ने उन विषयों पर अनेक शैलियों में चित्रों का निर्माण किया है। कुछेक राज्याश्रयी चित्रकारों के अदभुत चित्रों के साथ साथ कुछ ऐसे विरल चित्रों का उल्लेख डा॰ एम॰एस॰ रंधावा ने किया है जो अत्यन्त दुलर्भ हैं। वे ब्रिटिश म्यूजियम से लेकर हर्मिटेज संग्रहालय में तक प्रदर्शित है। हमारे देश के प्रख्यात कला मर्मज्ञ डा॰ एम॰एस॰ रंधावा बाबरनामा के रंगचित्रों के अन्वेषण में लगे रहे। अपनी इस खोज और अध्ययन के दौरान उन्हें महत्वपूर्ण सामग्री की जानकारी भी मिली। उन्होंने स्पष्ट किया है कि -

"1965 में मैंने तीन महान मुगल बादशाहों के संस्मरणों का अध्ययन किया और बाबरनामा की अकबर कालीन पाण्डुलिपियों के बारे में मुझे पता लगा कि वे मास्को, लंदन, डबलिन और नई दिल्ली में संग्रहीत हैं, 1970 में संयुक्त राष्ट्र संघ के कृषि और खाद्य सम्मेलन से लौटते हुए वे मास्को में रुके जहां उन्हें बाबरनामा के अनेक चित्र देखने को मिले। इन चित्रों में से कुछ का प्रकाशन प्रोफेसर एस॰आई॰ तुलेव ने मार्ग पत्रिका के जून 1958 के अंक में किया था। डा॰ रंधावा की आत्मस्वीकृति है कि इन चित्रों ने बाबर और उसके संस्मरणों में मेरी रूचि बढ़ा दी।" अपनी इस खोज में वे आगे बताते हैं कि "अक्टूबर 1971 में एक सम्मेलन में भाग लेने के लिए बोस्टन के मेसा च्यूसेट्स तकनीकी संस्थान का नियंत्रण मिला। बोस्टन जाते हुए में लंदन में कुछ दिनों के लिए रूका और 15 अक्तूबर को ब्रिटिश म्यूजियम देखने गया। फारसी की पाण्डुलिपियों के संग्रहपाल श्री जी॰ मेरीडिथ ओंस के सौजन्ज से मुझे ब्रिटिश म्यजियम में बाबरनामा की प्रति देखने को प्राप्त हुई। इस पुस्तक के प्रति में उत्साह में और वृद्धि हुई और मुझे विशेष रूप से तब प्रसन्नता हुई जब मैंने उद्यान संबंधी चित्र देखे, बाबरनामा की अन्य सचित्र पाण्डुलिपियों में इस पाण्डुलिपि का उन्हीं के कारण विशिष्ट स्थान है।" यह आश्चर्य का ही विषय है कि मध्य एशिया से आये बाबर ने मध्य एशिया शैली की बागवानी का प्रवेश उन सभी क्षेत्रों में करवाया जहां जहां बाबर ने आधिपत्य जमाया। इससे एक राजा के हृदय में प्रकृति के प्रति उस अटूट प्रेम का परिचय तो मिलता ही है जो लड़ाकू संघर्षशील लोगों में कम होता है किन्तु जिनमें वह रहता है उनके आवेगात्मक स्वभाव की सूचनाएं भी इसे बहाने से एकत्रित की जा सकती है।

वर्ममान संदर्भ में हम बाबर या उन जैसे बेहद जोखिम लेने वाले लोगों के बारे में इतिहास के सत्य से परे होकर सोचने के लिए स्वतंत्र नहीं हैं अतः भारत और बाबर के रिश्ते को यदि राजनीति से परे रखकर देखें और खासकर बाबर के जीवन की झांकी देने वाले चित्रों के बहाने उस समय की मुख्यधारा का अनुमान लगायें तो हमें कुछ नई सूचनाएं भी मिलेंगी। उदाहरण के लिए "केन्द्र-ए-बादाम" में बाजार का एक दृश्य बादामों की तुलाई और लदाने - चित्र को लें तो हम देखेंगे कि यह स्थान भारतीय कस्बे की तरह है। यद्यपि यह फरगा के निकट का ही स्थान है तथापि पूरी तरह भारतीयता से मंडित है। इसका एक कारण यही है कि भारत और मध्य एशिया के बीच व्यापार इतना अधिक है कि बेचने वाला और खरीदने वाला अपने आचरण विधान की शैलियों में एक सा प्रतीत होता है।

काबुल के पास बाग-ए-बफा चित्र में सम्राट के प्रकृति प्रेम का एक दूसरा ही दृश्य मिलता है। संभव है कि कला और संगीत प्रेमी बाबर समय समय पर प्रकृति के निकट उस अदृश्य सौन्दर्य का रसास्वादन कर पुनः स्वयं को संघर्ष के लिए तत्पर पाता हो या फिर कहना चाहिए यह मध्य एशिया और भारत उप-महाद्वीप की जीवन शैली है जिसमें हिंसा-प्रेम, क्रूरता-सहिष्णुता, न्यायप्रियता-दया आदि भाव घुलेमिले हैं और जब वैसी परिस्थिति होती है जहां का आदमी उसी के अनुरूप अपना जीवन लक्ष्य निर्धारित कर लेता है।

बाबर की जिन्दगी एक ऐसा यौद्धा की जिन्दगी रही है जिसमें विजय और पराजय का महत्व नहीं है बल्कि सतत अपने स्वप्न को पूरा करने की एक अभियानशीलता ही अर्थपूर्ण नज़र आती है। बाबरनामा के इन चित्रों में जहां भारत और मध्य एशिया के बीच व्यापार के प्रगाढ़ सम्बन्धों के ऐतिहासिक तथ्य मिलते है वहीं मज़दूर, महिलाओं और सैनिकों के विवरण भी मिलते हैं। महत्वपूर्ण चित्र वे ही हैं जो इस विशाल भूभाग के ऐतिहासिक यर्थार्थ को चित्रित करने में समर्थ हैं।

बाबरनामा को चित्रित करने के अनेक प्रयासों में प्रस्तुत चित्रों की सार्थकता इसी में है कि वे एक सुदृढ़ परम्परा का आभास देते हैं। हर अच्छी कला में यह गुण होता है। "महामारी से मरते हुए घोड़े" व अनेक पशु पक्षियों के चित्र उस काल को और उसके यथार्थ को आंखों के सामने जीवित कर डालते हैं।

हिंदी में उपलब्ध पाठ के कारण यह पुस्तक अधिक महत्व की हो जाती। परन्तु इसका महत्व इसकी दुर्लभ चित्रकला शैली में है और उससे भी अधिक विरल बात यह है कि इससे भारत और मध्य एशिया के परम्परागत संबंधों का पता चलता है।

राष्ट्रीय संग्रहालय साधुवाद का पात्र है कि उसने डा० रंधावा के इस ग्रंथ को हिंदी पाठकों, रसज्ञ चित्रकला मर्मज्ञों के सामने रखा है।

डा० गंगाप्रसाद विमल, बी-201 कर्जनरोड अपार्टमेंट्स, कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली-110001

बाबरनामा के रंग चित्र—मूल लेखक-एम०एस० रंधावा, हिंदी अनुवादक—हर मोहन सेठ और चिंतामणि व्यास, संशोधक—सुन्दरलाल श्रीवास्तव, संपादक—रघुराज सिंह चौहान, प्रकाशक—राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली-110001, वितरक-प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001, मूल्य-चार सौ चालीस रुपये

ग़ालिब के दीवान की टीका

पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' हिंदी के अत्यंत लोकप्रिय कथाकार रहे हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने हिंदी साहित्य के इतिहास में इनकी भाषा की तारीफ़ करते हुए लिखा है—'उग्र' की भाषा बड़ी अनूठी चपलता और आकर्षक वैचित्र्य के साथ चलती है। उस ढंग की भाषा उन्हीं के उपन्यासों और 'चांदनी' ऐसी कहानियों में ही मिल सकती है। समाज के पाखंड का पर्दाफाश करने वाले पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' की प्रमुख कृतियां हैं—'दिल्ली का दलाल', 'सरकार तुम्हारी आंखों में', 'बुधुवा की बेटी' और 'चंद हसीनों के खतूत'। 'चंद हसीनों के खतूत' शीर्षक इस मर्म को उद्घाटित कर देता है कि पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' ग़ालिब के प्रशंसक रहे होंगे क्योंकि अपनी प्रसिद्ध कृति का यह शीर्षक उन्होंने ग़ालिब की ही शायरी से लिया था—

'चंद तस्वीरे बुतां चंद हसीनों के खतूत
बाद मरने के मेरे घर से ये सामां निकला'

इन्ही पांडेय बेचन शर्मा उग्र ने ग़ालिब के दीवान की एक टीका लिखी थी, जिसे रंजीत प्रिंटर्स और पब्लिशर्स, नई दिल्ली ने प्रकाशित किया था। बहुत वर्षों के बाद वर्ष 1993 में रंजीत पब्लिशर्स, में—फेयर गार्डन्स, नई दिल्ली-110016 द्वारा ग़ालिब के दीवान की उस टीका का नया संस्करण (द्वितीय संस्करण) बड़े ही सुन्दर, चित्ताकर्षक और सचित्र स्वरूप में प्रकाशित किया गया है। इस किताब की कुछ विशेषताएं हिंदी पाठकों को आकर्षित करेंगी।

पहली विशेषता यह है कि इस पुस्तक में ग़ालिब की दो सौ से अधिक ग़ज़ले अकरादि अनुक्रमणिका के साथ मोटे प्रिंट में टीका सहित प्रस्तुत की गई हैं। स्थान-स्थान पर सुन्दर चित्र और रेखाकृतियां भी मनोहारी ढंग से पेश की गई हैं।

दूसरी विशेषता यह है कि ग़ालिब के शेरों के अर्थ उर्दू अन्दाज़ की बजाय हिंदी अन्दाज में व्यक्त किए गए हैं। उदाहरण के लिए 'सख्त अरज़ां है, गरानी मेरी' का अर्थ बताते हुए उग्र जी लिखते हैं-'मेरा प्रेम का गर्व कितना ख़र्व है।' (पृष्ठ 457)।

इसी प्रकार—'निगाहे चश्मे सुर्मः सा क्या है?' का अर्थ बताते हुए उग्र जी की कथन भंगीमा देखते ही बनती हैं—'यह अंजन रंजित खंजन गंजन नैन क्या हैं?' इसी प्रकार 'शिकने जुल्फें अम्बरी क्यों है?' के लिए कहते हैं कि सुरमित लटों में घूंघर क्यों पड़ रहे हैं। (पृष्ठ 386)

इस टीका की तीसरी विशेषता है कि अर्थ बताते समय कई स्थानों पर उग्र जी अपना मौलिक अर्थ भी निकाल लेते हैं जो भले ही विवादास्पद क्यों न हो जाए। उदाहरण के लिए इस शेर के संदर्भ में देखें—

'हम भी दुश्मन तो नहीं है अपने
गैर को तुझसे मुहब्बत ही सही'

इसकी टीका करते हुए उग्र ही **'अपने'** शब्द का अर्थ **'तेरे'** नहीं लगातें; वे **'अपने'** का अर्थ **'अपने'** ही लगाते हैं। उग्र जी का कथन है—'तुझे मुद्दई से मुहब्बत है तो हम भी कुछ शत्रु नहीं हैं **अपने** कि ऐसे को दिल दे कर जान दें।'

असल में ग़ालिब का अन्दाज़े-बयां ही ऐसा है कि उसके-वस्तुगत और मनोगत—दोनों तरह के अर्थ लगाए जा सकते हैं। यूं भी ग़ालिब की शायरी की अनेकार्थकता उसकी भंगिमा है। उनका कोई भी शेर एकार्थक नहीं होता। एक और उदाहरण देखें—

'न पुले नगमाः हूं न परदः ए-साज़
मैं हूं अपनी शिकस्त की आवाज़'

उग्र जी ने इस शेर का अर्थ इस प्रकार किया है जो शायद विवादास्पद नहीं है, तथापि पूर्णतया हिंदी अन्दाज़ में है:—

"संगीत स्वर लहरी नहीं; (यंत्र या बाजा या) साज़ का परदा नहीं। मैं तो अपने आपे के खंडन-विखंडन का स्वर हूं (मेरे गीतों के सुरीलेपन के पीछे मेरा टूटा दिल है।" (पृष्ठ 144)

एक शेर का और उदाहरण देना अप्रासंगिक न होगाः 'मैंने माना कि कुछ नहीं है ग़ालिब मुफ्त हाथ आये तो बुरा क्या है?' इसका अर्थ इस प्रकार किया गया है—"ग़ालिब अकिंचन है, पर तुम्हारा तो बेदाम का गुलाम है—त्यागों नहीं, प्राण! अपनाओ उसे।

हाल ही में पिछले दिनों रणजीत होटल में डा० रमेश सक्सेना 'ग़श' ने 'कला और क़लम' के बैनर से एक व्याख्यान माला की शुरूआत की। इस शुरूआती दौर के दौरान डा० नामवर सिंह ने अपने भाषण के दौरान ग़ालिब की शायरी पर अमेरिका के महत्वपूर्ण नए कवियों द्वारा किए जा रहे अनुवाद-कार्य की चर्चा की। डा० नामवर सिंह ने इसी संदर्भ में 'मैं हूं अपनी शिकस्त की आवाज़' पंक्ति के (अमेरिका के दो कवियों द्वारा किए गए भिन्न-भिन्न) अनुवादों की दो बानगियां प्रस्तुत कीं—

'I am the sound of my breaking'

तथा—

'I am the sound of my defeat.'

मुझे सुन क़र हैरत हो रही थी कि 'आवाज़' के लिए किसी भी कवि ने *'Voice'* का प्रयोग नहीं किया। सभी ने *Sound* का ही प्रयोग किया।

इस 'अवांतर' प्रसंग का उल्लेख कर पुनः प्रसंग की ओर लौटते हुए

यह कहना आवश्यक होगा कि एशिया के इस महान कवि के दीवान पर टीकाएं लिखी जाती रहीं हैं और लिखी जाती रहेंगी तथापि उग्र जी द्वारा की गई इस टीका का हिंदी पाठकों के लिए एक ऐतिहासिक और विशिष्ट महत्व है।

पुस्तक की साज-सज्जा और अपने आप में उपलब्धि है। जिन पाठकों की नज़र कमज़ोर हो गई है उन्हें बोल्ड अक्षरों की बुनावट और छपाई रास आएगी। प्रत्येक पृष्ठ पर डिज़ाइनदार हरा हाशिया। जिसके कारण मुद्रण अधिक आकर्षक हो गया है।

—राज कुमार सैनी

पुस्तक का नाम—'गालिब-उग्र' (गालिब के दीवान की टीका), आकार—डिमाई सजिल्द, पृष्ठ संख्या—560, मूल्य—495 रू०, प्रकाशक—रंजीत पब्लिशर्स, अपार्टमेंट नं० 31, में फेयर गार्डन, नई दिल्ली-110016

कटा हुआ बाजू

साम्प्रदायिकता की आग कोई नई नहीं है, मुझे तो जब से याद है, हम लोग इसमें झुलसते आए हैं और इसे रोकते बुझाते आए हैं। इसमें राजनीति का घुसना भी कोई नई बात नहीं है, मुझे तो लगता है कि इसकी शुरुआत राजनीति से हुई, यह भी नई बात नहीं है कि कई बार उदार राजा, महाराजा भी आए जिन्होंने इस आग को बुझाने में मदद की। किन्तु अंग्रेजों के जमाने से इस आग ने जैसे दावानल का रूप ग्रहण करना शुरु किया और राष्ट्रपिता ही संभवतया इसके फैलाव को रोक पाए थे। इन सबसे उत्साहवर्धक जो देखने को मिलता रहा, वह था इन वहशी दंगों के बीच भड़कती आग में भी एक मानव का दूसरे मानव को अपनी जान पर खेलकर बचाना। यही इन्सानी रिश्ते हैं जिनसे हमारी आशाएं बँधी हैं कि यह मानव प्रेम इस सांम्प्रदायिक दानव को जीतकर रहेगा।

केवल सूद ने मुझे पूछने पर बताया, कि इन दंगों के दौरान एक ऐसे ही इंसानी रिते की अविश्वसनीय घटना की खबर सुनी। शंभू और शफीक, बचपन के गहरे मित्र एक मेले में गए थे जहाँ शफीक ने अपने बाजू में शंभू का नाम तथा शंभू ने शफीक का नाम गुदवा लिया था। बम्बई के भयंकर दंगों में मुसलमान दंगाइयों ने शफीक को शंभू काफिर समझकर मार डाला। जब शंभू ने यह खबर सुनी तो जैसे उसकी पीड़ा से वह पागल सा हो गया और तलवार से उसने शफीक गुदे नाम वाला बाजू काट दिया। तब केवल सूद के मन में 'कटा हुआ बाजू' नाटक का जन्म हुआ।

इस घटना को प्रभावी चरमसीमा तक ले जाने के लिए नाटककार ने एक के बाद एक घटनाओं को विकास क्रम में नाटकीय ढंग से पिरोया। नाटक का प्रथम दृश्य गीतों से शुरु होता है। पहला गीत बिस्मिल का 'सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है/देखना है जोर कितना बाजुए कातिल में है/.....'एक पात्र मशाल लिए, गाया गया यह गीत शायद स्वतंत्रतापूर्वक देश प्रेम, आपसी सद्भाव, आत्मत्याग के वातावरण को कुशलता पूर्वक, बिना किसी संवाद आदि के बहुत ही कम समय में श्रोताओं के हृदय में रच देगा, इसमें संदेह नहीं। इसके तुरन्त बाद इकबाल का प्रसिद्ध गीत 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा,/हम बुलबुलें हैं इसकी यह गुलिस्ताँ हमारा/....कई लोग मिलकर गाते हैं। चूँकि यह गीत राष्ट्रीय ध्वज को सलामी देते समय बजाई जाने वाली धुन के बाद गाया जाता है, इससे यह आभास होता है कि माहौल स्वतंत्रता पश्चात् का है। किन्तु नाटककार ने इस गीत का प्रभाव जादूई ढंग से दुगना कर दिया है, इस गीत के गाने का अंदाज़ बतलाकर—'झगड़ने जैसे अंदाज़ से इस गीत को गाना है'। अर्थात् गाने वालों के विभिन्नदल सारे जहाँ से अच्छे हिंदोस्ताँ को सिर्फ अपने दल का समझते हैं, सारे भारतीयों का नहीं। गौर तलब है कि बिस्मिल के गीत को गाने का कोई अंदाज़ नाटककार ने नहीं बतलाया। इसका शक्तिशाली प्रभाव तो हम बतला चुके हैं। और इस तरह इन दो गीतों को अत्यंत प्रभावी ढंग से उपयोग करके नाटककार ने अपनी कविता की गहरी समझ का अद्भुत उपयोग किया है।

वैसे, नाटककार ने बिस्मिल के गीत का कोई अंदाज नहीं बतलाया, अर्थात् उसने निर्देशक को इस अंदाज़ के चुनने की छूट दी है। निर्देशक चाहे तो उस गीत का अंदाज़ इस तरह से रख सकता है कि जैसे एक दल दूसरे दल को लड़ने या भागने के लिए ललकार रहा है। बिस्मिल के इस गीत में यह ताकत तो निहित है जिसका इस ढंग से उपयोग कर स्वतंत्रापूर्व के देश प्रेम, आपसी सहयोग और स्नेह की आज जिस तरह विकृति हुई है उसे और भी कलात्मक तथा प्रभावी ढंग से दर्शाया जा सकता है। नाटकों में इस तरह अलग अलग भाष्यों या इंटरप्रिटेशनों की गुंजाइश रखने से नाटकों की ताकत् प्रभावशीलता, समृद्धि तथा आयु बढ़ती है। तथा तथ्य और सत्य को सम्पूर्णता एवम् समग्रता में प्रस्तुत करने की क्षमता कविता से सहज ही मिल जाती है। "काव्येषु नाटकम् रम्यम्" तो माना ही गया है, गौर तलब है कि इस नाटक को काव्य ने रम्य बनाया है।

इकबाल के इस गीत को लड़ने जैसे अंदाज़ से गाने के बाद, साम्प्रदायिक आग भड़क उठती है, अपने अपने धर्म के नारे लगाए जाते हैं और एक निर्दोष आदमी का खून किया जाता है। एक तरफ तो इन नारों को एकदम शुरू के इंकलाब जिंदाबाद के नारों के बख्स रखने से हृदयों की भावाभिव्यक्ति, दंगाई आग की तेजी एकदम से सामने आती है। किन्तु दूसरी तरफ इन नारों में ईसाई नारे भी सम्मिलित किए गए हैं। अभी तक तो दंगों आदि में ईसाई नारों का उपयोग देखने में नहीं आया, और बेहतर होता कि इन्हें शामिल न किया जात। संभवतः नाटककार भविष्य देख सकता हो।

इस 'खून' के तनाव को नाट्ककार एकदम मार्मिक अनुभव में बदल देता है—एक फकीर को क्रॉस लिए मंच पर प्रवेश कराकर वह फकीर करुणापूर्ण स्वर में गीत गाता हुआ पूछता है "यह किसका लाहू है, कौन मरा?... वह फकीर यदि सूफी होता या गाँधी जैसा संत होता तो अधिक स्वाभाविक लगता और प्रभावशाली भी। उसे क्रॉस पकड़ने से, ईसाइयों को इन दंगों या शांति स्थापना के कार्यों में शामिल, करने से एक तो अस्वाभाविकता आती है तथा दूसरे ऐसा लगता है कि हिंदू-मुस्लिम दंगों के आयाम में वह ईसाई का आयाम, मात्र आयमों के बढ़ाने के लालच को नाटककार रोक नहीं पाया है। नाटककार की इस छोटी सी कमजोरी को, उसकी अन्य ताकतों को देखते हुए, आसानी से नजरअन्दाज किया जा सकता है।

इसके बाद एक कैन्टीन में फरीद, अब्दुल और शर्मा इन दंगों पर बहस करते हुए दिखाई देते हैं। शुरुआत पास में बैठे तनावपूर्ण चुप्पी लिए सिख की तरफ इशारा करते हुए होती है। यहाँ भी हिंदू सिख के दंगों वाली न तो कोई घटना दिखलाई गई है और न उस पर चर्चा हुई है। मात्र एक

सिख को तनावपूर्ण ढंग से चुपचाप-संवादहीन स्थिति में बैठा देने से हिंदू-सिख के आयाम का जुड़ना मुश्किल है और इसे जोड़ने की आवश्यकता भी नहीं थी क्योंकि वह व्यापकता इस नाटक में है। इसी बातचीत के शुरु में शर्मा कहता है, "आदमी के अंदर का शैतान गाहे बगाहे सिर उठाता रहता है और इन्सानियत के मूँह पर कालिख पोत देता है।" तब फरीद कहता है, "लेकिन उस कालिख को पोंछने की कोशिश भी इंसान ही करता है"। और उदाहरण के लिए एक पंडित तथा एक खान का हादसा सुनाता है। लाहौर के दंगों में खान पंडित की बेटी को मुस्लिम दंगाइयों से बचाते हुए मारा जाता है और दोनों की बेटियाँ सीता और सलमा भी उस भीड़ में दब जाती हैं। जब पंडित दिल्ली भागकर आते हैं तब एक मुसलमान औरत की लाश पर रो रही उसकी बेटी को अपने घर लाकर पालते हैं। उसका नाम सलमा रखते हैं और उसे इस्लाम धर्म के अनुसार ही पालते हैं। इस दृश्य कुछ सशक्त संवाद भी हैं और कुछ कमजोर भी।

इस उदाहरण के बाद फरीद कहता है," मज़हबी जनून एक बात है और इन्सानी रिश्ते दूसरी बात।" इस घटना तथा उदाहरण से नाटक अपनी चरम स्थिति की ओर प्रभावशाली तथा सहज ढंग से बढ़ता है। क्योंकि इन्ही इन्सानी रिश्तों के बल पर साम्प्रदायिक सद्भाव स्थापित करना चाहता है। शर्मा भी अपने बचपन के मित्र गफूर के साथ बिताए जीवन्त क्षणों का वर्णन करते हुए कहते हैं कि गफूर के पाकिस्तान जाने के बाद उनके जीवन में एक अजीब सूनापन आ गया है।

इसके बाद एक हँसोड़ व्यक्ति भोलानाथ का प्रवेश होता है जो मजाक ही मजाक में गम्भीर बातें कह जाता है। वह कहता है। "आजकल हिंदू और मुसलमान औरतों को देखकर उनका धर्म नहीं बताया जा सकता" और तब वह अब्दुल से पूछता है कि, "इस हालत में अगर आपको किसी हिंदू औरत को मारना पड़ जाए तब आप क्या करेंगे?" पहले तो अब्दुल भोला पर गुस्सा होता है किन्तु बाद में आशय समझकर खुद ही इस स्थिति की भयावहता दर्शाने के लिए शम्भू और शफीक वाला हादसा सुनाता है। इस तरह नाटककार एक जीवन्त तथा स्वाभाविक लगने वाली घटनाओं से धीरे धीरे चरम स्थिति पर पहुँचता है। इस घटना की विश्वसनीयता बनाने के लिए ऐसा करना बहुत जरूरी था और नाटककार की कुशलता भी इसमें परिलक्षित होती है।

शम्भू के हाथ काटने वाली घटना पर सहसा विश्वास करना असंभव सा लगता है। आखिर शम्भू को हाथ काटने से क्या मिला? मात्र इसे पागलपन कहने से पूरी बात नहीं बनती, वरन कमजोर होती लग सकती है। क्या वह डर गया कि हिंदू दंगाई उसे मुसलमान समझकर मार डालेंगे? तब तो वह इंसानी रिश्तों को नकारने सी बात कर रहा है। और यह घटना ऐसी शिक्षा सी देती लग सकती है कि किसी गैर धर्म वाले से इतनी गहरी मित्रता नहीं करना चाहिए। जब कि नाटक की नींव का आधार 'इन्सानी रिश्तों' द्वारा मज़हबी जनून को काबू में रखने वाला सिद्धान्त है। इस तरह इस नाटक के अन्दर एक आत्म विरोध सा दिखता है। और इसलिए इस घटना की सचाई पर अविश्वास सा होता है। और यह नाटक की कमजोरी भी लग सकती है।

किन्तु इसे और गहराई से दखने पर एक और निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि मजहबी जनून को इन्सानी रिश्ते एक सीमा तक ही काबू में रख सकते हैं और जब मजहबी जनून उस हद के पार हो जाता है तब तदजनित भय तथा आतंक के वातावरण में इंसानी रिश्ते भी कमजोर पड़ सकते हैं। किंतु इस तरह का निष्कर्ष नाटककार ने स्पष्ट रूप से नहीं दर्शाया है, जैसे अन्य निष्कर्ष। किन्तु साथ ही साथ, इस तरह के निष्कर्ष को उसने कहीं नकारा भी नहीं है। और नाटक का यथार्थ यह निष्कर्ष स्वयं ही देता है, और यही इस नाटक की अद्भुत शक्ति है।

अन्ततः यही यथार्थ तो भारत ने भी भोगा है। गाँधी जी की तमाम कोशिशों के बावजूद भारत के तो दोनों बाजू जैसे कटे थे। हम विगत पता नहीं कितने बरसों से बने हुए इंसानी रिश्तों को, इस साम्प्रदायिक जनून के आतंक में आकर, अपने बाजुओं की तरह काटने में लगे हैं।

इसीलिए जब अब्दुल, शम्भु का हादसा सुनाने के बाद, चरम सीमा पर यह कहता है," सवाल पैदा होता है कि क्या हम इसी तरह खुद अपने बाजू काटते रहेंगे? तब सारे कथानक के विकासक्रम तथा सशक्त संवाद, ध्वन्यात्मक घटनाएँ आदि अन्य नाटकीय तत्वों के प्रभाव में आकर दर्शक भी अन्य पात्रों के साथ पूछ सकता है, "सवाल पैदा होता है कि क्या हम इसी तरह खुद अपने बाजू काटते रहेंगे"। इस सवाल को पूछने वालों में, सारे नाटक में चुपचाप तनाव में बैठा सिख भी पूछता है। यह नाटक, इस तरह, साम्प्रदायिक तनाव को एक मार्मिक प्रश्न में बदलकर, मानवीय ऊर्जा का अर्ध्वगमन करता है, क्योंकि इस प्रश्न का उत्तर इसी प्रश्न में, नाटककार ने सफलतापूर्वक भर दिया है। इस नाटक के अन्त में, उस क्रांस-लिए-फकीर का आना और गीत गाकर उस प्रश्न का दुहराना 'यह लहू किसका है...? फकीर, का इस तरह आना सारे नाटक के यथार्थ के सामने कुछ अनावश्यक सा लगता है। सम्भवतः नाटककार इस नाटक के रूप को एक तरह के कलात्मक वृत्त में समेकित करना चाहता है जब कि यह नाटक तो एक के बाद दूसरे सोपानों पर ऊँचा चढ़ता जाकर एक अत्यंत मानवीय चरम बिंदु पर पहुँचता है।

—विश्वमोहन तिवारी,
एयर वाइस मार्शल (से नि)
ई 143, खंड 21, नौएडा, 201301

पुस्तकः कटा हुआ बाजू, लेखकः केवल सूद
प्रकाशकः विद्यार्थी प्रकाशन, के-71, कृष्णानगर, दिल्ली-51

भावुकता से बोझिल औसत कहानियां

समीक्षित संग्रह 'अधुरी तस्वीर' में सूरज प्रकाश की नौ कहानियां संकलित हैं। कमोबेश इन सभी कहानियों में निम्नमध्यवर्ग के चिरपरिचित जीवन-यथार्थ को उभारने का प्रयास किया गया है। जिन कहानियों में सम्भ्रांत वर्ग के जीवन को दर्शाया गया है उनमें भी किसी निम्न अथवा निम्नमध्यवर्गीय पात्र की आँखों से ही इस यथार्थ के ऊपर से पर्दा उठाने का प्रयास किया गया है। मिसाल के लिए 'किराए का इन्द्रधनुष' कहानी का उल्लेख किया जा सकता है। लेकिन इन तमाम कहानियों से उभरने वाले 'यर्थाथ' और वास्तविक सामाजिक यर्थाथ के बीच एक 'गैप' अथवा फांक नजर आती है, जो रचनाकार के अपरिपक्व कलात्मक दृष्टिकोण तथा सीमित सर्जनात्मक ऊर्जा की ही परिचायक है।

अधिकांश कहानियों में भावुकता और रचनात्मक कच्चेपन का अहसास भी होता है। मिसाल के लिए चाहे वह उपर्युक्त 'किराए का इन्द्रधनुष' हो

या 'टैंकर' अथवा 'रंग बदरंग' हो या 'दाली चाचा नहा रहे' शीर्षक कहानी। भावुकता और कच्चेपन के अलावा ऐसी कहानियों में एक तरह की फार्मूलेबाजी के भी दर्शन होते हैं। मिसाल के लिए पंजाब में आंतकवादी की गहरी त्रासदी और जटिल समस्या को लेकर अत्यंत सरलीकृत निष्कर्षों और भावुकतापूर्ण ट्रीटमेंट के साथ लिखी गयी 'अधूरी तस्वीर' शीर्षक कहानी जो संकलन की शीर्षक-कथा (इसीलिए शायद लेखक की दृष्टि में सबसे महत्वपूर्ण कहानी) होने के बावजूद अत्यंत साधारण रचना है।

वैसे तो संग्रह की सभी कहानियां कमोबेश औसत दर्जे की ही हैं लेकिन फिर भी 'यह जादू नहीं टूटना चाहिए' तथा 'बाजीगर' शीर्षक कहानियां कुछ हटकर हैं। ये दोनों कहानियां न केवल इस संग्रह की सबसे अच्छी कहानियां है बल्कि लेखक की कथा-दृष्टि और कलात्मक सामर्थ्य के बारे में कुछ आशा भी पैदा करती है। एक दूसरे से एकदम भिन्न धरातलों पर लिखी गयी ये दोनों कहानियां अपनी सहजता और मार्मिकता से अनायास ही पाठक को आकर्षित करती है।

समीक्षित संग्रह की कहानियां जैसे अपनी विषयवस्तु, पर कथा-दृष्टि, परिवेश चित्रण और प्रतिकलन में साधारण और औसत दर्जे की कहानियां हैं वैसे ही लेखक की भाषा भी समकालीन हिंदी कहानी की चलताऊ भाषा है। हालांकि कुछ कहानियों में, विशेष रूप से उपर्युक्त 'बाजीगर' और 'यह जादू नहीं टूटना चाहिए' शीर्षक कहानियों में कहीं-कहीं भाषा और शैली का प्रवाह ध्यान खींचता है तथा लेखक के भावी विकास के प्रति थोड़ा-बहुत आश्वस्त भी करता है। कहने की आवश्यकता नहीं कि यदि सूरज प्रकाश हिंदी कहानी के चलताऊ लटकों और बेजान फार्मूलों से हटकर अपने सुपरिचित यर्थाथ के संवेदनात्मक चित्रांकन की ओर प्रवृत्त होंगे तो उनसे एक अच्छा कहानीकार बनने की उम्मीद की जा सकती है। क्योंकि औसत दर्जे की मीडियों केसी के बावजूद उनमें कहीं-कहीं प्रतिभा के फ्लैशेज अभी भी नजर आते हैं।

—डा॰ गीता शर्मा,
C-3/13 मॉडल टाउन III, दिल्ली-110009

पुस्तक : अधूरी तस्वीर (कहानी संग्रह), लेखकः सूरज प्रकाश, प्रकाशकः साहित्य भारती, मूल्यः 45 रु॰

प्रशासनिक हिन्दी : ऐतिहासिक सन्दर्भ

विगत कई शताब्दियों से देश में बड़ी मात्रा में प्रशासनिक कार्य हिन्दी में हुआ है। प्रमाण मिले हैं कि अकबर, जहांगीर, शाहजहां और औरंगजेब के काल में भी शासन का कामकाज हिन्दी में होता रहा है और उसके बाद भी राजाओं के बीच बड़ी मात्रा में पत्र व्यवहार हिन्दी में हुआ है। उस पत्र-व्यवहार की यह विशेषता रही है कि हिन्दी की विभिन्न उप भाषाओं और बोलियों का मिश्रित प्रयोग होता रहा है। कहने का अर्थ यह है कि खड़ी बोली, राजस्थानी, ब्रजभाषा आदि रूप भी बीच बीच में प्रयुक्त हुए हैं, किन्तु हिन्दी साहित्य के इतिहास में इस प्रकार के प्रयोगों का कोई क्रमबद्ध अध्ययन नहीं हुआ है। इतना अवश्य है कि पिछले दो दशकों में इस बारे में साहित्यकारों में इस विषय का चिन्तन हुआ है और यत्र-तत्र इस बारे में लेख आदि भी प्रकाशित हुए हैं।

अंग्रेजों का देशी रियासतों के राजाओं के साथ बड़ी मात्रा में हिन्दी में जो पत्र-व्यवहार हुआ है, उसके नमूने राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर और राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली में बस्तों में या पत्रावलियों में मिलते हैं। रियासतों के राजघरानों में भी इस प्रकार की सामग्री प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। विश्वविद्यालयों के हिन्दी विभागों का ध्यान उल्लिखित सामग्री की ओर यदि आकर्षित हो जाए और हिन्दी में शोध करने वाले छात्र उस विपुल सामग्री का दोहन करने लगें तो देश के इतिहास पर ही नहीं बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक परम्पराओं के सम्बन्ध में भी अनेक अनजाने तथ्य प्रकाश में आएंगे।

डॉ॰ महेश चन्द्र गुप्त "प्राशासनिक हिन्दी : ऐतिहासिक सन्दर्भ" पुस्तक में ऐसे ही तथ्यों पर विस्तृत प्रकाश डाला है और अपनी कृति में लगभग 200 वर्ष पुरानी प्रशासनिक सामग्री में प्रयुक्त शब्दावली का विश्लेषण तो किया ही है, साथ-साथ सामाजिक और ऐतिहासिक दृष्टि से भी पत्रों से निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न किया है। विस्तृत अध्ययन से यह पता चलता है कि हिन्दी भाषा सैकड़ों वर्षों से प्रशासन में बखूबी इस्तेमाल होती रही है। सांस्कृतिक दृष्टि से पत्र-व्यवहार में राज्य के इष्टदेव का शुरू में ही स्मरण किया गया है और पत्र लिखने की एक निश्चित परिपाटी चलती रही है। राजाओं के बीच झगड़ों के निपटाने के लिए हुई सन्धियों और विधान मण्डलों के गठन आदि के नियमों और हिन्दी में प्रार्थना-पत्र देने आदि से सम्बन्धित अनेक मौलिक तथ्य पुस्तक में दिए गए हैं।

पन्द्रह अध्यायों में लिखित पुस्तक में हिन्दी के प्रयोग की परम्परा, भाषायी स्थिति, हिन्दी का विकास, प्रशासन की तथा अन्य क्षेत्रों की भाषा, भारत में प्रशासनिक भाषाओं और परम्पराओं, स्वातंत्रय पूर्व हिन्दी का न्याय प्रशासन में प्रयोग, हिन्दी में विधि कार्य और भाषा की प्रशासनिक क्षमता, स्वातंत्र्य पूर्व राजनयिक कार्यों में हिन्दी का प्रयोग, राजस्व सम्बन्धी कार्यों में हिन्दी का प्रयोग, स्वातंत्र्य पूर्व सुरक्षा कार्यों में हिन्दी का प्रयोग और स्वातंत्र्य पूर्व विविध कार्यों में हिन्दी का प्रयोग साथ-साथ स्वातंत्र्य से संविधान तक प्रशासन में हिन्दी और संविधानोंपरान्त प्रशासन में हिन्दी नामक दो अध्ययन भी हैं।

बीच-बीच में प्रशासनिक पत्राचार की छाया प्रतियों के साथ प्रशासनिक कामकाज और पत्राचार के अनेक उदाहरण दिए गए हैं।

प्रशासनिक कार्यों में हिन्दी के प्रयोग का इतिहास यह सिद्ध करता है कि हिन्दी एक सशक्त भाषा रही है और इसकी तकनीकी तथा प्रशासनिक शब्दावली का विकास भी पूर्ण रूप से हुआ है। यह कहने में भी कोई संकोच नहीं कि प्रशासनिक और वैज्ञानिक कार्यों में अंग्रेजी का स्थान लेने की क्षमता हन्दी में विद्यमान है।

डॉ॰ महेश चन्द्र गुप्त ने उत्तर-प्रदेश के देवबन्द (जिला-सहारनपुर) नगरी में जन्म लेकर कॉलेज स्तर तक शिक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त करके रुड़की विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में सिविल इंजीनियरिंग में डिप्लोमा किया है और तत्पश्चात् सिविल इंजीनियरिंग में स्नातक की उपाधि प्राप्त की। निर्माण कार्य में लगे रहकर हिन्दी में प्रथम श्रेणी आगरा विश्वविद्यालय से एम॰ए॰ किया। इसके बाद हिन्दी में ही पी॰एच॰डी॰ और डी॰लिट॰ की उपाधियां प्राप्त कीं। उनकी एक पुस्तक भी इससे पहले प्रकाशित हुई है जिसका नाम

"हिन्दी : सदियों से राजकाज में" है। उन्होंने केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद के संगठन मंत्री, प्रतियोगिता मंत्री और महामंत्री रहकर हिन्दी की निःस्वार्थ सेवा की है। वे अब भारत सरकार रेल मंत्रालय में निदेशक (राजभाषा) हैं।

—माला गुप्ता, डी-1ए/115, जनक पुरी, नई दिल्ली-58

पुस्तक का नामः प्रशासनिक हिंदीः ऐतिहासिक संदर्भ, लेखकः डॉ महेश चन्द्र गुप्त, प्रकाशकः वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, मूल्यः 175/-

"तुम चंदन हम पानी": हिंदी गज़ल की अनुकरणीय मिसाल

बड़ों-बड़ों के यह कान काट लेते हैं।
हमारे शैहर के बच्चों से मत उलझियेगा।।

रामपुर बसौल मिर्जा गालिब यारूस्सुरूर है, यहां के दरियाए कोसी में आबेहयात का चश्मा घुला है। जिस शैहर में मिर्जा गालिब, दाग, अमीर मीनाई जैसी हस्तियां रही हैं। उसकी मिट्टी से उगने वाले पत्रकारों की हिन्दुस्तान में अलग आनबान होती है, चाहे क्षेत्र हिंदी गज़ल का हो या उदर्व गजल का। आचार्य सारथी का गजल संग्रह 'तुम चंदन हम पानी" हिंदी गजल के क्षेत्र में एक संगेमील है।

गज़ल के आलोचकों में अंकल तबकः में अधिकांश ऐसे आलोचक हैं जों गज़ल का एक मिसरा भी मौजू नहीं कर सकते लेकिन गज़ल संग्रहों की आलोचना पर पृष्ठ के पृष्ठ लिख मारते हैं। बांझ औरत प्रसव पीड़ा नहीं झेलती इसलिए ममत्व का भाव भी उसमे हृदयजनित नहीं होता। गज़ल की समीक्षा बांझ औरत जैसे आलोचकों द्वारा खुली बेईमानी है। सही अर्थों में गज़ल का खेल "कोचिंग" से नहीं सीखा जा सकता। 'असली गज़ल तभी होती है जब बैहरे गैहन् में "रेलवे ट्रैक बना लेती है, स्दीफे सोच के आस पास घर बसा लेती है। और काफिए फिक्र के गुलाम बन जाते हैं — और इस स्थिति तक आने के लिए चाहिए कम से कम एक-डेढ़ दशक की अनवरत साधना। सारथी की साधना अवधि जहां तक मैं जानता हूँ इससे कम नहीं और इसीलिए उनकी हर एक गज़ल में रची बसी है— उनके सोच की गहराई, फिक्र की बुलंदी, तख्खयुल की मानाखेज परवाज, और उनफ़रादों (व्यक्तिगत) अंदाजे ब्यां'

हिंदी गज़ल अगर गोद ली विद्या है, हिंदी को अपनी कोखे से जन्मी नहीं तो फिर हिंदी गज़ल गज़ल ही होनी चाहिए गज़ल नहीं। हिंदी गज़ल के इतने अधिक संग्रह छप रहे हैं कि लगता है कि हिंदी कविता के भिण्डी बाजार में भिण्डी के अलावा और कोई सब्जी ही नहीं बिकती। "तुम चंदन हम पानी" में हर गज़ल अपने शरीर और आत्मा से विशुद्ध गज़ल प्रतीत होती है। उन्हें अशआर की बरजस्तगी पर महारथ हासिल है। सारथी गज़ल की आत्मा से परिचित हैं। हिंदी गज़ल को गज़ल का शुद्ध रूप प्रदान करने में उनकी सपनी नहीं। गीतातमकता या सिर्फ गायी जाने वाली विशेषता के आधार पर उसे वह "गीतिका" कहने वाले ऋषियों के पक्षधार भी नहीं, क्योंकि अच्छी गज़ल गाने के लिए नहीं, पढ़ने के लिए होती है।

हिंदी के युवा गज़लकार इसलिए बंदनीय हैं कि वह गज़ल को एक "विशिष्ट विद्या" मानकर उसे "भोगे गए यथार्थ "देखे गए कड़वे सच" न की अभिव्यक्ति का माध्यम मानतें हों प्यार उनके लिए काल्पनिक विषय है। 50 साल की उम्र के आस पास के हिंदी गज़लकारों की अधिकांश गज़लों में मांसल सौंदर्य की बुलहवस से पैदा होने वाली खुशफहमी (आत्म प्रवंचना) झलकती है। नौजवान गज़ल पढ़ते हैं, बूढ़े गज़ल के जरिए अपनी भदेस मिटाते हैं। आचार्य सारथी के यहां प्रेम की अभिव्यक्ति है लेकिन उनकी गज़ल प्रेमाभिव्यक्ति के दृष्टिकोण से महबूब से गुफ्तगूँ करने वाली जिस्मानी वाजूद पर टिकी गज़ल नहीं। उर्दू गज़ल में "इश्के मजाजी से" इश्के हकीमों तक पहुचने की बात सूफी शायरों ने तसलीम की है लेकिन रवायती गज़ल की बदनसीबी यह है कि वह इश्केहकीमी की बुलंदी पर पहुंचाकर फिर इश्केमज़ाजी की सीड़ी पर आ खड़ी होती है क्योंकि शायर में अपनी गज़ल के हमद बन जाने का शऊरे जाग जाता है। ज्यादातर शायर का मकसद गज़ल करने का होता है। हम्द (ईश्वर की प्रशंसा) का नहीं। गज़ल का महबूब जब निराकार या एब्सट्रेक्ट होता है तो वह माबूद बन जाता है। हिंदी और उर्द्व दोनों में गजल में इश्केमजाजी का असर है। गज़ल ख़ालिस गज़ल होती हैं। हिंदी में गज़ल को एडाप्टेड फार्म समझने वाले कुछ गज़लकार भी अपनी गज़ल को असरगोड़वी के सूफीयाना ढंग के मुक्त जिगर मुरादाबादी की गज़लों की समरूपता देने में व्यस्त दिखाई देते हैं।

आचार्य सारथी ने गज़ल को प्रेमाभिव्यक्ति के क्षेत्र में ऋचा और भजन से नीचे नहीं गिरने दिया है। उनकी गज़ल में "सीम द्वारा असीम की तलाश है", "व्यक्त की अव्यक्त को देखने की चाह है; साकार का निराकार के प्रति समर्पण भाव है। उनके यहां "वह" चंदन हैं खुद का अस्तित्व पानी। मैनें भी जब हिंदी गज़ल कही थी, गज़ल के एक मतअले में कहा था;

जन्मों-जन्मों का बंधन है यह प्रीत तो हाथ का उर्वशी के यह कंगन नहीं, प्रेम दीवानी मीरा की है वेदना, एक आवारा जोगी का दर्शन नहीं।

सारथी ने भी प्रेम को मीरा की आंख से देखा है। सारथी प्रेम तो मीरा का भजन होता है"। मीरा रदीफ़ बनाकर उनके संग्रह की दो गज़लों में प्रेम के प्रति समर्पण भाव की गंगा पर कहे गए शेर मिसाल हैं। गंगा उनके यहां समिष्टि वादिनी है; समन्वय की अटूट प्रक्रिया। गंगा तट पर भीड़ लगाए "सवादुशों (साधुओं नहीं) के स्टेनलैस स्टील में गंगा जल भर कर उन्होंने गंगा की पवित्रता को लांछित नहीं किया है वह इस रैदास की कटौति में उतार लाएं हैं।

कटौती में उसे रैदास की आना पड़ा चलकर,
हमारे पुण्य श्लोकों का सहज आह्वान है गंगा।

आचार्य सारथी गज़ल के सिद्धहस्त शिल्पी हैं। अशआर को वह दुलार कर तराशते हैं: छैनी की चोट से उभारते नहीं।

बेहिचक एक बात में जरूर कहूंगा और वह यह कि उनकी कुछ गजलों पर उर्दू गजल का प्रभाव बड़ा स्पष्ट है। "प्यारे" रदीफ लेकर हिंदु मानसिकता का गज़लकार "गजल" कह ही नहीं सकता। शब्दकोश में अनेकों शब्द उर्दू के खालिस लफ़ज हैं, जैसे राजदार, फजा, जौनिसार, औकात, अंदाज, तबसरा ग़जब आदि। एक बार भगवान एक हिंदु गजलकारी के सामने प्रकट हुए और पूछा की अगर तूं वास्तव में ग़ज़ल लिखना चाहता है तो मेरा का किया (लुकांत) बता। गजलकार तुरंत

बोला—शैतान। भगवान हंसे और यह कहकर चले गए, हिंदुस्तान में काग़ज की किल्लत है, कागज बर्बाद मत कर। सारथी की ग़जल "भगवान का कूफिया इंसान के टागरी की है। वह गजल के माध्यम से इंसान की आत्मा की गरिमा को स्थापित कने में श्रमरत हैं। जहां तक उर्दु शब्दों का प्रयोग का संबंध है आचार्य सारथी तआस्सुबी गज़लकार नहीं। वह उस तुलसी के पुजारी हैं जिसकी रामचंरितमानस में हजारों शब्द अरबी और फारसी के हैं। हिंदी की कुछ ग़ज़लकार मोटे मोटे रसहीन, संप्रेषण की सहजता से रिक्त ऐसे हिंदी के शब्दों का मांसस होकर प्रयोग करते हैं कि ग़ज़ल सीमेंट के ब्लाकस से जुड़ी पंचमंजिला इमारत नजर आती है। शायद उन्हें डर यह है कि बोलचाल की हिंदी (जिसमें उर्दु के लफ्जों की बहुतायत है) में गजल उर्दु की नहीं मान ली जाए। इसलिए वह हिंदी की क्लिष्ट शब्दों की तलाश में रहते हैं लेकिन वह गजल को हिंदी की गजल नहीं वरन हिंदु की गजल बना देते हैं। भाषा, शैली और उसलूब में आचार्य सारथी "फेनेटिक" नहीं।

ग़ज़ल दाखिल और खारिज़ का सिलसिला कही जाती है। सारथी के यहां दाखिल होने वाले खयालात महज आयद नहीं। एक से विचारों का लगातार सिलसिला नहीं, ठहराव है, ठहराव इसलिए कि वह यथार्थ के प्रति सजग है। मुशहिद अर्थात् निरीक्षण भी आजकल के ग़ज़लकार के लिए आवश्यक है। आज के दौर के सच्चे शेरों में मंजरकशी प्राकृतिक झरनों, नदियों, श्यामल, बनों, की नहीं होनी चाहिए, फोटोग्राफी होनी चाहिए टूटे हुए घरों की, उजड़े हुए शेरों की। अच्छा ग़जलकार रात की तन्हाई में कल्पना के पंख लगाकार ग़ज़ल नहीं कहता अपनी छत के ऊपर सुबह शाम खड़ा होकर आस पास के घरों में झांकता है, सड़क पर देखता है। सारथी की महानगर की जिंदगी की मजबूरियों पर नजर है;

एक शैफाली अभी सजधज के निकली है यहां
वो लुटाएगी कही जाकर जवानी रात भर।

"तुम चंदन हम पानी" उन लोगों को पानी पानी भरने के लिए सक्षम है जो ग़ज़ल के नाम पर बकवास कर रहे हैं:—

प्रो॰ ओम राजः विभागाध्यक्ष,
इतिहास विभाग, राजकीय पी॰जी॰
कालेज, बागेश्वर (अल्मोड़ा) पिन 263642

पुस्तकः तुम चन्दन हम पानी (गज़ल संग्रह), लेखकः आचार्य सारथी, प्रकाशकः मनु प्रकाशन, 1/9978, गली नं॰ 3, सतनाम मार्किट पूर्वी, रोहतास नगर, दिल्ली-110032, । प्रथम संस्करण 1994, मूल्यः 60 रुपए, संपर्कः 1/5783, बलवीर नगर चौक, शाहदरा, दिल्ली-32 ।

विविधात्मक समीक्षा-मुठभेड़

आलोचना कर्म साहित्य में अत्यधिक कठिन कर्म है, जिसमें स्वाध्याय एवं चिन्तन के परिदृश्य का अत्यधिक महत्व होता है, यह आलोचक की पैनी दृष्टि पर निर्भर करता है कि वह वस्तु स्थिति को किस मापदंड पर कसता है, पिछले कई वर्षों में आलोचना व आलोचकों ने कई तेवर बदले हैं। कहीं-कहीं तो लगता है कि आलोचना स्वार्थ व लोलुपता के घेरे में परिसरमित हो महज स्तुतिमान रह गया है जिसके धंधल के में साहित्य का मूल्यांकन कहीं खो सा गया है। सच्ची व अच्छी आलोचना एक बारीक छलनी की तरह होती है जो अच्छाई की प्रविष्टि तो करती है लेकिन बुराई को अपनी सीमा से अक्सर नहीं घुसने देती, निःसंदेह ही अच्छी समीक्षा साहित्य को संरक्षण प्रदान करती है।

"मुठभेड़" श्याम कश्यप के आठ समीक्षात्मक एवं चार लघु पुस्तकीय समीक्षाओं का संकलन है, जिसमें समीक्षक ने कवि, कविता व काव्य सिद्धानतों के फलक को अपने अनुसार रूपासित करने का प्रयास किया है, प्रथम तीन समीक्षाएं कवियों के काव्यात्मक फलक का प्रतिनिधित्व करती हैं जिसमें कहीं-कहीं तो समीक्षा सिद्धांतों का अनुपालन हुआ है लेकिन कहीं-कहीं समीक्षक काव्यात्मक तुलना करता हुआ आत्मकथात्मक जीवनी शैली पर उतारू हो जाता है मानों कि समीक्षा न कर जीवन के प्रसांगों का विधिवत् वर्णन कर रहा हो, जैसेः—

"सन् 1939 में उन्होंने पंत के "रूपाभ" में काम किया था और सन् 40-41 में वे "हंस" और अन्य प्रगतिवादियों के गहरे सम्पर्क में आये थे, "रूपाभ" और हंस" उस दौर में प्रबतिशीतल आंदोलन के मुख पत्र माने जाते थे, इन दोनों ही चलिकाओं से डा॰ एम विलास शर्मा भी सम्बद्ध थे,"

यद्यपि समीक्षा में स्पष्टवादिता का अभाव अंश रपाई देता है परन्तु चयनिका श्लाधनीय है, शमशेर की आत्मीय विषादयुक्त पीड़ा का चित्रण हृदय ग्राही है—

कौन पाप हैं पूर्वजन्म के
जिनका मुझको फल मिलता है?
मैंने नगर जलाये होगे
जो मेरा सब तन जलता है।
पथ नदियों के मोड़े होंगे
देश-देश तरसाया होगा
विफल सहस्र मीन सा तब तो
कह पापी मन पाया होगा

(पृष्ठ—18)

कवि केदार के संग्रह की विवेचना तन्मयता से हुई है। समीक्षक के पास शिल्प को चीरफाड़ करने के अतिरिक्त भाषा की मोहकता भी है, हृदय स्पर्शिता भी है जैसे त्रिलोचन को आंकते हुये ये पंक्तियां स्पष्ट हैं:—

"बुन्देलखंड के बिना जैसे केदार की कविता और मिथिला के बिना नागार्जुन की कविता की कल्पना नहीं की जा सकती ठीक वैसे ही अवध

के बिना त्रिलोचन की कविता की भी कल्पना नहीं की जा सकती,"

कलावादी सिद्धांत की विवेचना में आलोचक ने अपनी स्थापनों का परिचय दिया है जिसमें कवि व कविता के कई सोपान खुले हैं, अमृतलाल नागर के कथाशिल्प का विवेचन भी प्रशंसनीय है, वसंती के पात्रों का तात्विक विवेचन व भीष्म साहनी की कथात्कता को भी रूपायित करने में आलोचक सफल हुआ है, कविता के बंद पड़े बंधों व संबंधों से उपजी कविता के बंद पड़े व बुनरवट को भी अपने अंदाज में दर्शाया गया है, अंत में चार पुस्तकों की समीक्षाएं दी गई है। यद्यपि वे आकार की दृष्टि से लघु हैं किन्तु अपने कथ्य को वेवाकी से सिद्ध करती है।

कहा जा सकता है कि कश्यप जी ने बदलते हुये अपने जीवन मूल्यों के उनुरूप ही सैद्धान्तिक मूल्यों को अपनी सोच व पकड़ के अनुरूप ही कुछ नयापन देकर प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। पुस्तक संग्रहणीय है।

समीक्षकः डा० दिनेश चमोला, राजभाषा अधिकारी, भारतीय पेट्रोलियम संस्थान, देहरादून—248005 (उ०प्र०)

पुस्तक-मुठभेड़, लेखक-श्याम कश्यप, आकार-सी-3/13, मॉडल टाउन-III दिल्ली-9, मूल्यः 125/- सजिल्ठ।

भारत में विद्यालय शिक्षा—राष्ट्रीय नीतियां एवं परिप्रेक्ष्य

भारत में हिंदी भाषी विद्वान अपने विविध विषयों के ज्ञान का प्रदर्शन प्रायः अंग्रेजी में लिख कर करते हैं। डा० जयंती प्रसाद मिश्र ऐसे शिक्षाविद् है, जिन्होंने हिंदी में पुस्तकें लिखकर हिंदी के भंडार को समृद्ध करने का व्रत लिया है।

हिंदी में कुछ लोग पैसा कमाने के लिये विभिन्न स्तरीय पाठ्य पुस्तकें लिखते हैं, या ऐसी पुस्तकें लिखते हैं जोकि किसी न किसी पाठ्यक्रम में लग सकें। ऐसी व्यवसायी लेखकों की हिंदी में कमी नहीं है, पर उनकी पुस्तकें प्रायः निम्न स्तरीय अथवा अंग्रेजी पुस्तकों की नकल होती हैं। ऐसी पुस्तकों से हिंदी के भंडार में कोई समृद्धि नहीं होती, बल्कि कूड़े की वृद्धि होती है।

डा० जयंती प्रसाद मिश्र की प्रस्तुत इस दृष्टि से एक अपवाद है कि वह व्यासायिक उद्देश्य के लिए नहीं लिखी गई, वरन् विद्यालय शिक्षा जैसे उपेक्षित क्षेत्र की चुनौतियों एवं समस्याओं का गंभीर, तथ्यपरक, व्यावहारिक विवेचन करने और उनके विवेक पूर्ण समाधान प्रस्तुत करने के लिए लिखी गई है। यदि इसकी विषय सूची पर दृष्टि डाली जाए तो "शिक्षा के प्रसार में प्रमुख बाधाएं", "विभिन्न शिक्षा आयोग एवं नीतियां", "जनसंख्या शिक्षा", "धार्मिक, नैतिक और शारीरिक शिक्षा", "पब्लिक स्कूल और कम्पोजिट (माडल) स्कूल", "प्रौढ़ एवं अनवरत शिक्षा तथा राष्ट्रीय ओपन स्कूल जैसे शीर्षकों के अंतर्गत शिक्षा के विविध पक्षों एवं रूपों से संबंधित समस्याओं पर व्याहारिक दृष्टि से विचार किया गया है। फिर विद्वान लेखक के पूर्व प्राथमिक शिक्षा से लेकर माध्यमिक शिक्षा और व्यावसायिक शिक्षा तथा अध्यापक शिक्षा के प्ररिप्रेक्ष्य तक अपनी दृष्टि का विस्तार करते हुये अपने लम्बे शिक्षण अनुभव, प्रशासकीय अनुभव और अपने गहन अध्ययन का सार इस पुस्तक में रख दिया है, जिससे ये पुस्तक शिक्षकों से लेकर शिक्षा नीति के नियमों तक के लिए एक मार्ग निर्देशिका का काम करेंगी।

"भारत में विद्यालय-शिक्षा" पुस्तक में नाम के अनुरूप मुख्यतः राष्ट्रीय नीतियों (शिक्षा संबंधी) और उनके परिप्रेक्ष्य को विस्तार से प्रस्तुत किया गया है। विद्यालय शिक्षा की नीतियों और शिक्षा तन्त्र के प्रसार की दिशाओं की प्रमाणिक जानकारी इस पुस्तक से मिलती है, पर इन नीतियों पर कितना अमल हुआ, और उनके ठोस परिणाम कितने निकले, लेखक ने इनका लेखा जोखा प्रस्तुत नहीं किया। विभिन्न शिक्षा आयोगों और समितियों ने बड़े-बड़े सिद्धांत निरुपित किए, बड़े लुभावने आर्दश अच्छी अंग्रेजी में प्रस्तुत किए (प्रायः सभी आयोगों और समितियों की रपटें अंग्रेजी में ही निकली) पर जो लक्ष्य निर्धारित किए गए, वे कितने प्राप्त हुए, और जो प्राप्त नहीं हुए किन कारणों से नहीं हुए, इनकी तरफ भी विद्वान लेखक को आवश्यक तथ्यों के संग्रह के साथ ध्यान देना चाहिये था। पुस्तक पढ़कर लग सकता है कि भारत की विद्यालय शिक्षा से बेहतर दुनिया के किसी देश की शिक्षा नीतियां नहीं है, पर कटुयथार्थ यह है कि प्राथमिक शिक्षा और साक्षरता के लक्ष्य भी अभी तक प्राप्त नहीं किये जा सके हैं। पर लेखक ने जो परिश्रम किया है, उससे शिक्षा नीतियां सामान्य पाठकों के लिये भी स्पष्ट होगी और शिक्षा क्षेत्र में काम करने वाले भी इससे लाभ उठा सकेंगे।

डा० सुधेस, फ्लैट 1335 पूर्वांचल, जवाहार लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली—110067

पुस्तकः भारत में विद्यालय शिक्षा—राष्ट्रीय नीतियों एवं परिश्रम
लेखकः डा० जयंती प्रसाद मिश्र, प्रकाशनः श्याम प्रकाशन, सी-2 कंचन आपार्टमेंट्स, गीता कालोनी, दिल्ली—पृष्ठ 244, मूल्य 125—
प्रथम संस्करण 1993

"जिज्ञासु मन की परिणतिः कालिदास से साक्षात्कार"

भारतीय वाङःमय के उर्वर धरातल की पीठिका का विस्तार दस शताब्दियों से भी अधिक लंबे काल में फैला हुआ है। वाल्मीकि, व्यास और कालिदास इस उर्वर भूमि के ऐसे जीवंत प्रतिमान हैं जिनकी वाणी ने जीवन के आभ्यांतरिक अर्थों को नैतिक और उदात्त चिन्तन के सहारे एक नई दिशा दी है। यद्यपि इन तीनों कवियों की मानसिकता में वैविध्य है पर विश्वजनीनता के धरातल पर तीनों का दृष्टिकोण एक जैसा है। अंतरतम मन की जिज्ञासा का प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करना इस युग के साहित्यकारों की सबसे बड़ी विशेषता रही है। कालिदास इसी परम्परा के एक प्रतिनिधि कवि हैं। इनका काव्य एक विशिष्ट प्रणाली का चूडान्त निदर्शन है।

यहां पर हम जिस पुस्तक की चर्चा करने जा रहे हैं वह आचार्य विद्यानिवात मिश्र द्वारा कालिदास और उसकी कृतियों को केंद्र में रखकर विभिन्न अवसरों पर दिए गए व्याख्यानों का संकलन है। "कालिदास से साक्षात्कार" शीर्षक से लिखी गई इस पुस्तक को लेखक ने सुविधा को ध्यान में रखते हुए आठ अध्यायों में विभाजित किया है।

प्रारम्भ के तीन अध्यायों को "कालिदास का मर्म" शीर्षक दिया गया है और शेष पांच अध्यायों में प्राचीन भारत के सारतत्व के साथ भारतीय मन की अवधारणा को कालिदास की कृतियों के बहाने खोजने का प्रयास किया गया है। इस कृति में पं० विद्यानिवास मिश्र ने कालिदास को समग्र मानवीय चेतना का प्रतीक, तपोमय आत्मसंधान का बीज तथा भौतिक और आध्यात्मिक मनोवृत्ति का प्रतिनिधित्व करने वाला कवि माना है। कालिदास के व्यक्तित्व और कृतित्व को केन्द्र में रखकर आवरण पृष्ठ पर लिखा गया उद्धरण पूर्वोक्त मत के समर्थन के लिए सर्वथा उपयुक्त ही है,—"कालिदास का काव्य तीर्थ है, इसका जल तप का द्रव है, कालिदास इस देश की समग्र चेतना की पहचान कराने वाले कवि हैं, वे एक साथ न चुकने वाले वसन्त हैं, लू की लपटों में खिलने वाले कोमल शिरीष हैं, उदार रसवर्षी पावस हैं, निखरे शरद के मुक्त आकाश हैं, हेमन्त की ओस से भीगी प्रभाग में झलमलाती धरती हैं, यही नहीं वे संपूर्ण सृष्टि की परस्पर साकांक्षता और पर्युत्सुकता को जगाए रखने वाले पर विनम्र रचनाकार हैं।"

लेखक ने इस पुस्तक को सर्वग्राही बनाने के लिए पहली बार अपनी चिर-परिचित शास्त्रीय व्याख्यात्मक शैली के ताने-बाने से मुक्त रहकर सहज भाव से कालिदास और उनकी कृतियों से पाठक को सीधे संपृक्त करने की कोशिश की है और उन्होंने इसी संपृक्तता और साझेदारी को कालिदास को जानने, समझने और परखने के लिए अनिवार्य माना है। लेखक के गंभीर और अनुभवजन्य चिंतन के फलस्वरूप संभवतः पहली बार कालिदास की संपूर्ण कृतियों का लोकरंजन एवं लोकभावन रूप एक ही नज़र में भारतीय जनमानत के सम्मुख प्रस्तुत हुआ है।

कालिदास का संपूर्ण काव्य एक ऐसी बेचैनी का काव्य है जो केवल "स्व" और "पर" पर ही केंद्रित नहीं रहती बल्कि नहीं रहती बल्कि इन दोनों से ऊपर रहने वाले अदृश्य तत्व को सहज भाव से उभारने में हमारी सहायेता करती है। यह बेचैनी हृदय के तारों को, मन के तारों को और इंद्रियों के तारों को झंकृत करती हुई कालिदास की कृतियों से सीधा साक्षात्कार कराती है।

"तत् चेतसा-स्मरति नूनममबोधपूर्वम्" नामक श्लोक में बुद्धि और चेतस् शब्दों के एक साथ प्रयोग को लेखक ने कवि के मर्म को समझने की कसौटी माना है। लेखक का विचार है कि चेतस् बुद्धि से ऊपर की वस्तु है और वह चैतन्य है। इसलिए 'चेतना स्मरति ' में केवल चित्र का स्मरण नहीं है अपितु चित्र से बुद्धि का सीधा साक्षात्कार है। लेखक का विचार है कि संयोग में रहने वाले व्यक्ति और उसके मन में जो बेचैनी उत्पन्न होती है वह केवल भौतिक न होकर अध्यात्म से भी सीधा संबंध रखती है। अंधकार और प्रकाश की व्यावहारिक व्याख्या करते हुए कालिदास कहते हैं कि अंधकार में तो सब समतल रहता है लेकिन प्रकाश उन्नत और अवनत का बोध कराता है। इसी बोध का निरन्तर यत्न कालिदास की रचनाओं में सहज ही दृष्टिगोचर होता है। तमस के शमन के लिए कालिदास का यह प्रयत्न तप की पावन भूमि से उदित होने वाला ऐसा प्रकाश पुँज है जो अपने तपोमय आलोक से सृष्टि के हर क्षण को, आलोकित कर उसमें सबके होने का भाव जगा देना चाहता है।

कालिदास के बारे में प्रचलित भ्रान्तियों का निराकरण मिश्र जी ने कालिदास की कृतियों के अनेक उदाहरणों के द्वारा करने का प्रयास किया है। कालिदास को राजदरबारी कवि घोषित करने वाले विद्धानों के लिए उनका सुझाव है कि वे कालिदास द्वारा रचित मालविकाग्निमित्र नामक नाटक में अग्निमित्र के प्रति इरावती का आक्षेप देखें तो उन्हें पता चलेगा कि राजा के प्रति, राजदरबार के प्रति कालिदास की क्या भावनाएं और क्या विचार हैं।

लेखक कालिदास को "साझेदारी" का कवि मानता है। उसका मानना है कि जिसने साझेदारी को पकड़ लिया समझो उसने कालिदास को पकड़ लिया। कालिदास के संपूर्ण काव्य में इसी साझेदारी की प्रबल आकांक्षा का पुट सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। कालिदास यज्ञ में, अनुष्ठान में, तप में, जीवन में तथा नैतिक मूल्यों में साझेदारी को खोजते हुए चलते हैं।

कुम्मरसंभव को लेखक ने शिव और शक्ति का अदभुत समन्वय माना है। कुमार की उत्पत्ति को कालिदास ने सृष्टि के संधि क्षण में उत्पन्न संतुलन और संत्रास का प्रतीक माना है। उनकी यह कृति इसी संत्रास और संतुलन के द्धन्द्ध के बीच से निकलती हुई और पाठकों को इसका अहसास कराती हुई चलती है। आचार्य मिश्र ने कुमारसंभव को केवल जन्म का काव्य नहीं माना है और न ही पराक्रम का बल्कि इसे वे "संभव" का काव्य मानते हैं। कुमारसंभव में वे देवत्व और मनुष्यत्व की रक्षा में समर्थ तेजस्विता की सृष्टि का दर्शन कराते हैं। उनका विचार है कि जब तक उपर्युक्त सृष्टि के मंथन के भाव से कुमारसंभव की परीक्षा नहीं की जायेगी, तक तक वह समझ से दूर ही रहेगा।

तप की सार्थकता को रेखांकित करते हुए मिश्र जी का विचार है कि तप तब तक सार्थक नहीं होता जब तक उसमें द्रव का भाव न आ जाए। इसी भाव-बोध को जगाना कालिदास की संपूर्ण कृतियों का अभीष्ट है। विद्यानिवास मिश्र अभिज्ञान शाकुन्तलम को दिन का परिणाम मानते हैं और ऋतुसंहार को दिन का अन्त। इन्हीं दोनों रचनाओं को संपूर्ण यज्ञ और तप की परम्परा के परिणाम का स्रोत लेखक ने अंगीकार किया है। लेखक कहता है जब हम उनकी कृतियों का अनुशीलन करते हैं तो इस कवि की दृष्टि परिणमोन्मुखी दिखाई पड़ती है। परिणाम में सबको झुकाने की असीम शक्ति होती है और यह झुकाव अपर्ण से ही आता है। इसी अर्पणाभाव को उदीप्त करना कालिदास के काव्य की अद्वितीय विशेषता है।

कालिदास ने संपूर्ण राष्ट्र के सामाजिक यर्थाथ को जाना है, समझा है, देखा है और परखा है। और निर्णय दिया है कि इस देश का आदर्श उच्च प्रासाद पर टिका हुआ है और इसकी संस्कृति हिमालय से भी ऊंची और अतिशय प्राचीन है। मेघदूत को लेखक ने प्रतीक्षा का काव्य कहा है। क्योंकि प्रतीक्षा में परिणाम होता है, वह काव्य का सौभाग्य नहीं होता। यही प्रतीक्षा मेघदूत में निरन्त दिखाई पड़ती है।

आचार्य मिश्र कालिदास के श्रृंगार को परिपूरक व्यापार मानकर उसमें भाव और तप की समान सहभागिता को स्वीकार करते हैं और उनकी कृतियों में संपूर्ण जीवन के सामंजस्य को तलाशते हुए चलते हैं।

जीवन और मन की अदंरूनी कल्पनाओं में रस भर देने में सिद्धहस्त आचार्य विद्याविनास मिश्र ने कालिदास की कृतियों को महाराग का मंथन कहा है। उनके अनुसार उनका पूरा काव्य मनुष्य के भीतर, स्व के भीतर और भारत की सनातन खोज के भीतर विशालता का बोध जगाने में पूर्णरूपेण सक्षम है। उन्होंने इसी लिए कहा है कि कालिदास उस आशा

भरी प्रतीक्षा के कवि हैं जो कभी चुकते नहीं हैं, हमेशा प्रवाहमान रहते हैं और इसकी कारण वे निरन्तर भारत की पुंजीभूत हृदय में निरन्तर समाए रहते हैं। उनसे साक्षात्कार करना विश्व-मानव से साक्षात्कार करना है, उसे एक सूत्र में जोड़ना है तथा अटूट विश्वास के जरिये बांधना है। आचार्य विद्यानिवास मिश्र की यह कृति इसी दिशा में निरन्तर चलते रहने का एक श्लाघनीय प्रयास है।

पुस्तक की आवरण सज्जा सामान्य है। छपाई आकर्षक है।

—सरोज कुमार शुल्क,
एच-404, नानकपुरा, नई दिल्ली—110021

पुस्तका का नाम	:	**कालिदास से साक्षात्कार**
लेखक का नाम	:	**विद्या निवास मिश्र**
प्रकाशक	:	**भारतीय साहित्य प्रकाशन 286, चाणक्य पुरी, सदर मेरठ-250001**
प्रकाशन वर्ष	:	**1992**
मूल्य	:	**पेंसठ रुपये**

स्मृतियों की लहरें
(काव्य संग्रह)

कुछ कार्य ऐसे होते हैं जिन्हें हर कोई कर सकता है पर कुछ कामों को कोई-कोई ही कर सकता है। काव्य ऐसी ही देवीय प्रेरणा है और कुछ कार्य सायास होते है और अनायास कविता भी ऐसा ही अनायास कार्य है जो स्वतःस्फूर्त होता है ऐसा ही डा० वासंती रामचन्द्रन का सद्यःप्रकाशित काव्य-संग्रह है जो कविता के मानदंडों पर खरा उतरता हुआ कहीं छूता है अनायास। अहिंदी भाषी कवयित्री के हिंदी काव्य संग्रह को देखकर उसकी गुणवत्ता और भी बढ़ जाती है।

मुक्तछंद के नाम प्रायः भ्रष्ट गद्य लिखने वालों के बीच डा० वासंती की रचनाएं एक सुखद अनुभूति हैं। लड़खड़ाते बच्चे के डगमग शैशव में अपने भविष्य का दृढ़ संबल तलाश करती मां से लेकर भाई-बहनों के रिश्ते, रिश्तों के दर्द, दर्द की स्मृतियां और स्मृतियों की लहरों तक के कथ्य उनकी अनुभूति के कैनवस पर अभिव्यक्त हुए हैं।

टूटने, बिखरने और बिछुड़ने का दर्द कवयित्री की स्मृतियों को झंककोरता है और कई-जमे घावों को फिर से हरा कर जाता है। उसका मन हमेशा आशंकित रहता है कि नियति को अन्ततः अकेले रह जाने और ठूंठ भर बन जाने की ही है तब वह आर्त स्वर में कह उठता है-

"ये पात / विलग हो उड़ जाएंगे
ये फूल सृष्टि में हो जाएगें व्यस्त
मैं ठूंठ बन रहा जाऊंगा और
तरस जाऊंगा एक दिन / अपनेपन के एक छोटे और मधुर क्षण को"

(मैं अकेला पेड़)

कल्पनाओं के हरसिंगार धराशायी है, मन की पीड़ाएं अर्थहीन प्रतिबिंबित सी उभरती और मिटती हैं क्योंकि जिसके प्रति समर्पण है, वह सामने तो है मगर उसे छुआ नहीं जा सकता-नदी के दो किनारों की विवशता के सामन दोनों जिंदगी भर आमने-सामने होते हुए भी एक दूसरे को छू तक नहीं पाते बस इतना ही कह पाते हैं शायदः

"में निहारता रहूंगा तुम्हें
तुम्हारे समानांतर ही सही / रेत पर चलता रहूंगा
किसी पल अंजाने में तुम किनारे कर मत देना। (देखो भूल मत जाना)

संग्रह में शब्द-संयोजन अच्छा है, बिंबविधान तो कई जगह बहुत ही अच्छा बन पड़ा है। रागात्मकता भी मौजूद है। कुल मिलाकर रचनाएं प्रभावित करती हैं। हिन्दी अकादमी द्वारा संग्रह को प्रकाशन-अनुदान के लिए चुना जाना अपने आप संग्रह की सार्थकता को इंगित करता है लेकिन संग्रह में कुछ चीजें बुरी तरह खटकती हैं- खासतौर पर चंद्रबिंदु का बेवजह और अत्यधिक प्रयोग। काव्य-संग्रहों में इस प्रकार की व्याकरणिक अशुद्धियों से बचा जाना चाहिए। मुद्रण संबंधी अशुद्धियां भी काफी ज्यादा हैं। इस ओर थोड़ा अधिक ध्यान गया होता तो संग्रह और भी प्रभावशाली सिद्ध हो सकता था।

—राजेश श्रीवास्तव, 167-के, आरामबाग, नई दिल्ली-110055

"स्मृतियों की लहरें" (काव्य संग्रह) डा० वासंती रामचन्द्रन / सी०एम०पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रिब्यूटर्स, 8 / 60-61, शाहदरा, दिल्ली / पृ-62 / मूल्य-40 रुपये

खुशबुओं की तलब

एक जमाना था जब उर्दू के प्रतिष्ठित शायर और आलोचक अल्ताफ हुसैन 'हाली' तथा उनके समकालीन शायरों ने ग़ज़ल के विरुद्ध आवाज बुलंद करते हुए कहा था कि ग़ज़ल को तबले की धनक और घुंघरूओं की कैद से आज़ाद कर मानवीय जीवन और उसकी समस्याओं से जोड़ा जाना चाहिए।

ग़ज़ल शाही दरबार हो खानकाहों की महफिले, फूलों की महकती हुई सेज हो या जिंदगी को तपती हुई दोपहर, हसीन नौज़ेखा कलियों का संसर्ग हो या मैदाने-जंग में चमकती हुई तुलवारों की झंकार-इतने हर जगह अपनी संस्कृति व प्रतीकों के न समाप्त होने वाले चिन्ह छोड़े हैं। यह एक ही समय में शराबी और पाकबाज, शाह और फ़कीर दोनों को मानसिक संतोष तथा आंतरिक सांत्वना प्रदान करने का वातावरण निर्मित करती है।

इसका स्वभाव मूलतः आतंरिक होता है। मनुष्य के जीवन में जो परिवर्तन और इंकलाब जन्म लेते हैं, ग़ज़ल इनसे सीधे आंख मिलाने का साहस रखती है कभी-कभी यह लक्षण प्रकट रूप से दिखाई नहीं देते, किंतु तेज़ नजर रखने वालों को पीढ़ी दर पीढ़ी होने वाले राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिवर्तनों की झलक ग़ज़ल में अवश्य नज़र आएगी। यही ग़ज़ल की श्रेष्ठता और महानता है। यही उसके विस्तार और उसकी जीवंतता की कुंजी भी है। इन्हीं विशेषताओं ने 'भरतेंदु', 'जयशंकर प्रसाद' और 'निराला' को ग़ज़ल की ओर आकर्षित किया। इसी

परम्परा को आगे बढ़ाते हुए दुष्यत ने यह बात साफ जाहिर कर दी कि उन्होंने उर्दू शब्दों को उस रूप में इस्तेमाल किया है जिसे रूप में हिंदी में घुल-मिल जाते हैं। 'शमशेर,' 'सूर्यभानु गुप्त', 'शेरजंग गर्ग', 'बालस्वरूप राही', 'नईम', नीरज, 'अदम', 'ज्ञान प्रकाश विवेक', 'हरजीत', 'विज्ञानव्रत' और ब्रजमोहन से लेकर लक्ष्मीशंकर वाजपेई' तक अनगिनत कवियों ने ग़ज़ल को हिंदी साहित्य में जो सम्मान और प्रतिष्ठा प्रदान की, वह गंगा-जमुनी तहज़ीब की एक जिंदा मिसाल है। इसका ताजा सबूत है युवा कवि 'लक्ष्मीशंकर वाजपेई' का कविता संग्रह 'खुशबू तो बचा ली जाए'। इसमें कवि की कुल 36 ग़ज़ले हैं। इनके साथ ही इसमें 7 गीत और 12 शेर भी संकलित हैं।

वाजपेई की ग़ज़लों में सौंदर्य-शैली के जिस नूतन आवरण की ओट में अुनभव और विचारों का संसार द्रष्टव्य होता प्रतीत होता है उनमें रंग और आलाप भी है, हर्ष का अतिरेक भी। समय की चौखट पर रखे हुए कदमों की चाप भी है और विवेक भी। उसकी कल्पना में 'दाऊद' की ध्वनि नहीं, कृष्णा की बांसुरी का अहसास होता है। सुवाद, शीराज़ और अस्फ़हान की जगह उसके शेर दोआब के हरे-भरे मैदानों, कश्मीर के गुलपोश नज़ारों अर पूर्वी उत्तर प्रदेश के अल्हड़ यौवन की उन्मत्त अंगड़ाइयों या स्याह अलकों के रैनबसेरों में पनाह लेने वालों के सुकून के बदले मुल्क की बदहाली, दलगत राजनीति का सड़ांध, सामाजिक मूल्यों का ह्रास और सौंदर्यानुभूति के गिरते हुए ग्राफ का आईना दिखाते हुए हमें जिंदगी की कुड़वाहट और जूझते रहने की त्रासदी का अहसास कराते हैं। सहे जाते हैं मुर्दों की तरह हर जुल्म चुप रह कर / हमें उन बेबसों की बेबसी अच्छी नहीं लगती।

वाजपेई का काव्य जिंदा रहने की सीख देता महसूस होता है। उसकी ग़ज़लों में एक खास किस्म का लहजा है और फ़न की बुलंदियां भी पूरी तरह से मौजूद हैं- 'उस शख़्स की तलाश मुझे आज तलक है / जो शाह के दरबार में जाकर नहीं बदले या "मुद्दत से सह रहे हो वरी ग़म, वही घुटन / ओ सब्र करने वाला दुहाई है, कुछ करो"। कुछ करने/कर गुजरने का नारा लगाता हुआ कवि सावधान ना भी करता जाता है। "हर बुझी सांस जो सहती है घुटन मुद्दत से/कल सरेआम बगावत पे मचल सकती है।' नाराज़गी का तेवर कवि संवाद करने पर मजबूर कर देता है-" हादसे इतने हुए अपनी ज़िंदगानी में / ढ़ालना चाहूं तो ढलजाएं इक कहानी में"। या "हंस के ज़िंदगी जीना / दर्द ने सिखाया है। "और दर्द" की आंच में तपा डालो / फिर असर देखना दुआओं का।"

दरअसल वाजपेई का 'दर्द' मानवीय पीड़ा की अभिव्यक्ति है। यही 'पीड़ा' उसकी ग़ज़लों को जीवंतता प्रदान करती है। यह स्थिति समूचे भोगे हुए यथार्थ के बीच से जन्म लेती है। इन्हीं परिस्थितियों में "रचना" का प्रस्फुटन होता है और वह सीधी ग्राह्य हो जाती है। हकीकत यह है कि रचना तभी ग्राह्य हो सकती है जब कि कवि ने अपनी विशिष्ट अनुभूति का साधारणीकरण किया हो-"वो शख़्स जिसको मसीहा बना दिया तुमने/वो मसीहा नहीं है रोशनी का तस्कर है।" यह अनुभूति वही प्रक्रिया है, साधन है, माध्यम है, जिसके द्वारा सहृदय को काव्यानुभूति होती है। सच्ची काव्यानुभूति 'अंतहीन समंदर के सिलसिले' का पता देती है और उजड़ती हुई प्रकृति का अहसास भी कराती है-" सांस भी अगली सदी में कोई लेगा कि नहीं/पूछता है ये हवाओं से खुद ज़हर यारो।"

"आदमी, जिंदगी, लाश खुशबुओं की तलब" ने दरअसल प्रस्तुत काव्य-संग्रह को गंगा-जुमनी तहज़ीब का मरसिया नहीं ब्रलिक रंग रंग फूलों का गुलदस्ता बना दिया है जिसकी खुशबू को बचा लेना बेहद जरूरी है।

—रंजन जैदी

काव्य संग्रहः खुशबू तो बचा ली जाए, कविः लक्ष्मी शंकर वाजपेई, प्रकाशकः जगत राम एडं संस 9/221, मेन बाजार, गांधी नगर, दिल्ली-31 मूल्य : 40 रू०.

हिंसा / अहिंसा

साहित्य और राजनीति परस्पर एक दूसरे के पूरक हैं। राजनीति की जड़ें मनुष्य की भावना से जुड़ी हुई हैं। इसीलिए यह जीवन के हर क्षेत्र में व्याप्त है। साहित्य इससे अछूता नहीं है। राजनीतिक उपन्यासों में सामंतवाद की अभिव्यक्ति प्रखर एवं सशक्त रूप से हुई है। क्योंकि राजा या सामंत राजनीतिक सत्ता के परोक्ष सूत्रधार हुआ करते थे। दमन की राजनीति सामंती—व्यवस्था की प्रमुख पहचान हुआ करती थी। भय और आतंक के बलबूते जनता पर राज करते रहना सामन्तों का मुख्य उद्देश्य रहा है। रांगेय राघव का 'सीधा-सादा रास्ता' रहा हो या भगवती बाबू का उपन्यास 'टेड़े मेढे रास्ते'; प्रेमचदं का रंगभूमि हो या मधुकर सिंह का 'सबसे बड़ा छल' सबमें लगभग एक जैसे शोषण की सांमती-प्रवृत्तियां परिलक्षित हैं। अवंतीगढ़ का राजा सखत सिंह जी सामंतवाद की छत्रछाया में फैलाने वाले आतंक और भय का जीवन्त प्रतीक है। उदय सिंह ऐसे ही भय और आतंक का निजात-दिहंदा। ये दोनों पात्र उपन्यास 'हिंसा-अहिंसा' के प्राण हैं। समूचा कथासूत्र इन्हीं के इर्द-गिर्द बुना गया है। यूं तो मास्टर मुलायम सिंह, हकीम जी, सुजान सिंह, गंगा, लंगड़ बाबा, पंडित सदासुख लालु, चंदा, दिव्या और श्रीराम चौरसिया जैसे अनेक महत्वपूर्ण पात्र प्रस्तुत उपन्यास में मौजूद हैं और हरेक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, फिर भी इस कथा के ताने-बाने में प्रमुख दो पात्रों का परस्पर संघर्ष दरअसल एक नयी ज़मीन को हमारे सामने उजागर करता है, जो भय, आतंक और शोषण से लहू-लुहान है और उदय सिंह उसे अपने लहू से धो रहा है यही दृश्य चित्रित करने में रंजन जैदी सफल हुए हैं। लेकिन यहीं एक प्रश्नचिंह भी उन्होंने हमारे सामने खड़ा कर दिया है कि क्या सिर्फ लहू-लुहान धरती ही हम हासिल करना चाहते हैं, या अम्नो-अमान से रहने वाले मनुष्यों से भरी एक ऐसी दुनिया जिसमें सब सुख-शांति से रहकर एक ऐसे समाज को निर्मित कर सकें जिसमें 'अहिंसा' को प्रमुखता से पनपने का अवसर प्राप्त हो? लगता है आतंकवाद की समसामयिक समस्या से प्रेरित होकर इस उपन्यास की सर्जना की गई है। उपन्यास का यह सन्देश है कि शस्त्र, आतंकवाद अथवा हिंसा किसी भी प्रश्न का उत्तर नहीं हो सकता।

हिंसा-अहिंसा' रंजन जैदी का तीसरा उपन्यास है। अपनी तमाम भाव-भंगिमा के साथ पिछले उपन्यासों की तुलना में बिल्कुल अलग। 1947 से पूर्व का घटनाक्रम कहानी का कथ्य। अवंतीगढ़ नाम की एक रियासत जिसमें सामंतशाही का बोलबाला और उसी के खिलाफ जनांदोलन—जिसका नायक उदय सिंह नाम का एक युवक। मुक्ति के लिए वह शस्त्र उठाता है लेकिन उसके सामने दीवार बनकर खड़े हो जाते हैं उसके पिता मास्टर मुलायम सिंह जो गांधी जी की विचारधारा से प्रभावित हैं। यहीं से शुरू होती है राजनीति तथा जनांदोलनों के लिए

'हिंसा-अहिंसा' की उपादेयता की बहस। उदय सिंह के पीछे थे कामरेड लंगड़ बाबा और उनकी मार्क्सवादी विचारधारा-"सामंतवाद की जड़ें बड़ी कमजोर होती हैं। तेज आँधी के आते ही पेड़ गिर जाते हैं और मैं एक आंधी के आने का स्वप्न देखने लगा हूं" (पृष्ठ 36)। लंगड़ बाबा सेना में रहे हैं—बड़ी जंगे लड़ी हैं। अब अपनी मातृभूमि की मुक्ति की लड़ाई लड़ रहे हैं। "मेरा विश्वास है कि जब तक अपनी धरती को भीतर के सामंतों से मुक्त नहीं कराया जाएगा, सच्ची आजादी हमें प्राप्त नहीं हो सकेगी।" (पृष्ठ सं॰ 37)

उपन्यास राजनीति की एक शतरंजी बिसात है जिसमें तरह तरह के मोहरे हैं। सत्ता हथियाने का षड्यंत्र या कुटिल चालें आज भी पहले जैसी हैं। इसमें मानवीय संवेदना नगण्य है, इसलिए हत्या, बलात्कार, लूट और दंगें तनिक भी सत्ताधारियों को द्रवित नहीं करते। "राजनीति बहुत क्रुर और न समझ में आने वाली एक ऐसी प्रक्रिया होती है जो अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हर भले-बुरे, ऊबड़-खाबड़ और ऊंचे-नीचे रास्ते से होकर गुजरती है। तुम इसे नहीं समझ पाओगे। यह भी संभव है कि आज तुम जिन्हें अपने नेता और मसीहा मान रहे हो, वही कल तुम्हारे हत्यारे बन जाएं" (पृष्ठ सं॰ 120)। उदयसिंह के साथ यही तो चरितार्थ हुआ। हालांकि वह यह लड़ाई आत्मशक्ति और मनोबल से जीतना चाहता था लेकिन उसका मनोबल पूरा नहीं हुआ। भले ही वह 'हिंसा' के सहारे अपनी लड़ाई इन शक्तियों के विरुद्ध लड़ता रहा जो सत्य को असत्य से, न्याय को अन्याय से और धर्म को अधर्म से कुचल देना चाहती थी मगर अंततः 'हिंसा' की ही पराजय हुई। देखा जाए तो 'हिंसा-अहिंसा' का उदय सिंह प्रेमे चंद के 'रंगभूमि' का 'सूरदास' बहुत निकट लगते हैं।

उपन्यास में आजादी के प्रति लालसा (पृष्ठ 93), मातृभूमि का मोह (पृष्ठ सं॰ 109) साम्प्रदायिक वितृष्णा (पृष्ठ सं॰ 108) और अवसरवादी राजनीति की उठापटक आदि सारे संदर्भ समसामयिक राजनीति और वर्तमान समाज का हिस्सा हैं। कथानक चुस्त तथा सुगठित है और प्रवाहमय भी। शैली में गतिशीलता है। भाषा सरल एवं सहजता लिए हुए हैं। कहीं कहीं उपन्यासकार के भीतर का कवि भी सिर उभारता द्रष्टव्य होता है जैसे 'हथेलियों के हाले में गंगा का चेहरा--' 'वह जंगली बेल की तरह उससे लिपटती गई...,' 'राजमहल के सूराखों से छनकर यह खबर घर-घर तक पहुंच गई....' 'मुर्ग बांग ने यह तस्दीक कर दी कि सहर हो चुकी है.....' आदि।

कुल मिलाकर सद्यः प्रकाशित उपन्यास 'हिंसा-अहिंसा' हिन्दी साहित्य में एक नया मील का पत्थर साबित होगा।

— त्रिलोकनाथ धर
सी॰, 2/2 बी लारेंस रोड़, दिल्ली-110035

पुस्तकः हिंसा/अहिंसा लेखकः रंजन जैदी प्रकाशकः हिंदी साहित्य संसार उद्योग मूल्यः 60 रु॰

मेरे शहर की बुआबतां

"मेरे शहर की बुआबतां" कहानी संग्रह में श्रीमती पुष्पा हीरालाल की 30 कहानियां संकलित की गई हैं।

कहानी संग्रह में संकलित अधिकांश कहानियां सामाजिक हैं तथा पंजाब के मध्यम व निम्न मध्यम वर्ग के जीवन के विभिन्न पहलुओं को उजागर करती हैं। इन कहानियों में जहां "दुनियादारी", "बेतुकी लालसा", "मकान मालकिन" इत्यादि कहानियां आज के सामाजिक परिवेश पर आधारित हैं वहीं अपनी कुछ कहानियों में लेखिका ने ऐसे समाज की परिकल्पना की है जिसमें सास बहू को अपनी बेटी जैसा प्यार देती है (कहानी "जिंदो") व एक मजबूर लड़की को अपनाने के लिए एक लड़का अपने परिवार व धन-सम्पत्ति का परित्याग कर देता है ("एक मजबूत फैसला") "मेरे शहर की बुआबतां" व "मजहब का फसला" उन लाखों असहाय और टूटे हुए लाखों हिन्दुओं और मुसलमानों की कहानियां हैं जिन पर देश का विभाजन थोंपा गया।

लेखिका के पंजाब के विषय में अपनी भुमिका में ये उदगार "आज पंजाब में मजहब के नाम पर जो घृणा और विनाश की लहर उभर पड़ी है मगर यह एक धुन्ध की तरह है जो जल्दी ही छट जाएगी" उनके देश-प्रेम की परिचायक हैं।

कल्पना तथा यथार्थ से ओत-प्रोत ये कहानियां लेखिका के जीवन में बिखरी यादों के प्रतिबिम्ब हैं। कहानियों की भाषा बहुत ही स्वाभाविक, सरल और सृजनात्मक है तथा कहानियां के पात्र" सुपरमैन न होकर हमें अक्सर अपने आसपास मिलेंगे।

— सतीश कुमार गुप्ता
4247 त्रीनगर, जयमाता मार्किट, दिल्ली-110035

पुस्तक का नामः मेरे शहर की बुआबतां, लेखिकाः पुष्पा हीरालाल, प्रकाशकः विश्वोदय प्रकाशन, सी-66 बी, सिद्धार्थ एक्स्टेंशन, नई दिल्ली-110014 मूल्यः 60.00 रुपये

बैंकों में अनुवाद प्रविधिः राजभाषा के लिए एक उपलब्धि

सरकारी कार्यालयों और बैंको आदि में हिन्दी का प्रयोग अब नई बात नहीं रही। भाषा विषयक तमाम पूर्वाग्रहों और कठिनाइयों तथा विरोधाभासों के बावजूद इस क्षेत्र में निरंतर नई उपलब्धियाँ हासिल हो रही हैं। आज जहां मौलिक रूप से हिन्दी में लिखना प्रारंभ हुआ है, वहीं काफी कुछ अनुवाद के द्वारा हिन्दी में आ रहा है। हिन्दी, अनुवाद पर निर्भर नहीं करती, लेकिन सरकारी कार्यालयों के दस्तावेज, पद्धतियाँ और कुछ कामकाज अंग्रेजी में ही होते हैं। इन्हें अनुवाद पर निर्भर होना होता है। इसलिए "अनुवाद" कामकाजी हिन्दी का एक अभिन्न अंग है। डा॰ सीता कुंचितपादम ने इस महत्व को दक्षिण भारत में विशेष रूप से अनुभव किया है। जहाँ आज हिन्दी, अनुवाद के माध्यम से ही लोगों तक पहुंच रही है। डा॰ कुंचितपादम ने अपनी इस नवीनतम पुस्तक में बैंकों के लिए आवश्यक अनुवाद प्रविधि की संपूर्ण स्थितियों को रेखांकित किया है।

अनुवाद पर हिन्दी में कई पुस्तकें आई हैं। अनुवाद-विधि पर भी काफी कुछ पहले कहा गया है। इस पुस्तक की विशेषता यह है कि लेखिका ने इसके सैद्धान्तिक पक्ष की ओर सिर्फ संकेत किया है और अपने अनुभवों के आधार पर संपूर्ण स्थितियों को विश्लेषणात्मक स्वरूप देने के लिए व्यावहारिक व्याख्याएं दी हैं और बैंकों के संदर्भ में अनुवाद की विधि को कुशलतापूर्वक रेखांकित किया है। बैंकों के दस्तावेजों को सामने रखकर विविध बैंकों द्वारा किए गए अनुवादों को आधार बनाकर उनका एक सटीक और ब्यौरेवार विश्लेषण किया है, जो संभवतः बैंकिंग उद्योग में की गई पहली पहल है।

बैंकों में अनुवाद की परंपरा और विकास को स्पष्ट करते हुए उन्होंने अनुवाद के प्रचलन के बारे में लिखा है कि भारत के इतिहास के हर चरण में हमें अनुवाद के उदाहरण मिलते हैं। सामंतकाल में जब दो राजाओं के बीच मित्रता, रिश्ते होते थे तब अनुवाद की आवश्यकता होती थी। युद्ध हुआ करते थे जब विजित राज्य को पराजित लोगों की भाषा और हारे हुए स्वामीभक्तों को अपने नये स्वामी की भाषा जानना जरूरी हो जाता था। मुगलों के शासनकाल में विदेशी कवियों, पर्यटकों तथा इतिहास लेखकों को अनुवाद का आश्रय-लेना स्वाभावित था। अंग्रेजों के आने के बाद तो भारत के हर क्षेत्र में अनुवाद कार्य प्रारंभ किया गया क्योंकि अंग्रेज भारतीय भाषाएं सीखना चाहते थे और भारतीयों को अंग्रेजी सिखाने के भी अभिलाषी थे।

बैंकिंग कामकाज यह पश्चिमी देशों से होता हुआ हमारे देश में आया है इसलिए भी सारी सामग्री अंग्रेजी में ही तैयार होती है। इसलिए हिन्दी या भारतीय भाषाओं में इसे लाने के लिए अनुवाद का ही सहारा लेना पड़ता है। अंग्रेजी भाषा के गौरव और विवादातीतता को लेखिका ने संकेत करते हुए उदाहरण दिया है कि अनुवाद की गई सामग्री पर जब कभी हिन्दी प्रलेखों में कोई विवादस्पद बात उठती है तो यह बताया जाता है कि "मूल अंग्रेजी पाठ को ही प्रामाणिक माना जाए।" इसे अनुचित करार देते हुए लेखिका का स्पष्ट मत है कि जब तक मूल रूप से लेखन नहीं होगा और अंग्रेजी का इस तरह गौरव-गान बंद नहीं होगा तब तक कि हिन्दी प्रधान राजभाषा नहीं बन सकती उसे हमेशा दूसरा स्थान ही मिलता रहेगा।

तकनीकी शब्दावली का लेखिका ने विस्तार से विवेचन किया है। मानक शब्दावली तो अपनायी ही जानी चाहिए। इस दिशा में भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा बनायी गई शब्दावली बहुत उपयोगी है। अच्छी बात यह भी है कि इसमें समय-समय पर आवश्यक संशोधन होते रहते हैं। हर क्षेत्र में शब्दों की सूची देकर उनके सूक्ष्मअर्थों को सरलता से विश्लेपित किया गया है। अनुवादक के लिए इन सूक्ष्मअर्थों, शैलियों, अर्थ-छटाओं और समकालीन अर्थ-प्रचलनों का सतर्कता से ध्यान रखना पड़ता है। इस ओर भी लेखिका ने पर्याप्त विस्तार दिया है। बैंकिंग में कुछ शब्द ऐसे हैं जो लगभग एक ही कार्यविधि के निपटान के लिए उपयोग किए जाते हैं, लेकिन विभिन्न अवसरों पर इनका स्वतंत्र और स्पष्ट अस्तित्व और अर्थ है-जैसे—गिरवी, बंधक, दृष्टिबंधक। अंग्रेजी में इनके लिए एक ही शब्द है, जबकि हिन्दी में रहने और आड़मान जैसे पर्यायवाची शब्द भी हैं। इसलिए एकरूपता पर लेखिका ने जोर दिया है।

साथ ही, कानूनी दस्तावेजों एवं क्लिष्ट अनुवाद कार्य के समय बरती जाने वाली सावधानी की ओर इस पुस्तक में बृहत चर्चा की गई है। प्रशिक्षण सामग्री और बैंकों में प्रयुक्त अन्यान्य फार्मों, पत्राचार सहायक सामग्री, प्रक्रिया साहित्य और ग्राहकों व प्रचार सामग्री तक में अनुवाद की भूमिका को लेखिका ने सोदाहरण सफलता से प्रस्तुत किया है।

बैंकों में हिन्दी के प्रयोग की दृष्टि से दो क्षेत्र काफी अपरिचित हैं। एक तो विदेशी विनिमय और दूसरा कंप्यूटरीकरण। विदेशी विनिमय व्यवहार की आवश्यकताएं अलग प्रकार की हैं। इसलिए इस क्षेत्र में एक विशिष्ट प्रकार की शब्दावली आकार ले रही है। साथ ही, उस प्रक्रियात्मक संकल्पनाओं से अनुवादक को परिचित होता है। इसे भी बड़ी सहजता से सफलतापूर्वक लेखिका ने संयोजित किया है। शब्दावली और संक्षेपाक्षरों को विस्तार से समझाया है और इस क्षेत्र में अनिवासी खातेदारों सहित आयात-निर्यात के क्षेत्र में भाषा और विशेषतः हिन्दी की भूमिका की सार्थकता चर्चा की है।

कंप्यूटर या यंत्रीकरण तुलनात्मक दृष्टि से नया विषय है, लेकिन इसका सीधा संबंध भाषा से है और निष्कर्षतः हिन्दी से। क्योंकि बैंकों में कंप्यूटर का प्रवेश तेजी से हो रहा है, ऐसे में हिन्दी भाषा पर इसके प्रभाव, कठिनाइयां एवं उपायों पर प्रकाश डाला गया है। कंप्यूटर संबंधी योजनाओं और प्रावधानों का उल्लेख जानकारीपूर्ण है। इस संबंध में भारत सरकार के प्रावधानों के अनुसार द्विभाषिकता की दशा और दिशा पर आवश्यक सूचना आशाप्रद है कि भविष्य में कंप्यूटर भी हिन्दी को अपना लेगा। कई प्रकार के कंप्यूटर में यह सुविधा आज भी उपलब्ध है। इस क्षेत्र के तकनीक शब्दों और हिन्दी पर्यायों का उल्लेख नई जानकारी से युक्त है। भाषा के अनुकूलीकरण को वे आज की परिस्थितियों में अनिवार्य मानती हैं। बैंकिंग कामकाज में तार और हिन्दी के प्रयोग की चर्चा भी इस पुस्तक में की गई हैं, जो बैंकों के दैनिक कामकाज के लिए आवश्यक एवं अत्यंत उपयोगी है। यह पुस्तक अपने आपकों बैंकों और अनुवाद कार्य तक सीमित नहीं रखती, बल्कि राजभाषा से संबंधित किसी भी क्षेत्र के जिज्ञास के लिए यह पुस्तक उपयोगी होगी। भाषा में एक प्रवाह है और शैली पठनीय बन पड़ी है। दैनिक कामकाज के उदाहरण इस प्रकार संयोजित किये गए हैं, जिससे पुस्तक की उपयोगिता तो बढ़ी ही है, जिससे यह पुस्तक अनुवाद के क्षेत्र में अपनी विश्वसनीयता प्रमाणित कर चुकी है। गंभीर और तकनीकी विषयों को सरलता और बोधगम्यता सौंपकर लेखिका ने जहां भाषा-विषयक अपनी क्षमताओं का परिचय दिया है, वहीं अनेकानेक प्रसंगों में राजभाषा विषयक अपने मौलिक चिंतन से इस पुस्तक को मौलिक स्वरुप प्रदान किया है।

—डॉ॰ दामोदर खड़से,

उप मुख्य प्रबंधक, बैंक ऑफ महाराष्ट्र, लोकमंगल, 1501, शिवाजीनगर, पुणे 411 005

पुस्तकः "बैंकों में अनुवाद प्रविधि, लेखकः — डॉ॰ सीता कंचुतिपादम, प्रकाशक—भारतीय अनुवाद परिषद, 203, आशादीप, 9 हेरी रोड, नयी दिल्ली 110 001 मूल्यः रु॰ 100.00 पृष्ठ — 160

भारत में ग्रामीण अपराध और पुलिस की भूमिका

तत्कालीन राष्ट्रपति डा॰ राजेन्द्र प्रसाद ने भारतीय पुलिस सेवा के अधिकारियों के बीच भाषण करते हुए एक बार कहा था कि झोपड़ी में रहने वाला एक बहुत ही गरीब व्यक्ति भी आपके बारे में उतनी ही राय कायम कर सकता है जितनी कि न्यायधीश के पद पर आसीन व्यक्ति, क्योंकि आप हर प्रकार के व्यक्तियों के सम्पर्क में आते हैं।

भारत ग्रामीण प्रधान देश होने के नाते, ग्रामीण पुलिस का राष्ट्र निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान होता है। पुलिस विभाग एक बहुत ही उपयोगी और आवश्यक विभाग है। प्रत्येक सभ्य देश में पुलिस को बहुत ही महत्वपूर्ण और अनिवार्य कार्य करने पड़ते हैं। सरकार उन्हें जो सुविधायें दे रही है, उसके महत्व को समझकर उन्हें इनके बदले में जनता को अपनी अच्छी सेवायें देकर सरकार व जनता को अधिक से अधिक लाभान्वित करना चाहिए। इस पृष्ठभूमि में प्रस्तुत पुस्तक—भारत में ग्रामीण अपराध और पुलिस की भूमिका, काफी महत्वपूर्ण है।

हमने पिछले तीन दशक में अपराधों की दुनिया में अनेक अनुसंधान और अन्वेषणों में यह प्रयास किया कि समाज में बढ़ते अपराधों पर नियंत्रण लगाया जा सके। सारे प्रयासों के पीछे एक ही उद्देश्य रहा कि राष्ट्रपिता गांधी के सपनों के देश में भारत में सुख शान्ति, चैन और अपराध विहीन भारत का स्वराज स्थापित हो सके। आज भी इन प्रयासों में सरकार और प्रशासनिक अधिकारी लगे हुए हैं और कानून में इन अपराधों में लीन निर्धनों व शोषित परिवारों को मुफ्त सलाह देने के लिए कई बार अलग अलग स्तरों पर राज्यों में परिवर्तन भी किए गए। पुलिस-आचरण संहिता एवं अपराध दण्ड प्रक्रिया में भी सुधार के कदम उठाये गये। जहां कहीं पुलिस के द्वारा अपराधियों पर शक्ति प्रयोग करने, सतायें जाने व उनके व्यवहार करने पर आचरण-संहिता में बदलाव लाया गया वहीं अपराधों की छानबीन करने में भी कुछ सावधानियां बरतने, अपराध की गंभीरता को दृष्टिगत रखते हुए उनपर मानवीय आधार पर सोचने-विचारने पर भी कानून पारित करने का विचार किया गया।

लेखक अनुसार, यह सब करने का तात्पर्य यही था कि समाज में अपराधों पर रोल लगे और पुलिस प्रशासन चुस्त-दुरूस्त कार्य कर सके व सही अपराधी को कानून के हवाले किया जा सके। किन्तु ऐसा कुछ न होकर अपराध, अपराधी और पुलिस के बीच एक ऐसे नये समीकरण ने जन्म लिया जिसने अपराधों, अपराधियों और पुलिस अन्वेषण की खोजी प्रक्रिया को कानून को गिरफ्त से कोसों दूर फैंक दिया।

लेखक ने ग्रामीण-समाज में व्याप्त असंगतियों, कानून, अपराध व न्याय से संबंधित प्रश्नों एवं इनमें ग्रामीण पृष्णभूमि को मद्देनजर रखते हुए, पुलिस की भूमिका, उनके कर्त्तव्य एवं व्याप्त व्यवस्था पर पैनी नजर डाली है। यह सब निश्चय ही एक जटिल विषय है। इसका राष्ट्रीय-परिदृश्य और मानवीय दृष्टि से विश्लेपण आवश्यक है। सभी जिज्ञासु लोगों के लिए इन प्रश्नों एवं उनके समाधानों को जानकारी व विचार विमर्श आवश्यक है, जिससे सही व उचित रास्तों की तलाश हो सके।

पुस्तक को दस अध्यायों में विभाजित कर लेखक ने प्रशसनीय ढंग से अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। उन्होंने अपराध और अपराध के प्रकार, भारतीय ग्राम एवं ग्रामीण समाज में अपराध, अपराधी दर्द से कराहते गांव, पहचान खोते गांव, गांवों में बढ़ते सफेद पोश अपराधी और पुलिस, ग्रामीण क्षेत्रों में अपराध के तरीके, ग्रामीण अपराधियों का पुलिस से सम्पर्क, अपराध विघटन; कारण और निवारण, ग्रामीण अपराध और पुलिस और पुलिस प्रशासन एवं अपराधी और पुलिस; नया समाजशास्त्रीय त्रिकोण की विवेचना की है एवं इन पर अपनी राय व्यक्त की है।

लेखक ने आशा व्यक्त की है अपराध एवं अन्वेषण शाखा को प्रस्तुत ग्रन्थ के आधार पर अनुसंधान के नए रास्ते मिलेंगे जिससे समाज से अपराधों को समाप्त किया जा सके। लेखक ने पुलिस व राजनीतिज्ञों में व्याप्त भ्रष्टाचार को भी उजागर किया है, जिनकी वजह से ग्रामीण समाज में अपराध घटने के बजाय बढ़ने की ओर ही अग्रसित होते रहते हैं। पुलिस की इस अनदेखी कर देने वाली प्रवृत्ति को भी लेखक ने आड़े हाथों लिया है। पुलिस प्रशासन की आलोचना भी की है। इससे न सिर्फ अपराध बढ़ते हैं, अपराधी बार बार अपराध करते हैं, वरन् आगे चलकर संगीन अपराध किए जाते हैं। इसके लिए कुछ हद तक उन्होंने पुलिस को भी जिम्मेदार ठहराया है तथा उनके मध्यस्थ लोगों को भी जो इस प्रक्रिया में अपराधियों व ग्रामीणों का शोषण करते हैं। यद्यपि लेखक का ध्येग पुलिस की छवि धूमिल करने का नहीं है। वैसे तो अपवाद सभी जगह होते हैं, पर क्या इसके लिए सम्पूर्ण ग्रामीण पुलिस को दोषी ठहराना उचित है? हमें यह भी ध्यान रखना होगा।

लेखक ने ग्रामीण-समाज में व्याप्त असंगतियों, कानून, अपराध व न्याय से संबंधित प्रश्नों एवं इनमें ग्रामीण पृष्ठभूमि को मद्देनजर रखते हुए, पुलिस की भूमिका, उनके कर्त्तव्य एवं व्याप्त व्यवस्था पर पैनी नजर डाली है। यह सब निश्चय ही एक जटिल विषय है। इसका राष्ट्रीय-परिदृश्य और मानवीय दृष्टि से विश्लेपण आवश्यक है। सभी जिज्ञासु लोगों के लिए इन प्रश्नों एवं उनके समाधानों की जानकारी व विचार विमर्श आवश्यक है, जिससे सही व उचित रास्तों की तलाश हो सके।

पुस्तक को दस अध्यायों में विभाजित कर लेखक ने प्रशसनीय ढंग से अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। उन्होंने अपराध और अपराध के प्रकार, भारतीय ग्राम एवं ग्रामीण समाज में अपराध, अपराधी दर्द से कराहते गांव, पहचान खोते गांव, गांवों में बढ़ते सफेद पोश अपराधी और पुलिस, ग्रामीण क्षेत्रों में अपराध के तरीके, ग्रामीण अपराधियों का पुलिस से सम्पर्क, अपराध विघटन; कारण और निवारण, ग्रामीण अपराध और पुलिस प्रशासन एवं अपराधी और पुलिस; नया समाजशास्त्रीय त्रिकोण की विवेचना की है एवं इन पर अपनी राय व्यक्त की है।

लेखक ने आशा व्यक्त की है कि अपराध एवं अन्वेषण शाखा को प्रस्तुत ग्रन्थ के आधार पर अनुसंधान के नए रास्ते मिलेंगे जिससे समाज से अपराधों को समाप्त किया जा सके। लेखक ने पुलिस व राजनीतिज्ञों में व्याप्त भ्रष्टाचार को भी उजागर किया है, जिनकी वजह से ग्रामीण समाज में अपराध घटने के बजाय बढ़ने की ओर ही अग्रसित होते रहते हैं। पुलिस की इस अनदेखी कर देने वाली प्रवृत्ति को भी लेखक ने आड़े हाथों लिया है। पुलिस प्रशासन की आलोचना भी की है। इससे न सिर्फ अपराध बढ़ते हैं, अपराधी बार-बार अपराध करते हैं, वरन् आगे चलकर संगीन अपराध किए जाते हैं। इसके लिए कुछ हद तक उन्होंने पुलिस को भी जिम्मेदार ठहराया है तथा उनके मध्यस्थ लोगों को भी जो इस प्रक्रिया

में अपराधियों व ग्रामीणों का शोषण करते हैं। यद्यपि लेखक का ध्येय पुलिस की छवि धूमिल करने का नहीं है वैसे तो अपवाद सभी जगह होते हैं, पर क्या इसके लिए सम्पूर्ण ग्रामीण पुलिस को दोषी ठहराना उचित है? हमें यह भी ध्यान रखना होगा।

श्री कालभोर का यह मानना है कि एक ऐसा चक्र चलता रहता है जिसमें न्यायालय भी असहय हो जाता है। पुलिस यदि कुछ करना भी चाहे और कठोर अनुशासन, शक्ति और ईमानदारी का परिचय दे तो भी अनेक तरह से उन पर दबाव डलवाये जाते हैं, धमकियां दी जाती हैं, अतः अपनी नौकरी पर किसी प्रकार का कलंक आने से पहले ही पुलिस कर्मी अपने को अपराधियों के अभिकर्त्ता के साथ समन्वित कर काम करने लगते हैं । उक्त सारे प्रकरण में शोषण अपराध में फंसे लोगों का ही होता है।

लेखक ने यह भी राय व्यक्त की है कि यदि अन्वेषण से वाकई कोई काम बेहद रूचि का हो सकता है तो वह कार्य अंगुली छाप तथा अपराध शास्त्र के अध्ययन से बढ़कर इन अभिकर्त्ताओं (एजेंट) के चेहरों से नकाब उतारने का है जो भेड की खाल में शेर की खाल ओढ़े ग्राम के प्रतिष्ठा-पुरूष बने पुलिस अधिकारियों को भ्रष्ट व कलंकित करने बैठे हैं। उनका पर्दाफाश तभी हो सकता है जब ग्रामीण-अपराध एवं अपराधियों के लिए अलग से ही अपराध अनुसंधान ईकाई की शुरूआत हो। पुलिस प्रशासन को भी अपने ऊपर पड़ने वाले छीटों से बचना पड़ेगा।

प्रस्तुत पुस्तक समस्त पुलिस अधिकारियों, कानून एवं न्याय से संबंधित लोगों, पुलिस अनुसंधान व अपराध अन्वेषण शाखाओं, समाज शास्त्र के छात्रों, प्राध्यापकों एवं अनुसंधान के अध्येताओं के लिए उपयोगी सिद्ध होगी। पुस्तक की सज्जा उचित है पर मूल्य कुछ अधिक है।

—माला गुप्ता
डी-1-ए/115, जनकपुरी, नई दिल्ली-58

पुस्तक का नामः भारत में ग्रामीण अपराध और पुलिस की भूमिका। **लेखकः** गोपीनाथ कालभोर, **प्रकाशकः** सरूप एण्ड सन्स, नई दिल्ली, **मूल्यः** 125 रुपए।

''कर्मठ''

''कर्मठ'' उपन्यास श्रीमती बाला शर्मा का एक अनूठा प्रयास है। कथा-वस्तु भारत-पाक विभाजन के पूर्व घटनाओं से प्रारम्भ होकर स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् की परिस्थितियों को समावेशित करती है। बाला शर्मा एक बहुमुखी प्रतिभा की धनी लेखिका हैं। प्राक्कलन में नेहरू जी की अन्तिम यात्रा का संदर्भ सम्भवतः नेहरू जी की कर्मठता को इंगित करती हैं जो उपन्यास का शीर्षक है और प्रभा जो कथानक की नायिका है कर्मठता को पूर्ण रूपेण प्रतिनिधि है। लेखिका की अनुभव परिपवता कथानक को अच्छी तरह से उभारा है यद्यपि वो वहां मौजूद नहीं थीं।

उपन्यास तीन पीढ़ियों के पात्रों को समावेश करके कहीं आत्मकथानक शैली व कहीं विभिन्न पात्रों के संस्मरण शैली विविधता को प्रदर्शित करते हैं। गुलामी से मुक्ति पाने की गतिविधियां, जातपात के जहर राजनीति का दापेंच, और आत्मसंयम के बीच से घटनाओं के बीच प्रभा जी सचमुच एक कर्मठ आदर्श के रूप में विम्बित होती हैं। लेखिका स्वयं कहती है ''प्रभा जी मेरे उपन्यास की नायिका हैं। कहां देखा है उन्हें? हजारों स्थानों पर न जाने कितनी प्रभा इज्जत आबरू सम्भालती बूढ़े रोगी पिता को सहारा दिये दर-दर भटक रही थीं तब मैं आयु उतनी परिपक्व भले न रही होऊं परन्तु मन तो सदा ही आयु से दस बरस आगे रहता आया है।''

भारत विभाजन पूर्व पंजाब में जो अब पाक का अभिन्न अंग है गुलामी के लोहे पाश से मुक्त होने की गतिविधियां गुप-चुप चल रही थीं। कथानक का प्रारम्भ वहीं से होता है। उषा और प्रभा श्रीधर जी की दो संतान हैं। जो निरंतर सहयोगी परन्तु भिन्न विचारों की। उषा पढ़ने लिखने व गृह कार्य में सदा प्रथम पर प्रभा तो सर्वप्रथम रहती। श्रीधर जी स्वार्थरहित देशसेवा व सामाजिक कार्य में निरत घर से अनजान पर निर्भिक निडर व स्पष्टवादी। प्रभा भी उसी संस्कृति पिता की सन्तान, पर उग्र और आफत सी, कुछ नास्तिक सी। लेखिका के विचार में ''जिसकी जन्मकुंडली उसके जन्म से दो घड़ी बीतते स्वयं ही बनाई थी (पिता ने) और राशि अध्ययन करने पर चिन्ता की लकीरें उनके मस्तक पर प्रबल हो उठी थीं कि अत्यन्त दृढ़ स्वभाव, साहसी, कर्मठ तथा विदुषी होगी परन्तु अत्यन्त उग्र स्वभाव की रहेगी'' ये उद्धरण अक्षरक्षः सत्य है प्रभा की जिन्दगी में।

उषा का गोरा चेहरा, चमचे की कमी जैसी कोमल उंगलियों और कजरारी आंखे किसी को सम्मोहित करती। इसलिये माँ राजरानी को उषा के ऊपर निगरानी रखनी होती थी पर प्रभा की ओर से बेडर थी क्योंकि वाचाल की और उतना रूप भी तो नहीं था। आर्य समाज के प्रभाव से लाला अमरनाथ जी स्त्री शिक्षा, दहेज विरोध आदि पर भाषण देते थे। इसी कारण उन्होंने अपने लड़के की शादी ब्राहमण परिवार की उषा से करने में देर नहीं की। दोनों परिवार प्रसन्न थे। लड़की समृद्ध घर में गई और लाला को रूपवती व गुणवती कन्या मिल गई।

पर प्रभा अकेली रह गई। मां की अनुमति के बिना कालेज में प्रवेश लेकर पढ़ाई जारी रखी यद्यपि स्त्री शिक्षा वर्जित थी। गांधी जी को आह्वान देश जागरण में प्रभावशील था। अंग्रेज के काले कारनामों से ज़नता अत्यन्त दुःखी थी। शिवराज एक युवक जो प्रभा से प्रभावित और प्रभा की रूग्ण मां की सेवा में तत्पर प्रभा भी आकर्षित हुई। पर समय ने करवट बदला। राजरानी ने दम तोड़ दिया। विभाजन हुआ। उषा अलग भारत आ गई । श्रीधर व प्रभा भी। पर घटना चक्र ने शिवराज को एक समाजसेवी के रूप में दुबारा मिला दिया और पहले का मिलन परिणय में बदल गया और प्रभा तथा शिवराज पत्नी-पति हो गये। दोनों को संघर्ष साथ करना पड़ा और आजादी का परिणाम हुआ कि शिवराज को मंत्री पद मिल गया। प्रभा की निर्धनता दूर हो गई पर सास-ससुर की दुत्कार भी नहीं भूली। और अब शुरू होती है प्रभा की जीवन तपस्या। उसकी स्पष्टता, निर्भिकता और साहस की परीक्षा। किसी का आभार लेना नहीं जानती। अपनी दीदी व जीजा की मदद को दुत्कार दिया उसने। अपनी मेहनत से पढ़ाई की, घर संभाल और जब समय आया पति के एश्वर्य व समृद्धि में सहज व सुखमय जीवन-यापन का तो श्यामली उनके मार्ग में शनि सी प्रकट हो गई और सरल व समाजसेवी शिवराज को ग्रसित कर लिया।

परन्तु यहां वो इस स्थिति से लड़ने की जगह अपने सिद्धान्त पर चलकर अलग जीवन व्यतीत करने दो बच्चियों व एक पुत्र के साथ कर्म-पथ पर चल पड़ती है और जीवन की कर्मठता के कठिन राह पर संघर्षशील रहती है। नरेन जैसे सहयोगी की सहायता न चाहते हुये भी

स्वीकार करती है पर अपने पति के पास जाने को तत्पर नहीं। शिवराज को श्यामली छोड़ कर चली जाती है जब मंत्री पद छूट जाता है। प्रभा को अपनी बेटियों सरला व तरला को गुरूकुल भेजना पड़ा। "कर्म ही जीवन है, कर्म ही गति है" पिता की ढाढसमयी उक्ति पर चलती गई। पति से तालाक तक हो गया। सरला का विवाह सरन से जिसने पहले ही एक पत्नी रखा है, कर देती है। पति की मदद भी उनके राजनीतिक जीवन सुधारने के लिये करती है पर गृहस्थ जीवन छोड़ चुकी हैं। समस्त लिप्सा व वासना का त्याग करके पति को खोया सम्मान व सरला का घर वापस दिलाती हैं प्रभा। कितना अदम्य साहस, जूझने का, संघर्ष का, त्याग का और सबसे बढ़कर कर्मठता का, सबका समावेश प्रभा में।

उपन्यास रोचक व उत्सुकता बनाये रखने में सफल है। श्रीमती बाला शर्मा से ऐसी ही अधिक रचनाओं की अपेक्षा है।

—शिप्रा तिवारी, 663 सै 28 , नोएडा-201301

पुस्तकः कर्मठ, उपन्यासकारः श्रीमती बाला शर्मा, प्रकाशकः वातायन प्रकाशन, 73 बनारी दास एस्टेट, दिल्ली-110007। मूल्यः 38 रुपए, पृ॰ संख्याः 156.

परम्परा को प्रासंगिक बनाने का प्रयासः जीवशतक

ब्रजभाषा किसी समय पूरे देश की साहित्यिक भाषा थी। लेकिन आज ब्रजभाषा में काव्यरचना करने वाले विरल हैं। बिना ब्रजभाषा-काव्य परम्परा को बूझे हुए और शास्त्र-विशेषतः छन्दशास्त्र से प्रगाढ़ परिचय के अभाव में स्तरीय ब्रजभाषा-काव्य का प्रणयन संभव नहीं है। अतः ब्रजभाषा में लिखने वालों का अभाव अस्वाभाविक और आकस्मिक नहीं है। ऐसी स्थिति में "जगन्नाथ प्रसाद मिश्र" का "जीवशतक" सुखद आश्वस्ति से भर जाता है। इसमें संग्रहीत 114 सवैयों, कवित्रों और कुंडलियों में जहां वर्णमैत्री, पदलालित्य और नाद सौन्दर्य का वैभव है, वहीं वर्तमान जीवन के प्रश्नों को काव्य विषय बना कर ब्रजभाषा में अभिव्यक्ति की प्रासंगिकता पुष्ट हुई है। डा॰ जयन्ती प्रसाद मिश्र ने अपने पिताश्री की इस रचना को सम्पादित और प्रकाशित कर सार्थक श्रद्धांजलि अर्पित की है।

यह गौरतलब है कि "जीवशतक" किसी मंचीय कवि या प्राध्यापक की रचना न होकर किसान-कवि का सृजन है। 'विनम्र निवेदन' शीर्षक भूमिका में सम्पादक ने उनकी एक पंक्ति उद्धृत की है—"कृषि कर्म से बढ़कर न कोई अन्यधन्य सुकर्म है"। यही कारण है कि छंदों में सतत् कर्मशीलता और कर्मठता के लिए प्रेरणा जहां-तहां विद्यमान है। कृषिकर्म को सुकर्म मानने वाले के लिए परजीविता, आलस्य, प्रसाद आदि कभी श्लाध्य नहीं हो सकते। अतः श्रीजीव ने लिखा है—

श्रम ही सों अन्न-आदि भोजन को योजन है
श्रम ही सो प्रति पेयपान और-और हैं।

अन्यत्र भी "सुख के समान श्रम सुख हूं अकथ है", "योग हू ते सुखद सजीव श्रम-योग है" आदि उक्तियां द्रसृव्य हैं। इस तरह के अवतरण राधा कन्हाई की सुमिरन के बहाने कामकुंठाओं की अभिव्यक्ति करने वाले रीतिवादी संस्कारों के काव्य से तो अलग है ही, आधुनिक जीवन की सच्चाईयों से जुड़ने की गवाही भी ये देते हैं। "जीव-शतक" में जीवन की श्रणभंगुरता और संसार की असारता का बयान करने वाले कई छंद हैं। लेकिन ये छंद जीवन से वैराज्य या पलायन का पाठ नहीं पढ़ाते हैं। कवि ने मृत्यु को दुर्निवार सत्य के रूप में स्थापित किया है। "मीरिबों न आवै तो औरन ते सीखि" कहते हुए उन्होंने मृत्यु से भयभीतन होने की बात कहीं हैं। अन्योक्तियों में कबि का लोकमंगलकारी सोच विशेष मुखर है। "सहजन" के ब्याज से यदि स्वच्छंदता पर टिप्पणी की गयी है तो "ईख" से "परहित" साधने की सांख लेने का आग्रह व्यक्ति हुआ है। कुछ छंदों में वर्ग-विषमता पर सीधा प्रहार हुआ है। इनसे स्पष्ट होता है कि ज्वलंत प्रश्नों को कबि ने अनदेखा नहीं किया है—

कोई भरे वैभव विलास के हुलासन में
सुरत सुवास, सुख भोगन में मोई रहे।
कोई दुःख-द्वंदन के फंद फंसे
भूखे, सूखे, नंगे, धंगे, रात दिन रोइ रहे।

चाहे अंग्रेजी कुशासन का संदर्भ हो, या "कृषक दुर्दशा" या "कुर्दीमोह" की विडंबना सर्वत्र कवि सजग और सचेत दिखायी देता है। विसंगतियों के प्रति उसकी जागरूकता और यथार्थ से सीधा साक्षात् करने की प्रवृत्ति ने इन छंदों को वैचारिक दीप्ति से भर दिया है। "26 जनवरी" से संबंधित छंद में 'आजादी' को लेकर कवि ने जो विचार व्यक्त किए हैं, उससे उसके मन में त्याग-बलिदान के सम्मान का भाव प्रभावपूर्ण ढंग से उभरा है—

गांधी की बांधी मरजाद बरबाद करिकैं
गोली सों तोली हृदय की हरवरी है।
लाखों जनवरी भये जीवन तें "जीव" तब,

मरि-मरि कें निभी छब्बीस जनवरी है।

इस कृति में कई छंद "ईश्वर भक्ति" पर आधारित हैं और उपालंभ-काव्य के अन्तर्गत भी कृष्ण, राम, वामन, लक्ष्मी-विष्णु आदि का स्मरण हुआ है। इन छंदों का वैशिष्ट्य यह है कि जहां एक और निर्मल आस्तिकता झांकती है, वहीं दूसरी और तर्कशीलता की उपस्थिति आश्वस्त करती है। ईश्वर की गति को "पारवार हूं ते वार, पार है अपार फैली" कहा गया है। अन्यत्र वामन द्वारा बलि को छलने, राम द्वारा शूर्पणखा की नाक काटने, शंकर के पिषपान आदि प्रसंगों पर मीठी चुटकी ली गयी है। इस स्थलों पर पुराख्यानों-मिथकों की खिल्ली उड़ाने का भाव प्रमुख न होकर दूर की कोड़ी जाने की विनोदी वृति ही प्रधान है।

जीवशतक के रचयिता का भाषा पर पूरा अधिकार है। छंद और भाव के अनुरूप शब्दों को तोड़ने-मरोड़ने से उसने परहेज नहीं किया है, बोध के स्तर पर इन छंदों में रीतिकालीन बोध का तिरस्कार है, लेकिन कला के स्तर पर रीतिकालीन प्रभाव दवा-ढंका नहीं रह पाता। गागर में सागर भरने की कोशिश प्रायः हर छंद में है। यह अच्छा है कि संपादक ने शब्दों के अर्थ-संकेत नीचे दे दिए हैं अन्यथा सामान्य पाठक के लिए इनके मर्म तक पहुंचना और पूरी तरह आस्वादन करना संभव नहीं है। "खोखला, खुलासा, खासा, खाख को खिलौना है" तथा "पूरौ तैके पट्टा मोहि छोड़ि के रपट्टा ही में, तानि के दुपट्टा जानें पट्ठा कहां खैं गयो" आदि पंक्तियों में अच्छी शब्दक्रीड़ा के दर्शन होते हैं। इसी तरह निम्नलिखित पंक्तियों में मुहावरों की लड़ी रलाकर के काव्य-कौशल की याद दिलाती है—

नाचि नकमानी भयौ नाक-दम आयौ अब,
नाक में नकेल डारि यों नाकचनाओं, ना।

लेकिन केवल शब्कौतुक या अलंकार चमत्कार कवि का अभीष्ट नहीं है। इन छंदों में वस्तु पक्ष ही प्रधान है। सीता-परित्याग से संबंधित एक छंद में भावगत मार्मिकता केन्द्र में है, यह बात और है कि अभिव्यंजना पक्ष भी असरदार है—

सीता सो सगभर्मासंदर्भा, प्राणवल्लभा हूं,
त्यागी दई-दई हाय, धिक्-धिक् निरदई।

समग्रतः जीवशतक एक प्रभावपूर्ण काव्यकृति है। इसमें भाव, विचार और अभिव्यंजना का सम्यक् सहयोग और साहचर्य दिखायी देता है। इस तरह की रचनाएं संकेत देती हैं कि ब्रजभाषा अभी अप्रासांगिक नहीं हुई है।

डा० वेद प्रकाश अमिताभ
14/5, द्वारकापुरी, अलीगढ़

जीवशतक, ले० जगन्नाथ प्रसाद मिश्र, "जीव", प्र० साहित्यायन, 220/1 पाकेट डी०-6, सैक्टर-6, रोहिणी, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1993, सजिल्द, मूल्य-30/- रुपये।

अनुवाद का भाषा वैज्ञानिक पक्ष

फ्रांस में अन्य क्रान्तियों के साथ भाषा विज्ञान के क्षेत्र में भी एक क्रान्ति हुई कि भाव और भाषा की पृथक-पृथक सत्ता है। शताब्दियों पहले भारत में बौद्ध दर्शन के उदय काल में धर्मकीर्ति ने कहा था, "ननु नार्थ शब्दाः स्पृश्यन्ति" अर्थात् शब्द अर्थ का स्पर्श तक नहीं करते। किसी शब्द से वास्तविक पदार्थ की नहीं, अपितु उस पदार्थ के भाव का बोधं होता है। इससे पहले शब्द को ब्रह्मा की संज्ञा देने वाले आचार्य भर्तृहरि ने शब्द और अर्थ को नित्य एवं सनातन माना था।

सदियों से विश्व की विभिन्न भाषाओं में परस्पर अनुवाद इस बात का प्रमाण हैं कि "महाभारत के कर्ण को जन्म से ही मिले कवच कुंडलों की भांति भाव और भाषा का साथ-साथ जन्म होता है।" भाव और भाषा के संबंध में मत वेमिन्य होने पर भी अनुवाद की प्रक्रिया में भाव या पाठ के अन्तरण के लिए भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन के महत्व को नकारा नहीं जा सकता अपितु वर्तमान युग में अनुवाद की अनवार्यता के संदर्भ में उसका महत्व और बढ़ गया है। उसी महत्व ध्यान में रखते हुए भारतीय अुनवाद परिषद् ने "अनुवाद का व्याकरण" नाम से समीक्ष्य पुस्तक को संशोधित एवं परिवर्धित रूप में पुनः प्रकाशित किया है।

आठवें दशक के प्रारम्भ में दिल्ली विश्व-विद्यालय में अनुवाद पाठ्यक्रम की अध्यापिका एवं भारतीय अनुवाद परिषद् की संस्थापिता डा० गार्गी गुप्त को जब रोम जाना पड़ा तो परिषद् की त्रैमासिक पत्रिका "अनुवाद" का सम्पादन-भार प्रसिद्ध भाषा-विज्ञानी डा० भोलानाथ तिवारी को सौंपा गया था। उनके सम्पादन काल में उन्होंने "अनुवाद" का एक सिद्धान्त विशेषांक (अंक 32-33) प्रकाशित किया था। इस अंक के बारे में एक उल्लेखनीय बात यह भी थी कि इस अंक के सभी लेख डा० भोलानाथ तिवारी ने स्वयं ही लिख डाले थे। यह अंक काफी लोकप्रिय हुआ और उसकी सभी प्रतियां बिक गई थी और उसकी मांग अब भी बराबर बनी हुई है। एक ही विद्वान द्वारा लिखे जाने के कारण उस अंक का स्वरूप एक पुस्तक का हो गया था जिसमें अनुवाद शब्द, व्युत्पत्ति, अर्थ और इतिहास, अनुवाद क्या है? शिल्प, कला या विज्ञान, अनुवाद के प्रकार एवं शैलियों के साथ-साथ अनुवाद के सिद्धांत को भाषा वैज्ञानिक संदर्भ में समझाया गया है इसलिये उसमें अनुवाद की समस्याओं का वाक्य विज्ञान, ध्वनि विज्ञान, अर्थ विज्ञान, रूप विज्ञान, शब्द विज्ञान, अनुवाद और भाषा की सूचना शक्ति आदि के संदर्भ में अनुसंधान और समाधान किया गया है। इसके अतिरिक्त पुस्तक के इस नये संस्करण में दो लेख और सम्मिलित किए गए हैं।

इनमें से एक लेख डा० गार्गी गुप्त का "यंत्र विश्वम् भवती एक नीड्म" में प्राचीन भारतीय संस्कृति आचार्यों द्वारा अनुवाद की गई परिभाषा का विश्लेषण करते हुए भारत, चीन और अरब में अुनवाद कार्य की परम्परा पर प्रकाश डालते हुए अनुवाद की अंतरंग समस्याओं पर अंतरंगता से विचार किया गया है। दूसरा आलेख इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय में रीडर डा० मंजू गुप्ता (जिनका हाल में असमयिक निधन हो गया) का "अनुवाद प्रक्रिया के विविध सोपान" हैं जिसमें अनुवाद प्रक्रिया को भारतीय एवं पाश्चात्य भाषा वैज्ञानिकों के संदर्भ में आरेखों द्वारा स्पष्ट रूप से समझाने का प्रयास किया गया है। इन दो लेखों के पुस्तक में जुड़ जाने से अनुवाद पर विविध आयामों से विचार विश्लेषण से यह कृति इस विषय पर सम्पूर्ण सारगर्भित और अधिक लाभप्रद हो गई है। जो अनुवाद-जिज्ञासुओं, अनुवाद अध्येताओं और अनुवादक-वर्ग के लिये विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध होगी।

संतोष खन्ना 280, लक्ष्मीबाई नगर, नई दिल्ली-110023

पुस्तकः अनुवाद का व्याकरण, संपादनः भोलानाथ तिवारी एवं गार्गी गुप्ता। प्रकाशकः: भारतीय अनुवाद परिषद्, नई दिल्ली-110001 मूल्यः चालीस रुपये पृ० सं० 136

स्वातंत्र्योत्तर भारत में जनता का उत्तरदायित्व तथा पुलिस की भूमिका

राष्ट्रीय पुलिस आयोग द्वारा दिए गए सुझाव पुलिस के संबंध में अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते हैं। राष्ट्रीय पुलिस आयोग ने अन्य बातों के अतिरिक्त पुलिस-जनता संबंध के विषय में भी कई महत्वपूर्ण सुझाव पेश किये। यह गौर तलब है कि पुलिस की प्रतिदिन की कार्य प्रणाली में एक स्वस्थ पुलिस जनता संबंध होना परमावश्यक है। बिना जन सहयोग तथा जनता की सहायता के, पुलिस का कार्य अर्थहीन एवं समाज में अस्वीकृत बनकर रह जाता है।

अभी कुछ समय पूर्व ही कलकत्ता में 5वीं अखिल भारतीय पुलिस जनता संबंध कांफ्रैंस का आयोजन हुआ था जिसमें भी विशिष्ट एवं विद्वान वक्ताओं ने यह विचार व्यक्त किये थे कि सभी रैंक के पुलिस अधिकारियों को अपने कार्य सम्पादित करते समय यह हमेशा याद रखना चाहिए कि जनता की आकांक्षायें क्या है? समाज के विभिन्न भागों के लोगों के साथ पुलिस का सम्पर्क एवं सहयोग बना रहना आवश्यक है, तथा यह आज की विषम एवं गूढ़ परिस्थितियों में और भी आवश्यक हो गया है।

इस दिशा में पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली के प्रयास भी सराहनीय हैं जिन्होंने पंडित गोविन्द बल्लभ पंत पुरस्कार योजना के अंतर्गत, भारत के कई पुलिस अधिकारियों एवं विद्वानों को इस और प्रेरित किया है कि पुलिस से संबंधित विभिन्न विषयों पर हिन्दी में अच्छी से अच्छी पुस्तक लिखवाई जायें एवं प्रकाशित कराई जायें। डा० कृष्ण मोहन माथुर द्वारा लिखित प्रस्तुत पुस्तक इस प्रयास की एक परिणति है।

लेखक का यह विचार भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि भारत में स्वतंत्रयोत्तर काल में जो आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक प्रयास निरंतर हो रहे हैं, मैं जनता का दायित्व महत्वपूर्ण हो गया है। जनता की सक्रिय सहभागिता के बिना प्रजातंत्र सफल नहीं हो सकता तथा इस कारण जनता में राजनीतिक जागरूकता तथा राजनीतिक कार्यकलापों में जनता की सक्रिय भागीदारी आवश्यक है। विकासशील समाज में विकास प्रशासन में भी जनता का सहयोग बहुत आवश्यक है। भारतीय समाज में नागरिकों के मौलिक कर्त्तव्यों को तो उल्लेखित किया गया है, भले ही उन्हें लागू करवाने के लिए कोई प्रावधान न किए हों। वर्तमान परिस्थितियों में जनता के अनेक क्षेत्रों के दायित्व हैं जिन्हें पूरा करने से ही राष्ट्र का पुनर्निर्माण हो सकता है। प्रस्तुत पुस्तक का विषय वस्तु भी ऐसे ही महत्वपूर्ण एवं विवादास्पद विषय पर आधारित है। प्रस्तुत पुस्तक का उद्देश्य एक ऐसी वैचारिक प्रक्रिया का संवर्धन करना है जिसमें स्वातंत्रयोत्तर भारत में जनता के दायित्वों का गंभीर चिंतन हो सके।

इस पुस्तक को कुल सात अध्यायों में विभाजित करके विद्वान लेखक ने अपने महत्वपूर्ण विचारों एवं अनुभवों को प्रशंसनीय रूप में प्रेषित किया है। इनमें जिनका विषयों का समावेश किया गया है वे हैं:—स्वतंत्रयोत्तर भारत में समस्यायें एवं अपराध, भारत के संविधान में मौलिक कर्तव्य, वर्तमान परिवेश में जनता का दायित्व, विकास प्रशासन व समाज क्षेत्र में जनता का दायित्व, स्वतंत्रयोत्तर भारत में पुलिस की भूमिका एवं अंत में निष्कर्ष व सुझावों का भी समावेश किया गया है। पुस्तक लिखने से पूर्व लेखक ने संबंधित विषयों पर एक सर्वेक्षण कार्य भी संपादित कराया एवं अंत में सर्वेक्षण प्रपत्र, संदर्भ ग्रंथ (हिन्दी) और संदर्भ ग्रंथ (अंग्रेजी) को भी सम्मिलित किया है।

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो के अनुसार लेखक ने इस पुस्तक में वर्तमान परिवेष में जनता के दायित्वों तथा पुलिस की भूमिका का एक वैज्ञानिक विश्लेषण किया है। सामाजिक अनुसंधान की पद्धतियों को अपनाते हुए लेखक ने स्वतंत्रयोत्तर भारत की आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक परिस्थितियों का समग्रात्मक दृष्टि से अध्ययन करते हुए वर्तमान परिवेश में जनता के दायित्वों की सुन्दर विवेचना, भारत पुर्ननिर्माण, विकास, प्रशासन एवं समाज सेवा, के क्षेत्रों में जनता की क्या भूमिका हो सकती है, इस विषय पर विश्लेषणात्मक तथा विकासोन्मुख दृष्टिकोण से विचारों को प्रस्तुत करने का भी प्रयास किया है। स्वतंत्रयोत्तर भारत की विभिन्न समस्याओं तथा अपराधी के नये आयामी का भी सिंहावलोकन लेखक द्वारा किया गया है। पुलिस को सरकार की कार्यकारी भुजा नहीं वरन् देश के बहुमुखी विकास में सहायक मानवीय संस्थागत उपकरण के रूप में प्रस्तुत किया है। प्रजातांत्रिक व्यवस्था में पुलिस को जनता की मित्र, पथ-दर्शक तथा दार्शनिक के रूप में अपनी सही भूमिका निभानी चाहिए। लेखक ने पुलिस की भूमिका को एक रचनात्मक एवं व्यवहारिक स्वरूप देने के लिए कुछ सुझाव प्रस्तुत किये हैं। जनता तथा पुलिस के सहयोग से ही भारत की विभिन्न समस्याओं को सुलझाया जा सकता है।

यह पुस्तक निःसंदेह रूप से न केवल पुलिस जनो एवं प्रशासकों के लिए उत्तम है, वरन् प्रत्येक भारतीय नागरिक तथा विशेषकर प्रत्येक भारतीय वयस्क के लिए नितांत आवश्यक है। पुलिस, प्रशासन एवं समाज में सभी के लिए यह एक मूल्यवान धरोहर है।

— माला गुप्ता
डी-1 ए/115, जनकपुरी, नई दिल्ली-58

पुस्तक का नाम: स्वातंत्रयोत्तर भारत में जनता का उत्तरदायित्व तथा पुलिस की भूमिका, लेखक: डा० कृष्ण मोहन माथुर, पृष्ठ: 350, प्रकाशक: पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

भारतीय पर्यावरण परंपरा

यो देवों अग्नौ यो अप्सु यो विश्व भुवन माविवेश।
अओषधीषु यो वनस्पतिषु तस्मै देवाय नमो नमः।।

अर्थात जो परमात्मा अग्नि में है, जो जल में है, जो समस्त लोगों में अंतर्यामी रूप में प्रविष्ट हो रहे हैं, जो औषधियों में है, जो वनस्पतियों में है, उनको मैं नमस्कार करता हूं।

दैनिक 'जनसत्ता' के स्थानीय संपादक श्री बनवारी द्वारा प्रस्तुत पुस्तक 'पंचवटी' में मानव को प्रकृति द्वारा प्रदत्त प्रत्येक उपहार का क्रमवार विस्तृत वर्णन किया गया है।

यह प्रकृति परमात्मा की ही दिव्य और भौतिक अभिव्यक्ति है। उसकी अभिव्यक्ति के रूप में यह प्रकृति हमारे लिए पवित्र और संरक्षणीय है तथा हमारा पालन-पोषण कर रही है। सृष्टि की सभी वस्तुएं आपस में एक अनिवार्य संबंध सूत्र से बंधी हुई हैं। एक ही सत्ता इस पूरे जगत में व्याप्त है तथा मनुष्य और प्रकृति सभी उसी से संचालित होते हैं।

भारत में पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त रखने के लिए यज्ञ, धार्मिक, अनुष्ठान, नदियों, वनों, वृक्षों, जीव-सृष्टि की पूजा की जाती रही है। इस कार्य के अनुपालन हेतु हमारे ऋषि-मुनियों ने उक्त नियमों को धर्म से जोड़ दिया है। यदि प्रकृति को किसी प्रकार की क्षति पहुंच रही है तो यह अधार्मिक कार्य मान लिया जाता था और उसके दुष्परिणाम भुगतने पड़ते हैं। यहां ऐसे भी दौर आए हैं जब सभ्यता ने प्राकृतिक ढांचे की मर्यादाओं को लांघने का प्रयास किया गया है तब हमें प्राकृतिक आपदाओं का सामना करना पड़ा तथा काल के उतार-चढ़ाव के चक्र को झेलना पड़ा है। यह प्रकृति का नियम है।

मनुष्य की सभी जरूरतों के लिए प्रकृति ने उचित व्यवस्था की है। हमारे भौतिक संसार को समृद्ध बनाने में सभी का योगदान देखा जाता है। जैसे सोम की स्तुति करने वाले वेद-मंत्रों में लगातार कहा गया है कि सोम देवता! वनस्पतियों का पोषण करो ताकि वन, समृद्धि और शान्ति मिल सके। वृक्षों में देवताओं का निवास बताया गया है तथा वृक्षों के प्रति पूजा-भाव को सहज रूप से ग्रहण कर लिया है। समाज की संपन्नता

श्रीवन पर निर्भर है। इससे हमारी भौतिक समृद्धि बढ़ती है। तुलसी का पौधा वातावरण को शुद्ध तथा शारीरिक आरोग्य प्रदान करता है। इसलिए इसकी नित्य पूजा का विधान किया गया है। बड़ वृक्ष का दूध बड़ा ताकतवर माना जाता है और कायाकल्प में भी उसका इस्तेमाल बताया गया है। बरगद शीतल माना जाता है। वह वर्ण को उत्तम करने वाला, कसैला और कफ व पित्त में व्रण और विसर्प तथा दाह और योनि दोष में बहुत लाभकारी होता है। दांत के दर्द में तो यह महा औषधि माना गया है। अशोक का पेड़ महिलाओं के रोगों के लिए अचूक औषधि माना जाता है।

वैदिक वाङमय में कहा गया है कि पीपल का हर अंग उपयोगी होता है। इसके पत्ते, फल और छाल सभी रोगनाशक माने गए हैं। इसका दूध बहुत की शीघ्र रक्त शोधक और वेदना शामक माना गया है। बेल को त्रिदोष नाशक, बल वर्द्धक तथा पेट की सभी तरह की बीमारियों में विधि-भेद से उसका प्रयोग किया जाता है। हरड़ त्रिदोष नाशक है। आम बल वर्द्धक, जामुन पाचक और रक्त शोधक है। नीम संक्रामक रोगों तथा वातावरण का शुद्धिकरण करता है।

मनुस्मृति में औषधि की जो व्याख्या की गई है वह सीमित ही है। वैधक ग्रंथों में तो यह माना जाता है कि ऐसा कोई पेड़ या वनस्पति नहीं है जिसमें औषधि के गुण न हों। हमारे यहां एक यह मान्यता भी रही है कि हर रोग का उपचार रोगग्रस्त क्षेत्र के आस-पास की वनस्पति में ही होता है। जब रोग है तो प्रकृति ने उसे ठीक करने के लिए कोई उपाय भी किया होगा। अच्छे वैध का काम ऐसे जड़मूल, पेड़-पौधों या वनस्पति का पता लगाना होता है। सिर्फ दिव्य औषधियां ही हिमालय जैसे सुदूर पवित्र स्थानों पर मिलती है। बाकि सभी आवश्यक औषधियां अपने आस-पास के क्षेत्र में ही पाई जा सकती हैं।

आज दुनियां भर में पर्यावरण की जो चेतना फैलाई जा रही है उसमें वनों की अपरिहार्यता तो बताई जाती है मगर उसका कारण यह गिनाया जाता है कि पेड़ व्यक्ति के भौतिक सुख के लिए उपयोगी हैं। वे हमें सुंदर और कीमती लकड़ी या फल और औषधि ही नहीं देते बल्कि हमारे वातावरण को शुद्ध करते रहते हैं।

इसके बाद लेखक ने ब्रह्मचार्य, ग्रहस्थ, वान-प्रस्थ तथा सन्यास आश्रम की चर्चा विस्तार से की है।

तरू महिमा के एक अन्य श्लोक में अपने घर में पेड़ पौधे लगाने का महत्व समझाया है। इसके अनुसार जिस व्यक्ति के घर में उसके द्वारा स्वयं लगाई हुई तुलसी जितने दिनों तक रहती है उतने हजार वर्ष तक वह बैकुण्ठ में निवास करता है। जो लोग बेल का पेड़ अपने घर में लगाते हैं उसके वंश में पुत्र-पोत्र के जीवन-काल तक लक्ष्मी निवास करती है। पीपल का पेड़ लगाने से देव लोक प्राप्त होता है। इसी तरह हर पेड़ को लगाने से जो फल प्राप्त है उसका वर्णन विस्तार से किया गया है। पेड़ों को कहां लगाना शुभ है और कहां अशुभ तथा कौन सी जगह कौन सी मिट्टी उपयोगी है, लगाने की विधि को बताया गया है।

आज प्राकृतिक संतुलन नष्ट करने पर काफी चिंता व्यक्त की जा रही है। पर्यावरण दूषित होने से लोगों के सामान्य स्वास्थ्य पर संकट आ जाएगा। तरह-तरह की बीमारियां बढ़ रही हैं, विषैले जीवाणु फैल रहे हैं और लोगों की रोग प्रतिरोधक क्षमता खत्म होती चली जा रही है। रसायनों ने मिट्टी की उत्पादकता को नष्ट कर दिया है। वनों के कटने से पानी का अकाल पैदा हो गया है। वातावरण में ताप बढ़ता जा रहा है। बढ़ते प्रदूषण ने ओजोन के सामने संकट पैदा कर दिया है।

इस पुस्तक में प्रकृति को समझने उसी के नियमों के अनुरूप अपना भौतिक ताना-बाना खड़ा करने और उसके साथ समंजस्य में ही सभ्यता का उत्कर्ष देखने का प्रयत्न किया गया है। इसलिए भारत ने पर्यावरण के लिहाज से विश्व की सबसे उन्नत सभ्यता विकसित की। आज अपने इसी वैभव को हमने खो दिया है। हम जो नई सभ्यता बना रहे हैं उसका प्रकृति से संबंध टूट गया है। क्या इस संबंध को हम फिर से जोड़ सकते हैं। फिर से भारतीय जीवन की दिव्यता और पवित्रता लौटा सकते हैं।

यह पुस्तक 'पंचवटी' सृष्टि की हमारी इसी समझ को पूरी गहराई और बारीकी से सामने लाती है। हमारी यह समझ सनातन धर्म के ज्ञान से बनी है और इसी ज्ञान पर भारतीय सभ्यता आधारित रही है। यह पुस्तक भारतीय सभ्यता के वैचारिक और भौतिक ताने-बाने को स्पष्ट करते हुए बताती है कि हमारी सभ्यता में प्रकृति की कितनी गहरी समझ रही है वैदिक काल से आज तक हम अपने जीवन का प्रकृति के साथ सामंजस्य बैठाने के लिए किस तरह के उपाय करते रहे हैं।

—शान्ति कुमार स्याल

कृतिः पंचवटी (भारतीय पर्यावरण परंपरा) लेखकः बनवारी, प्रकाशकः श्री विनायक प्रकाशन, बी-17 प्रशान्त विहार, दिल्ली-110008, मूल्य : 200/-

व्यावसायिक सम्प्रेषण

"संप्रेषण" (कम्यूनीकेशन) का किसी भी राष्ट्र, संस्थान एवं व्यवसाय में महत्वपूर्ण स्थान है। जो लोग इन क्षेत्रों में अपनी बात सही प्रकार से, सही समय पर और स्पष्ट शब्दों में कहना जानते हैं, वे ही सफल हो पाते हैं। "व्यावसायिक संप्रेषण" में कार्य-व्यवहार में, बैंकिंग तथा अन्य सरकारी, गैर-सरकारी कार्यालयों में अपनी बात कहने और दूसरों तक पहुंचाने के सही रूपों का उल्लेख है। इसमें कार्यालयों में प्रचलित पत्र, ज्ञापन, परिपत्र, सूचना-पत्र, कारण बताओं नोटिस, रिपोर्ट, कार्यवृत्त, तार, फैक्स आदि की सैद्धान्तिक व्याख्याओं के साथ उनके व्यावहारिक उदाहरण भी दिए गए हैं। इनसे कार्यालयों में काम करने वाले, हिन्दी शिक्षक, प्रशासक, अधिकारी, आदि सभी लाभान्वित होंगे। इससे कार्यालयों में हिन्दी के उपयोग को सार्थक बढ़ावा मिलेगा। संघ की राजभाषा हिंदी है और हिंदी का प्रगामी प्रयोग परेरणा प्रोत्साहन और सद्भावना से बढ़ाया जाना है। यद्यपि प्रस्तुत पुस्तक पाठ्यक्रम विशेष के लिए लिखी गई है तथापि हिंदी में काम करने वाले अधिकारी/कर्मचारी भी इससे परिमाण व गुण दोनों में लाभान्वित होंगे।

लगभग 236 पृष्ठों में छपी यह पुस्तक अपनी साज-सज्जा और मुद्रण में अनूठी है। अनुक्रमणिका इस प्रकार रखी गई है कि कोई भी वांछित संप्रेषण के रूप को उससे चुनकर पुस्तक में ढूंढ सकता है। इसे जानबूझकर द्विभाषी रूप में इसलिए रखा गया है ताकि अंग्रेजी के अभ्यस्त लोगों को सुगमता हो।

—नेत्रसिंह रावत,

लेखक—अनुपचन्द्र पु० भायाणी, प्रकाशक— राजपाल एण्ड सन्ज कश्मीरी गेट, दिल्ली-6 मूल्य—100 रूपए

बयालीस बाल कथाएं

शमशेर अहमद खान द्वारा संपादित "बयालीस बाल कथाएं" एक ऐसे गुलदस्ते के समान है जिस में बयालीस बाल-वाटिकाओं से भिन्न-भिन्न रंग की बयालीस कलियां एक-सूत्र में बांध दी गई हैं। चुनिंदे कहानीकारों को एक पुस्तक रूपी मंच पर पाठकों के लिए प्रस्तुत करना शमशेर अ० खान जी का एक सराहनीय प्रयास है। भिन्न-भिन्न विषयों बाल-मनोविज्ञान, बाल-रुचि, बाल-स्वभाव, बाल-भावना, बाल-विद्रोह, बाल-आदर्श के चयन में संपादक ने सतर्कता का परिचय दिया है।

कहानियों के कथानक कहीं भी बाल-परीधियों को लांघते प्रतीत नहीं होते। कहीं-कहीं इक्का-दुक्का कहानियों में लेखक रोचकता के साथ निर्वाह नहीं कर पाएं हैं। रोचकता के ऊपर कथानक के हावी होने से सरसता खंडित हो जाती हैं। चरम-बिन्दु का अस्पष्ट होना पाठक की जिज्ञासा को बिखेर देता है। कहानी एक व्याख्यानिका का रूप ले लेती है। 'टी फार टेन्सू' और 'आर्शीवाद' कहानियां व्याख्यानिका की और मुड़ती प्रतीत होती है।

कहानी में तत्सम शब्दों की भरमार भी सरसता में बाधा उत्पन्न करती है। कहानी आम न हो विशेष बन जाती है। ऐसी कहानी 'पाठय-पुस्तक के लिए तो उपयोगी है, पत्रिका के लिए नहीं। इस पुस्तक में संकलित कहानियों के लेखकों ने इस ओर ध्यान दिया है। शब्दों का चयन बाल-ज्ञान की सहजता को बनाए रखता है। छोटे-छोटे संवादों में निहित जिज्ञासा हर कहानी के किसी न किसी अंश में पाठकों को मिल जाएगी। शब्दों के पुनर्चयन, वाक्य-गठन जैसे क्षेत्रों में लेखक को संपादक को स्वतन्त्रता देनी चाहिए। इससे कहानी को बाल-स्तर योग्य बनाने में सहयोग मिलता है। इस पुस्तक में कहीं-कहीं ऐसा देखने में आया है कि शब्दों, संवादों और वाक्य-गठन का स्तर कथानक के बालस्तर से मेल नहीं खाता है। ऐसा विशेषकर उन लेखकों के साथ होता है जो वयस्कों के लिए कहानियां लिखते-लिखते इक्का-दुक्का बाल-कहानियां लिख देते हैं। से०रा० यात्री की 'कहानी यूं' तथा 'जोगी कुंडलिनी' में विशेषतः इसी बाल-स्तर का निर्वाह नहीं हो पाया है।

बालक से सामने आज मीडिया का भव्य-रूप प्रदर्शित हो रहा है। दूरदर्शन ने गांवों तक पहुंच कर बाल-स्वभाव में इतना परिवर्तन तो किया है कि आज उसे परियों की कहानियां रोचक नहीं लगतीं। जय प्रकाश भारती की 'सफेद हाथी' कहानी में निहित कल्पना आज बाल-स्तर पर उचित प्रतीत नहीं होती। अनेक प्रश्न बच्चों के मस्तिष्क में कोंदने लगते हैं जिनका समाधान वे अपने पास बैठ पिता से या माता से पूछते हैं। 'क्या सफेद हाथी होता है? क्या हाथी अपनी सूंड में फूल भर सकता है? धनपाल और मनपाल का क्या हुआ? आदि ऐसे ही प्रश्न हैं।

समग्र रूप से 'बयालीस बाल कथाएं' बाल-साहित्य में एक अच्छा संकलन है। ऐसे और भी प्रयास इस क्षेत्र में अपेक्ष्य हैं।

—अनिल बलूनी,
202 डी, पाकेट 1, मयूर विहार, दिल्ली।

नाम: बयालीस बाल कथाएं, संपादक: शमशेर अ० खान,
प्रकाशक: मिनहाज प्रकाशन, आर-2/114, नया राजनगर, गाजियाबाद-201001

सद्भावना का गणित - पेशे - पहल

अनीति, अत्याचार और असत्य हर आदमी को उद्विग्न करता है। अनीति, अत्याचार और असत्य का विरोध न कर पाने और न करने की नियति के बावजूद आदमी इनसे उद्वेलित होता है। विचलित होता है। कहीं न कहीं उसका अन्तर्तम इससे आहत होता है। वह जायज सोचता है कि खुद पहल भले न कर पाता हो। सामूहिक पहल के लिए आह्वान ज़रूर करता है। यह आह्वान, उद्बोधन और सम्बोधन काव्य के रूप में व्यक्त को जाते हैं। काव्य के रूप में व्यक्त हुए बिना रह नहीं सकते क्योंकि आदमी होने के कारण अप्रिय की अनूगूंज उसे तब तक बेचैन करती है जब तक कि वह इसे वाचा ही सही, व्यक्त नहीं कर लेता।

डाक-टेलीफोन के कवि-कर्मियों की पेशकश है- 'पेशे-पहल' । कर्मचारी हैं। कर्म की ऊर्जा उनके पास है। कर्मलीनता ने उन्हें सोच दिया है। कर्तव्यनिर्वाह के दौरान हुए सम्पर्क, आदान-प्रदान और संवेदना-भोग ने उन्हें सामाजिक-सोच से भली-प्रकार अवगत कराया है। यही सामाजिक सोच इन कविताओं में फूट पड़ा है।

साम्प्रदायिकता को उन्माद बढ़ रहा है। साम्प्रदायिकता का जायज कारण किसी की समझ में नहीं आ रहा है, सिवा इसके कि दहशत पैदा कर सकें- राग तैलंग कहते है-'हवा में कुछ नाम/उछाल दिये गये/जो पकड़ सके/लोगों की/कमज़ोर नसों को पैदा कर सके-इधर/शक बून सके-उधर/बस कुछ/उनके चाहे जैसा ही/बात कुछ भी नहीं थी/जमीन पर पत्थर गाड़ने या उखाड़ने की/तो बिलकुल नहीं। कदाचित् इसीलिये इन तत्वों की पहिचानने की बात बालेन्दु परसाई करते हैं- वे जो लिख रहे हैं सम्प्रदाय की भाषा/वे जो लिख रहे हैं भाई-चारे का बँटवारा/वे लिख रहे हैं पूजा और इबादत पर खून/वे धर्म की गाँठ से निकल रहे हैं/पहचानों/वे घुस आये है हमारे घरों में।"

राम रहीम की समझ सबको है। पता नहीं क्यों, लोग आम दिनों की तरह क्यों नहीं रहते? क्यों नहीं सोचते आम दिनों की तरह कि इन उन्मादों से जो रिक्तियां पैदा हो जायेंगी, उन्हें पूरा नहीं किया जा सकेगा? जो फासले पैदा हो जायेंगे वे पाटे नहीं जा सकेंगे? सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इससे आदमी होने की पहिचान खत्म होती है। मधुसूदन इसी तथ्य को रेखांकित करते है-'न हिन्दू है, न मुसलमा', आदमी है आदमी/न काला, न गोरा, सिर्फ आदमी है आदमी/रंगोरोगन धरम सब दिखावे के मुलम्मे हैं/आदमी के वक्त पर काम आता है आदमी।'

इस बनियादी सोच से आदमी की बिरादरी बराबर अनुप्राणित है लेकिन अफसोस कि भावों में बह जाने वाला, बहकने वाला तत्व भी आदमी में ही है। उसे आविष्ट कर अपना स्वार्थ सिद्ध कर लेते हैं। भड़काऊ नारों और सोच का शिकार यही आदमी शान्त होकर सोचता है तो गुनगुना उठता है-'मन्दिर, मस्जिद, गुरूद्वारे, गिरजाघर ही रहे जायेंगे। जो मानवता के मातम में अपने आंसू ढलकायेंगे/लाशों का व्यापार, खून की होली, कोई धर्म नहीं।/इस दरिन्दगी, इस कालिख के दाम न धोये जायेंगे।' भावुकता का शिकार होकर, अप्रत्याशित को अंजाम देकर वह पछताता ही नहीं, एक पूर्ण मानवतावादी दार्शनिक बन जाता है, 'मन्दिर, मस्जिद मिट्टी के घर, यो तो फिर बन जायेंगे।/गये हुए इन्सान न वापिस आये, न वापस आयेंगे।'

बन्द मिल का मज़दूर/किसी विज्ञापन में रंग भरता पेण्टर/नए फैशन का टेलर/होनेहार विद्यार्थी/खुदरा दुकानदार/सफाईवाला मेहतर/गृहस्थी सींचता ड्राइवर/कोई भी हो सकता है वे गरीब/दंगे में गरीब ही मरता है/मरने वाला भी गरीब/आदमजात हाथ था/मेरे मुल्क का एक हाथ।

मुक्तक में हुकुमपालसिंह विकल आज की जरुरत का इज़हार करते हैं-'हर गली और सड़क पर, अब न दंगा चाहिये।/हर शहर में अब न बिल्ला और रंगा चाहिये/चाहिये हमको भगीरथ, मेढ़ पर हर खेत की/बहती हुई हर नहर में, स्नेह गंगा चाहिये।'

इस सबके बावजूद मनुष्य का अस्तित्व जिस सामाजिकता में अपने को अर्थवान् बनाता है, वह प्रेम कभी मरता तो हैं नहीं। प्रेम को बिना आदमी का पल भी भी नहीं चलता। वह सामाजिक है, यह उसे व्यवहार के लिए प्रेरित करता है। यहीं जब अभाव पैदा हो जाता है, तो प्रश्न उठ खड़े होते है। यासुब हुसैन की गज़ल के प्रश्नों की तरह, लहरों के दरिया से जुदा कैसे करोगे?/रूहों को तन से जुदा कैसे करोंगे?/सर तन से जुदा करते हो मजहब से नाम पर/अल्लाह को ईश्वर से जुदा कैसे करोगे?/चिरागे-वफा जलाइये, न कीजे कल का इन्तजार,/कुल तुम न रहोंगे तो वफा कैसे करोंगे?'

पेशे-पहल' संकलन की कविताएं, गज़लें, मुक्तक, गीत इस बात के प्रमाण हैं कि डाक-टेलीफोन के कर्मियों में बौद्धिक सोच का जितना ऊँचा स्तर है उतना ही ऊँचा उनका अभिव्यक्ति का स्तर है। रचनायें ठोस, गठी हुई, निष्णात अभिव्यक्तियां है जो किसी भी स्थापित कवि की रचनाओं के सामने खड़ी हो सकती है। कर्मियों में निहित इस बीज को, रचनाकार के उत्स को प्रश्रय और प्रोत्साहन देना चाहिये। कर्मचारी संगठन यह काम कर रहा है, यह स्वागत योग्य है। वह बधाई का पात्र है। रचनाओं में एक समूची प्रक्रिया को जीने और निर्वाहित होने की जिस तरह संयोया गया है, वह सम्पादक के सोच समझ और श्रम का परिणाम है। वह सराहना का पात्र है।

— कमला प्रसाद चौरसिया

ई-6/2-65 अक्षेरा कालोनी, भोपाल 462016

पेशे-पहल:प्रस्तुति-गोविन्दसिंह असिवाल, परिमण्डल सचिव, अखिल-भारतीय डाक कर्मचारी संघ, म०प्र० भोपाल-एक कविता फोल्डर

सनातन धर्म और महात्मा गांधी

महात्मा गांधी पर अब तक कोई तीन हजार से भी अधिक पुस्तकें निकल चुकी हैं और आज भी यह सिलसिला जारी है। हर वर्ष करीब पचास किताबें गांधीजी पर निकल ही जाती हैं। गांधीजी पर अंग्रेजी में काफी कुछ लिखा गया है। गुजराती भाषा में भी बड़ी संख्या में गांधी साहित्य उपलब्ध है। परंतु हिंदी में संपूर्ण गांधी वाङ्मय के अलावा बहुत कम ऐसा साहित्य है जो गांधी के विचारों और कर्म की समग्र जानकारी देता हो। ऐसे में डाक्टर पुषराज की हाल में प्रकाशित पुस्तक "सनातन धर्म और महात्मा गांधी" हिंदी भाषा में अब तक अनुपलब्ध प्रामाणिक गांधी साहित्य की कमी को पूरा करती है और अत्यंत सरल और रोचक शैली में गांधीजी के विचारों की मूल भूत प्रेरणाओं को समझने का प्रयास करती है।

लेखक ने अपनी पुस्तक में महात्मा गांधी को भारत के प्राचीन ऋषियों और मुनियों की परंपरा में रखा है। और इसलिए उन्होंने उन को केवल एक राजनेता के रूप में न देख कर "भारत के जागरण के दौर के एक अनुकरणीय महापुरुष" के रूप में बताया है। लेखक के अनुसार "गांधीजी भारत की स्वतंत्रता की लड़ाई कोरे राजनैतिक अर्थ में नहीं लड़ रहे थे वे तो भारतीय सभ्यता की लड़ाई लड़ रहे थे और उस की नींव आध्यात्मिक है।" लेखक ने इस पुस्तक में भारतीय सभ्यता के संदर्भ में ही गांधीजी को जानने-समझने का प्रयास किया है। यह प्रयास संपूर्ण गांधी वाङ्मय के बिना शायद संभव नहीं हो पाता। लेखक ने इस स्रोत से भरपूर मदद ली है और इस स्रोत के कारण ही आलोच्य पुस्तक की प्रमाणिकता बढ़ गई है। पुस्तक के कुल आठ अध्यायों में से पहले अध्याय में गांधीजी की धर्म जिज्ञासा का और उन के विशद अध्ययन का, दूसरे में सनातन धर्म की उन की व्याख्या का, तीसरे में सत्य और ईश्वर का, चौथे में भगवद् गीता के उन के भाष्य का, पांचवे में यम नियमों का, छठे में वर्णाश्रम धर्म संबंधी उन की मान्यता का और सातवें अध्याय में उन की राम राज्य संबंधी अवधारणा का परीक्षण एवं विश्लेषण किया गया है। आठवां अध्याय उपसंहारात्मक है। इस में गांधीजी के विचारों का सिंहावलोकन है।

गांधीजी के बारे में आम लोगों में यह धारणा व्याप्त रही है कि उन्हें गंभीर अध्ययन के लिए बहुत कम समय मिला था और उन्होंने हमारे देश को एक नैतिक नेतृत्व ही प्रदान किया था। परंतु डाक्टर पुषराज ने अपनी पुस्तक के पहले ही अध्याय में गांधीजी के विशद अध्ययन की जो सूची दी है, उसे देख कर यह अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि गांधीजी का अध्ययन कितना व्यापक और गहरा था। गांधीजी ने अपने जमाने के सभी बड़े लोगों की कृतियां पढ़ी थी परंतु साथ ही साथ उन्होंने भारत के प्रचीन साहित्य-वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत, पुराण आदि का विशद अध्ययन किया था। इसी प्राचीन भारतीय साहित्य के आधार पर उन्होंने अपनी विचार सारणी को विकसित किया था और इन्हीं विचारों पर उन्होंने दुनिया के अन्य लेखकों और विचारकों की मान्यताओं को परखा था। अपनी किताब में लेखक ने यह बताया है कि गांधीजी ने समय-समय पर टाल्सटाय, थोरो, रसकिन आदि पश्चिमी विचारकों के विचारों से मदद अवश्य ली परंतु जहां तक उन की मूल मान्यताओं का सवाल है वह मान्यताएं तो उन्होंने भारत वर्ष की प्राचीन काल से चली आ रही वैदिक या सनातन परंपरा से ही प्राप्त की थी।

भारतीय सभ्यता के संदर्भ में गांधीजी को समझने के प्रयास में लेखक ने अपनी पुस्तक में उन-उन विषयों को चुन कर रखा है जिन विषयों से भारतीय सभ्यता का वर्णन किया जा सकता है। उदाहरण के लिए सनातन धर्म नामक अध्याय में लेखक ने न केवल भारतीय धार्मिक चिंतन का विवरण दिया है अपितु सनातन धर्म की गांधीजी की व्याख्या को भी विस्तार से बतलाया है। गांधीजी की व्याख्या को बतलाते हुए लेखक ने यह कहा है कि सनातन धर्म के अंतर्गत भारत में उपजे सभी धार्मिक संप्रदाय समाविष्ट हो जाते हैं। यह सभी संप्रदाय एक ही सत्य को अलग अलग ढंग से देखते हैं। परमेश्वर तक पहुंचने के अलग अलग रास्ते बतलाते हैं। परंतु यह सब रास्ते एक ही जगह पहुंचते हैं। इन का लक्ष्य एक है केवल विधियां अलग-अलग हैं।

डाक्टर पुषराज ने अपनी पुस्तक में बार-बार गांधीजी के उद्धरण ले कर के यह बतलाया है कि गांधीजी को प्रत्येक कर्म के पीछे सूक्ष्म विचार

रहता था। उन्होंने भारत की शास्त्रीय परंपरा का गहरा अध्ययन किया था। यहां तक कि उन्होंने शास्त्रों की व्याख्या करने से संबंधित नियमों को भी बतलाया था। भगवद् गीता का भाष्य लिखते समय उन्होंने यह कहा कि यह भाष्य उन के पिछले कई वर्षों के कर्म का परिणाम है यानी पिछले वर्षों में उन्होंने जिस तरह भगवद् गीता के अनुसार अपने कर्मों को निष्पादन किया, अपने आचरण को मर्यादित किया उस सब का निचोड़ वे भगवद् गीता को भाष्य में कर रहे थे। गांधीजी ने तो यहां तक कहा कि उन के लिए भगवद् गीता ही एकमात्र ऐसा ग्रंथ है। जिस के आधार पर वे अपने चिंतन और कर्म का निष्पादन कर रहे हैं। भगवद् गीता जैसे शास्त्र वचनों की सत्यता-असत्यता समझने, विभिन्न मान्यताओं के कल्याणकारी और अकल्याणकारी तत्वों को पहचानने और समाज की व्यवस्था करने के लिए नियमों का पालन करने वाले निर्मल चित्त व्यक्ति ही अधिकारी हैं ऐसा गांधीजी मानते थे।

लेखक के अनुसार गांधीजी ने राम राज्य की पुरानी कल्पना को ही भारत में फिर से साकार करने का आह्वान किया था। गांधीजी का मानना था कि अच्छे राज्य के लिए नीति सम्मत व्यवस्थाओं का होना आवश्यक है। नीति सम्मत व्यवस्थाएं वहीं हो सकती हैं जहां राजा और प्रजा पवित्र और न्यायपूर्ण जीवन जीते हों। यह तभी हो सकता है जब स्वराज्य की व्यवस्था हो। गांधीजी यह मानते थे कि भारत के लिए नगरों में केंद्रित व्यवस्था उपयोगी नहीं है बल्कि नगरों का समावेश करने वाली ग्राम स्वराज्य व्यवस्था ही उपयोगी है। क्योंकि ग्राम स्वराज्य ही देश के सभी लोगों को समर्थ बना सकता है।

इस पुस्तक में गांधीजी के द्वारा भारत की शास्त्रीय और लोक परंपराओं का गहन चिंतन कर आजाद भारत की भावी स्वरूप की जो तस्वीर गढ़ी थी उस की एक झलक हमें दिखाई देती है। गांधी वाङ्मय से जगह-जगह जो उद्धरण लिए गए हैं उस से इस पुस्तक की प्रमाणिकता में और भी वृद्धि हो जाती है। इतने जटिल विषय पर इतनी सरल भाषा में लिखी गई शायद यह हिंदी की पहली पुस्तक हैं जो विद्वानों, शोधार्थियों, जिज्ञासुओं एवं सामान्य पाठकों के लिए समान रूप से उपयोगी है। भाषा प्रवाहमय है। एक बार पुस्तक पढ़ना शुरु करें तो उसे पूरा पढ़ कर ही छोड़ा जाएगा। छपाई सुंदर है, छपाई की त्रुटियां बहुत कम हैं। हिंदी के पाठकों में इस पुस्तक का स्वागत किया जाना चाहिए।

—डॉ॰ अशोक वोहरा,
10 कमिश्नर लेन, दिल्ली-110006

पुस्तकः सनातन धर्म और महात्मा गांधी, लेखकः पुष्पराज, प्रकाशकः श्री विनायक प्रकाशन, बी-17 प्रशान्त विहार, दिल्ली-110085 मूल्यः 200 रुपए

किसी के लिए (कविता संग्रह)

कविता में कवि की अनुभूतियों की टीस होती है जिन्हें व्यक्त कर वह अपने मस्तिष्क के बोझ को हल्का करने की कोशिश करता है और इससे उसे कुछ राहत मिलती है। सुप्रसिद्ध छायावादी कवियों ने कविता की उत्पत्ति कवि की अन्तर्वेदना ही मानी है। प्रसादजी ने अपनी कविता में लिखा हैः—

जो घनीभूत पीड़ा थी मस्तिष्क में स्मृतिछाई,
दुर्दिन में आंसू बनकर वह आज बरसने आई।

आधुनिक कवि वीरेन्द्र सिंह वर्मा की नवीन प्रस्तुत कृति "किसी के लिए" लघु गीत संग्रह में भी कुछ ऐसा ही पाया गया है। इनकी कविताओं में प्रेम और सौन्दर्य के साथ-साथ करूणा की अभिव्यक्ति है। काव्य के शुरू में ही कवि की मार्मिक अंतर्वेदना की झलक दीख जाती हैः—

मेरे अन्तत की पीड़ा को
शायद, वह समझ नहीं पाया,
नयनों को देखा पर नयनों का
निर्झर देख नहीं पाया।

वर्माजी के इस गीत संग्रह में भाषा सरल, सुबोध और भावगम्य है। इसमें भावों की तारतम्यता, संप्रेषणीयता तथा जीवन की अन्तर्वेदना यत्र-तत्र प्रकृति चित्रण भी बड़ा मनोरम हो उठा हैः—

कोकिल कूक रही है वन में,
लतिका झूम रही उपवन में।।

* * *

बासों का वन करता सर-सर,
नभ से बंदे झरतीं सूर-सूर।।

प्रकृति मिश्रण के अलावा काव्य में रहस्यवाद और छायावाद भी परिलक्षित होता है। भाषा और भावों में कहीं भी क्लिष्टता नहीं है जिससे साधारण पाठक भी उसका रस्वादन कर सकता है। पुस्तक की साज-सज्जा, छपाई आदि आकर्षक है।

—देवीदत्त तिवाड़ी

पुस्तक का नामः किसी के लिए (कविता संग्रह), कविः वीरेन्द्र सिंह वर्मा, मूल्यः 70 रूपए, प्रकाशिकाः श्रीमतीं विक्रमदेवी, 32 पंचशील कालोनी, सिविल लाइंस, बुलन्दशहर (उ॰प्र॰)

श्यामा-भारतीय जीवन की त्रासदी

किसी भी विषय पर किसी भी प्रांत विशेष पर हर पीढ़ी अपने ढंग से सोचती समझती लिखती है। यहां की जिंदगी पर शैलेश मटियानी, शेखर जोशी, इलाचंद जोशी से लेकर पंकज विष्ट सभी ने एक से एक बेहतरीन रचनाएं दी है पर इसका मतलब यह नही कि भविष्य की संभावनाएं ही खत्म हो गयी। सच तो यह है कि हर आने वाली पीढ़ी अपनी नजर से जितना लिखेगी देखेगी वही पुराने लेखन को भी प्रासंगिक बनायेगा। इतिहास और परंपरा अपनी जगह है आधुनिकता अपनी जगह। क्षितिज का उपन्यास "उकाव" पहाणी जीवन गाथा की इसी श्रंखला की अगली कड़ी है।

कथा अपने फलक में बहुत सरल और सीधी है पाहणी जीवन की तरह ही। मुख्य चरित्र या कहिये एक मात्र चरित्र है श्यामा-जिसका पति शादी के कुछ दिन बाद ही उसे त्याग कर एक मास्टरजी के साथ रहने लगता है। उसके संबंध मास्टरजी से शादी से पहले ही थे पर सामाजिक सच्चरित्रता के आतंक में भला-बढ़ा आज्ञाकारी सपूत घरवालों के कहने से शादी तो श्यामा से कर लेता है पर तुरंत ही उसकी कलई खुल जाती है। हाँ, पुरुष प्रधान समाज के चलते उसकी जिंदगी पर तो खरोंच भी नहीं

आयी। "श्यामा" जरूर बेसहारा हो गयी। न पति के घरवालों का नाटक कुछ कर पाया न समाज बिरादरी की चौपालों की "खुसपुसाहट"। श्यामा छोड़ दी गयी। जो देश के अधिकांश कोनों में भारतीय नारी की जानी-पहचानी नियति है। लेकिन क्या किसी भी जीवित आत्मा के लिये यह संभव था। गोधन की सहानुभूति परस्पर खिंचाव पैदा करती है और लाख मानसिक संघर्षों के बावजूद प्रेम की जीत हुई। पर इससे पहले कि श्यामा समाज को खुलेआम ललकार पाती गोधन एक छोटी सी बीमारी में ही अनायास चल वसा। फिर अकेली रह गयी श्यामा-समाज के तथाकथित पंच-सरपंच भेड़ियों के निर्णय के लिये तलाक बावजूद भी गर्भ? भारतीय नारी का इससे बड़ा अपराध क्या हो सकता है। श्यामा के चरित्र का यहीं एक आयाम खुलता है और जो काम बीसवीं सदी के महानगर की मधुनातन नारी भी करने में डरती है श्यामा ने कर दिखाया। दो दिन के नवजात शिशु को लेकर श्यामा ने गांव छोड़ दिया और बगैर उसके पिता का नाम बताये। उससे फायदा भी क्या था? और यहीं से शुरू होती है श्यामा के उकाव की यात्रा।

श्यामा के पति ने जो चाहा तुरंत कर लिया। दो-दो तीन-तीन शादियां वाले एक नहीं सैकड़ों हैं इसी पहाण में (पृष्ठ-30) पर हजारों में एक श्यामा का एक-एक कदम भी पूरे समाज के लिये चुनौती बन जाता है। यह श्यामा चाहे पहाण पर है महानगर में हैं या केरल, आसाम या घूंघट वाली हिन्दी बैल्ट में। "कहीं धनसिंह की निःसंतान घरवाली सौत का इंतजाम करती है तो कही गंगादत्त की घरवाली। कभी ऐसा भी संभव होगा कि कोई धनसिंह या गंगादत्त भी अपनी पत्नी को दूसरा पति लाने को कहेगा। क्या निःसंतान होने की सारी जिम्मेदारी पत्नी पर ही होता है क्या सारे कानून धर्म उन्हीं के लिये ही हैं (पृष्ठ-51) किसी ने ठीक ही कहा है एक-एक भारतीय स्त्री नोवेल पुरस्कार की हकदार है। पर पुरस्कार को तो छोड़ों उसे बराबरी से जीने का हक भी मिल जाये तो कम बड़ी बात नहीं होगी।

श्यामा सिब्बू को दूध पिलाती है, मजदूरी करने जाती है मिस्त्री के साथ। सौत-जिठानी के नाज-नखरों का ख्याल रखती है, सिब्बू को स्वस्थ रखना चाहती है और इन सबको एक साथ अपनी मान-मर्यादा, आत्मसम्मान के साथ। धरती के किस जीव में इतना सहने की ताकत है जितना भारतीय नारी में। उसका कोई घर नहीं, जाति नहीं, उम्र नहीं सिर्फ एक संघर्ष उकाब की तरफ कभी पिता की मार्यादा के लिये कभी भाइयों गौरव के लिये तो फिर पति के प्रति सतीत्व के लिये, बच्चों के भविष्य के लिये और बुढ़ापे में मूल्यों की सनद के लिये ही उसका जीवन बना है। लेकिन इस संघर्ष में कहीं थकान नहीं। छोटी सी घटना भी जिंदगी में उम्मीद भरने के लिये काफी है। "भैंस ब्या गयी थी। श्यामा के आने के बाद पहली बार दूध आया था। घर में। श्यामा इतनी प्रफुल्लित थी कि जमीन पर पांव ही नहीं पड़ रहे थे। पंख लग गये थे उड़ने को। योजनाओं की पोटली फिर, बंध गयी थी। भविष्य सामने खड़ा था हाथ पहुंचने की दूरी पर। वह छण भर में ही इस दूरी को लांघ जाना चाहती था। (पृष्ठ-102) गांव की जिस कठिन जिंदगी में खाने को अन्न मयस्सर न हो वहां दूध की बूंदे ही किसको खुशी से पागल नहीं बना देगी।

पहाण की गर्मी सर्दी भुखमरी अकाल के ऐसे-ऐसे चित्र हैं कि पूरा जीवन ही साक्षात हो उठा है। गर्मी ने सारी उम्मीदों पर पानी फेर दिया। ऐसा सूखा पड़ा कि हाहाकार मच गयी। सावन भादों की बारिश में जड़े फैल जाती थी घास लहलहाने लगती थी। इस बार आषाढ़ क्या सावन भी निकल गया, पानी नहीं बरसा आदमियों ने तो गुजारा कर लिया डगरों को जिंदा रखना मुश्किल हो गया। जानवर का पेट फल्लके जितना तो हुआ नहीं कि थोड़ा-थोड़ा करके गुजारा कर लो। एक पेड़ के पत्ते ज्यादा से ज्यादा पांच-सात दफे के लिये होते हैं। गिनती के पेड़ हैं सबको पास और हर पेड़ के पत्ते दिये नहीं जा सकते। किसी का विष लगता है किसी से पेट चल जाता है। (पृष्ठ-74) जहां पशु भी घास पात को मुंहताज हों वहां पहाण को बचायें या स्वयं को। क्या करोगे पहाण को बचाकर। यहां तो ऐसी खबर लाओं कि किस किस चीज की जड़ों का पैसा मिल सकता है। पहाण के गांव हों या मैदान के विकास के इसी असंतुलन का नतीजा है कि गांव के गांव उजड़कर शहर की तरफ भाग रहे हैं भूख के मारे काम की तलाश में। करोड़ों की आबादी स्लम में बदलती हुई एक नरक से दूसरे नरक की ओर। और सरकारें हैं कि उन्हें धर्म, जाति के बही खातों को पुरूस्त करने के नाटक से ही फुरसत नहीं। श्यामा के जीवन से उपजी एक व्यक्तिगत् कथा अपने सामाजिक संदर्भ में पूरे भारतीय जीवन की सांसद कथा बनती जाती है। स्त्रीमन की अंतरंग गहराईयों में उतरने की अद्भूत छमता है क्षितिज में। श्यामा को मां की बीमारी की सूचना मिली है। जाने, न जाने की ऊहापोह में श्यामा का मन व्याकुल हो रहा है। "उस पार कुटुम्ब था, रिश्ते थे वहां के नातेदार थे और इस ओर अकेली श्यामा। इजर की बीमारी ने फिर उत्तेजित कर दिया था। फिर छटपटाहट होने लगी। कुछ कहना सुनना नहीं है अब रजा से। खाली भेंट करनी है। आखिरी समय की मुलाकात है। बौज्यू की तरह इजा भी चली गयी तो उम्र भर मलाल रहेगा। उसे सुनाई पड़ा मां बुला रही है। बार-बार कह रही है-जो कहना चाहती है मुझसे कह। बैकुंठ में तेरे बौज्यू से भेंट होगी मै उन्हें सब बता दूंगी इस बोझों से दबी श्यामा को आखिर मिला क्या? सिर्फ एक छत, एक पुरूष का साया वह चाहे बूढ़ा हो या दूसरी बिरादरी का। एक रिजक्टड माल की तरह हर शर्त के आगे समर्पित। कितनी बड़ी सामाजिक बिडम्बना है कि पूरे घर को अपनी मेहनत के वूते चलाने वाली श्यामा हर समय कांपती सहमती रहती है कि कहीं दीदी (सौत-जैठानी) न कुछ कही दे कहीं मैके वालों को पता न चल जाये कि ब्राहमण की बेटी यहां काम करती है। शिब्बू के ममत्व और समाज की हजारों नागफनियों के बीच आहिस्ता-आहिस्ता कदम बढ़ाती श्रम का इतना अपमान भारतीय समाज में ही संभव है और वहीं संभवतः उसके दुष्परिणामों को भोग भी रहा है औतरफा फैलती गरीबी, असमानता, हिंसा और मूल्यों का इतना अधोपतन भारतीयता के अस्तित्व को ही निगल जाने को आमादा जान पड़ता है।

उकाव की मगर एक गंभीर कमी कथा की रूपाटता और एक रसता है। कहानी का यह इकहरपन जितना उसे उसकी लम्बाई में चित्रित करता है उतना उसके व्यापक संदर्भों में नहीं। श्यामा की व्यक्तिगत जिंदगी के बाहर एवं यदि एक भी सामाजिक फलक होता तो एक रसता भी कम होती और पाठक को यह अहसास भी होता कि वह कोई बीसवीं सदी के अंतिम वर्षों की कृति पढ़ रहा है। एक रसता का आलम यह है कि पच्चीसवें पेज पर गोधूल की मृत्यु होते ही लगता है कहानी का सत्व ही समाप्त हो गया है। उससे आगे कहानी को बहाब बनाने में कुछ प्रयास करना पड़ता है। यह तो उपन्यासकार के शिल्प और गहरी सवेंदनाओं का करिश्मा है कि पाठक को अंत तक पढ़वा नहीं लेता उसे आश्वस्त भी करता है।

पहाण की जिंदगी को फोकस में रखकर विष्ट का उपन्यास उस चिड़िया का नाम आया था दो-तीन साल पहले। जहां तक नारीमन की सूक्ष्म गहराईयों, उनकी दिन चर्या, सामाजिक तीजि-त्यौहार रिश्ते नाते और दैनिन्दन अर्न्तबद्ध की एक-एक सलवट को चित्रित करने की बात है वहां क्षितिज पूरी तरह सफल रहे हैं बिल्कुल शरतचंद चट्टोपाध्याय की तरह। पर "उस चिड़िया के नाम" में जीवन की जितनी व्यापकता है, जीवन और मृत्यु को थी। बिखरे जितने भी दार्शनिक आध्यात्मिक प्रश्न हैं इनको ऐतिहासिक और समकालीन संदर्भों की कथा-उपकथाओं के माध्यम से जितना समर्थ ढंग से पैंकज विष्ट ने रखा है वह उसे रवीन्द्र नाथ ठाकुर की श्रेणी में रख देता है। महत्व दोनों का ही है। पर अपनी-अपनी जगह। उकाब क्षितिज का पहला उपन्यास भले ही हो वह उनके भ्रम को पूरी तरह सार्थकता करता है।

—प्रेमपाल शर्मा,

90-बी, कान्तिनगर, (कृष्णनगर) दिल्ली-110051)

उकाव (उपन्यास), क्षितिज शर्मा, प्रकाशकः प्रवीण प्रकाशन, 1/1079, ई, महरौली, नई दिल्ली-30, मूल्यः 125/- रूपए

शब्द परिवार कोश

किसी भी भाषा के शब्द की एक महत्वपूर्ण विशेषता है उसकी उर्वरा शाक्ति। प्रस्तुत कोश में शब्द के परिवार की इसी उर्वरा शाक्ति के आधार पर वृद्धि की गई है। यह वृद्धि उपसर्ग, प्रत्यय आदि के प्रयोग करने से हुई है। कोश में उन्हीं शब्दों को लिया गया है जो अन्य शब्दों के मूल में हैं। उदाहरण के लिए कोश में अंत शब्द को आधार मानकर इससे अनेक शब्दों का निर्माण किया गया है, जैसे अनंत, उपांत, पर्यांत सांत, प्रांत, दुरंत।

हिंदी के मिलते-जुलते शब्दों को ठीक-प्रकार से समझने और समझाने में इस कोश की अपंनी एक प्रमुख विशेषता है। शब्दों का निर्माण मात्र संस्कृत व हिंदी के उपसर्गों, प्रत्ययों आदि के अतिरिक्त अरबी-फारसी के उपसर्गों की सहायता से भी किया गया है। एक शब्द से अधिक से अधिक शब्द बनाने और उनके अर्थ स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है जो कि कोश निर्माण के क्षेत्र में विशिष्ट स्थान रखने वाले विद्वान से ही संभव हो सकता है।

यह कोश विश्वविद्यालयों, प्रशिक्षण संस्थानों के साथ-साथ केंद्रीय कार्यालयों एवं उन राज्य कर्मचारियों के लिए भी उपयोगी है जिनकी राजभाषा हिंदी है।

कोश का कवर पृष्ठ का डिजाइन व मुद्रण आकर्षक है।

—नेत्रसिंह रावत,

लेखक—डा० बदरीनाथ कपूर, प्रकाशक—राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली-6, मूल्य—150 रूपए

आकाश कुसुम

आज के युग में जबकि हम सब अतृप्त हैं; जो चाहते हैं वह हमें मिल नहीं पाता; जो मिलता है, वह अपना नहीं होता, जो अपना होना चाहता है वह दूर चला जाता है, ऐसे में जो कभी नहीं मिलता, वही 'आकाश कुसुम' है।

सविता चड्ढा द्वारा प्रस्तुत 'आकाश कुसुम' 18 कहानियों का एक संग्रह है जिसमें पुरुष-स्त्री संबंधों, विद्यमान सामाजिक कुरीतियों, तथा मनोवैज्ञानिक और सामाजिक संदर्भों से जुड़ी कहानियां हैं। 'आकाश कुसुम' कहानी की नायिका कुसुम कहती है कि "जब महेश (पति) मुझे अपना पूर्व सच बता रहा था तो मैं भी उसे अपना सच बताना चाहती थी लेकिन पहले से दुःखी इन्सान को और दुःख देना मुझे ठीक नहीं लगा"। "आज भी मुझे रह-रहकर अपने प्रेमी आकाश की याद आ रही है"। एक स्थान पर कहा गया है "आंखों के माध्यम से जितनी सूक्ष्मता से प्रेम को समझाया जा सकता है, उतना सशक्त अन्य किसी माध्यम से नहीं।"

'मनसा' कहानी की नायिका कहती है—"पति का साथ पाने के लिए कितना तरसती हूं मैं। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि यदि मुझे अगला जन्म मिले तो मेरा पति मुझे बेहद प्यार करने वाला हो'। 'एक और भगवान' में "लोग जगह-जगह जाकर ईश्वर की तलाश करते हैं और उन्हें कोई यह भी ज्ञान नहीं दे पाता कि ईश्वर कहां है, अरे----औरत ही ईश्वर है। जो काम भगवान करता है वही तो औरत भी करती है। वह सृष्टि का सृजन करती है। वह ही प्रगति की राह तक ले जाती है और वह ही विध्वंस का कारण भी बन सकती है।"

'एकान्तवास' में "पता नहीं क्यों रोशन का मन अपनी पत्नी की ओर से खिंचने लगा था। मैंने महसूस किया कि वह मेरी और आकर्षित हो रहा है"। "रोशन बहुत आकर्षित करने वाले व्यक्ति थे। उनका पूरा व्यक्तित्व ही मुझ पर भावी हो गया था।।" "मैं तुमसे बहुत प्यार करता हूं----अपनी पत्नी से भी ज्यादा। अगर तुम कहो तो मैं उसे तलाक दे सकता हूं"। 'पागल महाराज' में "हर पागल समझदार होता है और हर समझदार कुछ-न-कुछ पागलपन लिए रहता है।"

अधिकांश कहानियों में लेखिका ने एक ऐसी नारी को चित्रित किया है जिसे जीवन में जो अपेक्षा थी वह नहीं मिला, जो मिला है उसे वह मन से स्वीकारती नहीं। लेखिका नारी के साथ हो रहे अन्याय को देखकर तिलमिलाती है, अन्दर ही अन्दर घुटती है मगर संस्कार-वश विद्रोह नहीं कर पाती।

आज के युग में समाज एवं व्यक्तिगत जीवन संबंधी विभिन्न परिस्थितियों में संघर्षशील नारी का जीवन-चित्रण करना ही इन कहानियों की विशेषता है। इन कहानियों की भाषा सरल है व उसमें प्रवाह है। "आकाश कुसुम", "फैसला", "नई मां" इत्यादि कहानियां मर्मस्पर्शी हैं व पाठकों के मन को झकझोरती हैं।

—मनोज कुमार

155-सी, सेक्टर-17, नोएडा-201301

कृतिः आकाश कुसुम, लेखकाः सविता चड्ढा, प्रकाशकः तक्षशिला प्रकाशन. 23/4762, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली। मूल्यः 75 रुपए।

शब्दार्थ-विचार कोश

महान् भाषातत्वज्ञ के रूप में आचार्य रामचन्द्र वर्मा ने हिन्दी के विकास में जो अपना योगदान दिया है वह सर्वविदित है। साठ वर्षों के अपने साहित्यिक जीवनकाल का अधिकांश समय उन्होंने भाषा और शब्दों के अध्ययन को समर्पित किया। इस प्रकार शब्दों से उन्होंने निकट की पहचान स्थापित कर ली। भाषा और शब्दों की समृद्धि के लिए उन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना की। इतना ही नहीं उन्होंने आगे आनेवाली पीढ़ी को भाषा और शब्दों के क्षेत्र में काम करने की प्रेरणा दी। शब्दों के अर्थ-विवेचन और उनके सूक्ष्म भेदों और उपभेदों के तुलनात्मक निरूपण को रेखांकित करते हुए उन्होंने कहा था कि "अब समय आ गया है जबकि हिन्दी में ये दोनों काम वैज्ञानिक ढंग से व्यवस्थित रूप में और शास्त्रीय स्तर पर होना चाहिए।"

इस क्षेत्र में वे स्वयं आगे बढ़कर "शब्दार्थ-दर्शन" के रूप में हिन्दी को एक महत्वपूर्ण कृति दे गए। यही कृति नए कलेवर में संशोधित, परिवर्धित रूप में "शब्दार्थ-विचार कोश" के रूप में पाठकों के सामने है। पुस्तक को यह आकार दिया है डा० बदरीनाथ कपूर ने जो जानेमाने भाषा कोशकार और भाषाविद् हैं।

"शब्दार्थ-विचार कोश" शब्दों के अर्थसहित विवेचन और उनके सूक्ष्म भेदों उपभेदों के क्षेत्र में एक अनूठा कोश है। समान जैसे दिखनेवाले शब्दों को वैज्ञानिक ढंग से इस कोश में विवेचित-विश्लेषित किया गया है। इसमें उनके शब्दमालाएं ली गई हैं। इन शब्दमालाओं के शब्द समान जान पड़ते हैं परन्तु उनमे सूक्ष्म अर्थभेद हैं। इच्छा, आकांक्षा, अभिलाषा, कामना यद्यपि समान और पर्याय लगते हैं परन्तु वस्तुतः उनकी एक अपनी अलग पहचान है और उसी अर्थ में उसका प्रयोग होना चाहिए। अर्थ की इस भिन्नता को और स्पष्ट करने के लिए अंग्रेजी पर्यायों द्वारा स्पष्टता दी गई है। इतना गम्भीर विषय विवेचन नितान्त सहजता और सरलता से किया गया है।

इसमें 257 शब्दमालाएं हैं जिनमें सैकड़ों समवर्गी शब्द हैं। इन शब्दों के सटीक उपयोग के लिए विवरण और प्रयोग के उदाहरण हैं। अपने इस रूप में इस ग्रंथ की महत्ता और उपयोगिता असंदिग्ध है। यह एक अच्छा संदर्भ-ग्रंथ तो है ही। साथ ही इसमें शुद्ध-अशुद्ध, उपयुक्त-अनुपयुक्त शब्दों पर सार्थक विवचेन है। यह पत्रकार, प्राध्यापक, लेखक, विद्यार्थी सभी के लिए समान रूप में उपयोगी है। भाषा विज्ञानी और अंग्रेज़ी भाषी भाषाविदों को भी इससे सही मार्ग-निर्देशन मिलेगा।

—शान्ति कुमार स्याल

पुस्तक का नामः शब्दार्थ विचार कोश, प्रकाशकः राजपाल एण्ड सन्ज़ कश्मीरी गेट, दिल्ली, लेखकः आचार्य राम चंद्र वर्मा,
: 350.00 रूपये, पृष्ठ संख्या 560

शब्द की अनुभूति

यदि शब्द व्यक्ति की मानसिक स्थिति का प्रतीक है तो उसका असर इस बात पर भी निर्भर करता है कि सुनने वाले की मानसिक स्थिति क्या है। इस तरह से शब्द की अनुभूति कहने वाले और सुनने वाले दोनों के साथ जुड़ी हुई है।

पुष्पा हीरालाल द्वारा लिखित यह उपन्यास 'शब्द की अनुभूति' इन्सानी रिश्तों के कई पहलुओं पर प्रकाश डालता है। इस उपन्यास में 'हंस' नाम के एक व्यक्ति की वेदना की कहानी है जो साधन-विहीन होते हुए भी उसका अनथक संघर्ष उसे जीना सिखाता रहता है। हंस एक सीदा-सादा निर्धन मध्यम श्रेणी का दुकानदार है जिसकी सांसारिक जरूरतें अत्यंत सीमित है।

जब से वह पैदा हुआ है, उसे पग-पग पर तिरस्कार ही मिला है। वह पीड़ा और तिरस्कार को सहता हुआ भी जीना चाहता है। वह अपने इर्द-गिर्द की घटनाओं और व्यक्तिओं को बड़ी सच्चाई और सहजता से देखता है। मगर उसे कोई नहीं समझ सका, इसका दुःख उसे हमेशा बना रहता है। कला सत्य उससे कोसों दूर है मगर फिर भी जब उसके अंतर्मन में शब्दों की चोट लगती है तो वह आत्म-पीड़ा और विवशता से कराह उठाता है।

हंस की कहानी यह भी बताती है कि मशीनी युग से पहले भी इन्सान उतना ही दुःखी व एकाकी था जितना कि आज के युग में है। हंस सांसारिक पीड़ाओं की अवहेलना करके अपने को परिस्थितियों के अनुकूल ढाल लेता है और जीने लगता है। लेकिन एक समय परिस्थिति ऐसी भी आती है जब अपनी बहू के कहे हुए कटु शब्द "पिताजी, आपके शरीर से बू आ रही है। पहले आप स्नान कर आइए"।

"क्या कह रही हो, बहू? स्नान तो मैंने हवन से पहले ही कर लिया था"—हंस ने घबराकर कहा।

हंस के अंतर्मन में कटू शब्दों से एक ऐसी पीड़ामयी अनुभूति उपजाती है जो उसके लिए जानलेवा बन जाती है।

यह उपन्यास आम जीवन से तो जुड़ा ही है साथ ही गहरी अनुभूतियों की परछाइयां भी हैं। कुल मिलाकर पठनीय बन बड़ा है। इसकी भाषा शैली अलग ढंग की है। भाषा इतनी सहज और बोधगम्य है कि अपने साथ पाठक को भी लक्ष्य की और अभिमुख किए रहती है।

—सुशीला खन्ना,
169बी, डी०डी०ए० फलैट्स, विक्रांत एन्कलेव, माया पुरी, नई दिल्ली

पुस्तकः शब्द की अनुभूति, लेखिकाः पुष्पा हीरालाल, प्रकाशकः विश्वोदय प्रकाशन, सी-66 बी, सिद्धार्थ एक्टेंशन, नई दिल्ली-110014, मूल्यः 80 रूपए।

बात की चिड़िया

कविता और जिंदगी का एक गहरा संबंध है। यह बात अलग है कि यह संबंध सहयात्री जैसा है या पलायनवादी है। सहयात्री वाले संबंध में कविता जीवन में आए संघर्षों, गतियों और विसंगतियों को प्रतिबिम्बित करती है। पलायन के सुझाव में कविता रूमानी होकर सपनों और आंकाक्षाओं की तस्वीर प्रस्तुत करती है। लेकिन दोनों की अपनी-अपनी तरह से एक दूसरे के पूरक हैं। क्योंकि कविता एक आयामी नहीं हो सकती।

कवि मलखान सिंह सिसौदिया की कविता जीवन संघर्ष से जुड़ी कविता है। उसमें सामाजिक परिवेश और व्यक्तिगत् प्रवृत्तियों की आलोचना-प्रत्यालोचना भी है और जीवन में मुखर हो रही विसंगतियों की तस्वीर भी उसमें वर्तमान के प्रतिरोध भी है और भविष्य के प्रति आशा भी। वह सही ज़ुबान की वकालत भी करती है और अपशब्द की भर्त्सना भी। यह देश और समाज की ओर भी उतने ही उन्मुख है जितनी कि संघर्षरत व्यक्ति की पीड़ा की तरफ / उस पीड़ा की तरफ भी जो कवि की अपनी पीड़ा होती है, तथ्य और कथ्य में समन्वय पैदा न करने की, साफगोई और चतुर-चुप्पी के बीच चुनाव करने की जैसे चतुर-चुप्पी के विरूद्ध कवि कहता है:—

"मैं हर यातना झेल सकता हूं,
किंतु, गूंगापन नहीं,
मुझे उधार के नहीं,
मेरे शब्द चाहिये।"....;।। मुझे मेरे शब्द चाहिये"।

आजादी और प्रकृति के पूरे दौर से जुड़े होने के कारण, कवि के शब्दों में एक वामपंथी लपट है और राष्ट्र निर्माण के प्रति भावनात्मक समर्पण। उसकी भाषा संकल्पों की भाषा है जिसमें वस्तुस्थिति से पलायन का भाव नहीं है:—

"अपने घर में लगी आग को
आयातित आग। आयातित आग। ।।
चीख-चीखकर बताते हुए
किसको भरमा रहे हो मित्र?

उल्टे, उसमें सत्य से जुड़े होने के कारण, भविष्यवाणी करने की शक्ति है:—

"यह तब तक जलेगी, जब तक
तुम्हारे घर का सड़ा-गला-घुना
पूरा-का-पूरा राख नहीं हो जाएगा।"

("आग")

"लेकिन, तुम एक जगह आग बुझाते हो,
वह दूसरी जगह लग जाती है,
तुम उसे भी बुझाने को
चीखते हुए दौड़े जाते हो,
कि वह तीसरी जगह लग जाती है,
आग लगने का यह अटूट सिलसिला
जारी रहता है
तुम कहां-कहां बुझाओगे उसे?......

("दमकल")

कवि की राजनीतिक पृष्ठभूमि मुखर और स्पष्ट होने से हमें एक झलक कवि के राजनीतिक दृष्टिकोण की भी मिलती है:—

"नेत्र-विशेषज्ञ के एक क्षण
उसे ध्यान से देखा, कहा,
प्रिय रोगी, तुम्हारी अंधता
दृष्टि की नहीं, दृष्टिकोण की है।"
जो आंखों तक में नहीं
मस्तिष्क में होती है।"

("अंधता")

वर्तमान की एक खासी तस्वीर भी कवि की रचनाओं में मिलती है; जैसे:—

"बदहवास दिल्ली।
कहां भीगी जा रही है तू?
कोई लक्ष्य भी है जहां तुझे पहुंचना है,
या केवल दौड़ते ही जाना है?
कहीं दुर्घटनाग्रस्त न हो जाय तू
इस अन्धी दौड़ में....."

("दिल्ली कुछ तो बोल")

कवि कभी-कभी सपाट बयानी भी करता है। (जो शायद आग के कवि की एक कमजोरी है) लेकिन अक्सर मुद्दे को शब्दों की नीरसता से ऊपर उठा ले जाता है। उसने अपनी कविता यात्रा में नये बिम्बों को लाने-रखने का प्रयास किया है और यह प्रयास सार्थक भी हुआ है। संग्रह आजादी की लड़ाई से लेकर वर्तमान तक के विस्तृत चित्र को प्रस्तुत करने में सक्षम है।

—राधेश्याम यादव,
35/414, हिम्मतपुरी, दिल्ली-110091

पुस्तकः बात की चिड़िया (कविता संग्रह), लेखकः मलखान सिंह सिसौदिया, प्रकाशकः किताब महल प्रकाशन मूल्यः 50/-

संघर्षों के बीच

"संघर्षों के बीच" हिन्दी के कहानीकार दर्शक का पहला उपन्यास है। इसके पहले उनके कई कहानी संग्रह जैसे "धारा बहती रही", "दुःस्वप्न का अंत" और "सलीब पर लटका मसीहा" छप चुके हैं।

प्रस्तुत उपन्यास में सन् 1947 से 1968 तक के भारतीय परिवेश को आधार बनाया गया है। सन् 1968 की हड़ताल को एक परवर्ती सीमान्त के रूप में देखा गया है और सन् 1947 में प्राप्त राजनीतिक स्वतंत्रता को एक पूर्णवर्ती सीमान्त के रूप में। इस प्रकार यह उपन्यास भारतीय स्वतंत्रता के पहले बीस वर्षों की संक्षिप्त रूप रेखा प्रस्तुत करता है, जिससे [illegible] कि लेखक उसे हृदय स्वतंत्रता के रूप में देखता है। स्व[illegible]

बाद भारत की जनता के दुःख दर्द वही बने रहे। उसे आर्थिक स्वतंत्रता नहीं मिली। आर्थिक स्वतंत्रता के बिना राजनीतिक स्वतंत्रता एक हृदय है, इस तथ्य को उपन्यास में वर्णित घटनाओं, चित्रित पात्रों की नियति के माध्यम से रेखांकित किया गया है।

"संघर्षों के बीच" उपन्यास में डाकखाने का बाबू बलराम और उसकी पत्नी दर्शी, और रामू रिक्शा वाले का जीवन संघर्ष मुख्य रूप से उभर कर सामने आता [illegible] के वातावरण का सजीव चित्रण और डाक कर्मचा[illegible] अनेक प्रश्न नौकरी पेशा लोगों, विशेषतः [illegible] संघर्ष को प्रमाणकि ढंग से प्रस्तुत करते हैं। [illegible] अपने अधिकारों के लिए लड़ने वाले बलराम [illegible] लेखक ने नौकरीपेशा वर्ग के अवसरवादी तथा [illegible]थ अंकन किया है। इसी प्रकार रिक्शा चालक [illegible] संघर्ष का यथार्थ चित्रण लेखक की श्रमिक वर्ग के [illegible] का प्रमाण है। शहर के नौकरी पेशा लोगों और शहर [illegible]ाले रामू जैसे श्रमजीवी लोगों की नियति शोषण का शिकार हो[illegible] हद तक उसके खिलाफ संघर्ष करना अंत में मर जाना ही है। जीवन भर संघर्ष करने वाले बलराम और उसकी पत्नी दर्शी का दुखद अंत उपन्यास को दुखान्त बना देता है। इस दुखद अन्त से उपन्यास में जहां करूणा का संचार होता है, वहां प्रकारान्तर से शोषण के विरुद्ध संघर्ष की प्रेरणा भी मिलती है।

"संघर्षों के बीच" नगरीय जीवन का उपन्यास कहा जा सकता है, पर इसकी कथावस्तु का फलक नगर के पूरे जीवन तक नहीं फैलता, बल्कि नौकरी पेशा लोगों और श्रमिक वर्ग तक सीमित है। इसलिए इसे शहर में रहने वाले श्रमिक और श्रमजीवी (नौकरी पेशा) लोगों की जीवन गाथा कहा जा सकता है। नौकरी पेशा लोग चाहे स्वयं को श्रमजीवी के बजाए बुद्धिजीवी समझे, लेकिन् ठोस जीवन संघर्ष क्लर्कों, अफसरों, अध्यापकों, इंजीनियरों, डाक्टरों, पत्रकारों और मसिजीवी लेखकों तक की आंखे खोलकर उन्हें श्रमजीवी की भूमिका में खड़ा कर देता है। दर्शक जी ने इस उपन्यास में तथाकथित बुद्धिजीवियों को प्रस्तुत नहीं किया है (उपन्यास के सीमित फलक के कारण) उनका झुकाव नौकरी पेशा लोगों तथा मजदूरों को श्रमजीवी वर्ग मानने की ओर है। इस प्रकार वर्तमान शहरी जीवन का व्यापक वर्णन न करके भी लेखक ने नगरीय जीवन के कटुयथार्थ का कुशल अंकन किया है।

प्रस्तुत उपन्यास वर्णनात्मक अधिक है, यद्यपि इसमें कई स्थलों पर विगत स्मरण (Flash back), स्वप्नवर्णन और अविश्वसनीय घटनाओं का वर्णन भी है। कथानक भी इकहरा है, अर्थात् मुख्य कथानक के साथ अन्य प्रासंगिक कथाओं का जाल बुनने की कोशिश नहीं की गई है। बलराम का स्वयं अपना अंगूठा काटना, लोकनाथ की मृत्यु का कारण शराब बनाने के आरोप पर पुलिस का दुर्व्यवहार, अविश्वसनीय घटनाएं लगती हैं। बलराम की बहन रूपा का प्रसंग इतना गौण था तो उसे उपन्यास में रखने की क्या आवश्यकता थी। इसी प्रकार उपन्यास के शुरू में ही लोकनाथ की अचानक मृत्यु पाठकों को आश्वस्त करने वाली नहीं है। लेखक का पहला उपन्यास होने के कारण संयोजन में ये कमियां क्षम्य भी हैं।

"संघर्षों के बीच" के अधिकांश पात्र संघर्षशील और कर्मठ हैं। पर बलराम, रामू, दर्शी, उषा, ध्यामलाल का जीवन संघर्ष उपन्यास में अधिक उभरा है। बलराम को उपन्यास का नायक और दर्शी को नायिका की संज्ञा दी जा सकती है। कथानक हीन, नायकहीन उपन्यासों की भीड़ में यह उपन्यास परम्परागत लग सकता है, पर आधुनिकता के मोह में लेखक परम्परा से एकदम कट भी नहीं सकता। आधुनिकता और प्रयोगशीलता के बावजूद कथा साहित्य में "कथारस" तो होना ही चाहिए। प्रस्तुत उपन्यास में "कथारस" की बिल्कुल कमी नहीं है।

बलराम और दर्शी का चित्रण इस बात की गवाही देता है कि एक अनपढ़ व्यक्ति बलराम परिश्रम और संघर्ष के बूते पर डाक कर्मचारियों के नेता के रूप में उभरता है और पर्दानशीन, गंवार दर्शी अपने पति बलराम के जीवन संघर्ष में साथ देकर एक जागरूक नारी के रूप में सामने आती है। आम स्त्री पुरूष में शक्ति का उदय संघर्ष के द्वारा संभव है। यह तथ्य इस उपन्यास के अनेक पात्रों से स्पष्ट होता है। आम आदमी को उपन्यास के नायक का दर्जा देकर भी दर्शक जी ने नायक संबंधी परंपरागत अवधारणा का खंडन किया है। दर्शी का "हरबार सू" करना अधिक और आवश्यक विस्तार पा गया है।

प्रस्तुत उपन्यास की भाषा प्रायः मिलीजुली है, जिसमें बोलचाल की भाषा की स्वाभाविकता है। "नाभिदर्शना साडी" (पृष्ठ 3) एक नया शब्द प्रयोग है, फही, सुट्टा, दण्दा, कुन्नू, कामा (नौकर के अर्थ में), परना (गमश के अर्थ में), झंगी (पेडो के झुण्ड के अर्थ में), खेह (गन्दगी), टल्लियां (घण्टिया), खू (कुआं), ना मिलवर्तन (असहयोग), कोई छींक छांक न पड़ जाये जैसे प्रयोगों से उपन्यास की भाषा पर पंजाबी का प्रभाव दिखाई देता है और मद्रासी हिंदी की छटा (पृष्ठ 80, 97 पर) भी भाषा में रोचकता और यर्थाथ का संचार कर देती है। क्षेत्रीय भाषाओं के शब्दों का हिंदी में प्रयोग स्वागत योग्य है, यदि वे हिंदी को बोझिल न बनायें या उसे दुर्बोध न बना दें। आंचलिक रचनाओं में क्षेत्रीय अथवा शब्दों का प्रयोग एक अनिवार्यता है।

दर्शक जी के पहले उपन्यास से यह आशा बंधती है कि वे भविष्य में और बेहतर उपन्यास हिंदी जगत को देंगे।

—डा० सुधेश,
फ्लैट 1335, पूर्वाचल, जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली-110067

पुस्तकः संघर्षों के बीच (उपन्यास), रचनाकारः दर्शन, प्रकाशकः पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, 5 ई रानी झांसी रोड, नई दिल्ली 110055, पृष्ठ 139, मूल्य 30 रूपये।

कर्नाटक महिला हिंदी सेवा समिति में हिंदी सम्मेलन

भारत सरकार के राजभाषा के अधिकारीगण एवं कर्नाटक के हिंदी प्रेमियों के 22-7-94 के दिन बैंगलूर (कर्नाटक) की कर्नाटक महिला हिंदी सेवा समिति में आयोजित स्नेह-सम्मेलन में अध्यक्ष प्रो॰ ना॰ नागप्पा (भूतपूर्व हिंदी प्रोफेसर तथा हिंदी विभागाध्यक्ष, मैसूर विश्वविद्यालय, मानस गंगोत्री मैसूर) का अभिभाषण।

भारत सरकार के राजभाषा विभाग के सचिव श्री चन्द्रधर त्रिपाठी आई॰ए॰एस॰ का इस महान स्नेह सम्मेलन में उपस्थित रहना एक ऐतिहासिक महत्व की बात है। हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा है, राजभाषा है—सबसे बढ़कर प्रेम-भाषा है। हिंदी दक्षिण भारत में 1918 से 1948 तक (तीस वर्ष) प्रेम से सीखी गई। लोक सभा में कभी बोलते हुए तत्कालीन गृहमंत्री श्री माननीय गोविन्द बल्लभ पन्त से कहा था कि प्रेम-भाषा हिंदी के आकर्षण से कौन बच सकता है। आप दक्षिण भारत की श्रीमती सुब्बलक्ष्मी के मीरा भजन सुनिये केवल एक बार। बस, आप हिंदी पर बिक जाएंगे। स्वातंत्रयपूर्व युग में दक्षिण की महिलाओं का पर्याप्त ज्ञानवर्धन हुआ था। कई महिलाओं ने सत्याग्रह संग्राम में भी भाग लिया। मैसूर की सुब्बझा, बैंगलूर की गौरम्मा हुब्बीकी उमाबाई कुन्दापुर तथा धारावाड़ा की कृष्णाबाई पणजीकर और मंगलूर की नेल्लीभाई सुब्बराव के परिवार वालों ने हिंदी प्रचार क्षेत्र में प्रशंसनीय कार्य किया। श्रीमती कृष्णाबाई पणजीकर कर्नाटक हिंदी शिक्षक विद्यालय धारवाड़ की व्यवस्थापिका समिति की अध्यक्ष थी और उनके जमाने में इस विद्यालय के प्रथम सत्र के समस्त छात्राध्यापकों को कर्नाटक के हाई स्कूलों में हिंदी अध्यापक होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। यह तो कहिए कि तब कर्नाटक बम्बई प्रान्त के अंतर्गत पड़ता था और शिक्षा मंत्री की हैसियत से सर्वप्रथम बम्बइया कांग्रेसी सरकार के मुख्य मंत्री श्री बाका साहब खेर साहब ने सारे सूबे के स्कूलों में हिंदी आवश्यक विषय बना कर एक नया आदर्श स्थापित किया जिसका फलय था कि हिंदी के शिक्षण प्राप्त व्यक्तियों को हिंदी प्रचार का मौका मिल गया बड़े उत्साह के राष्ट्रभाषा का प्रचार हुआ। यह वह प्रदेश था जहां यान बेकगांव में 1924 में कांग्रेस अध्यक्ष महात्मा गांधी जी ने हिंदी को स्वराज्य भाषा घोषित किया था।

राष्ट्रभाषा हिंदी के आंदोलन के जन्मदाता हैं महात्मा गांधी। आपकी राष्ट्रभाषा प्रचार की कल्पना अत्यंत उच्च स्तरीय थी। 1932 में दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के पदवीदान समारोह में बोलते हुए उन्होंने कहा था कि यदि मैं वाईसराय महोदय का हिंदी अध्यापक नियुक्त किया जाऊं तो अंग्रेजी साहित्य से हिंदी में उदाहरण देते हुए हिंदी पढ़ाऊंगा। उन्होंने 1946 में सभी की रजत जयन्ती में दूसरी बात यह कही कि हिंदी में समस्त भारतीय भाषाओं के साहित्य का इतिहास उपलब्ध हो और यदि मैं इलाहाबाद जैसे विश्वविद्यालय के हिंदी एम ए कोर्स या पाठ्यक्रम निश्चित करूं तो भारतीय साहित्य का इतिहास हिंदी में अवश्य पाठ्य विषय बनाऊं। तात्पर्य यह है कि हमारे संविधान में हिंदी के विकास संबंधी जो बात लिखित है उसकी थोड़ी बहुत परिकल्पना हमारे देश के इस महान राष्ट्रभाषा आंदोलन के प्रर्वतक महात्मा जी के हृदय में बहूत पहले से ही थी। जब हिंदी-अंग्रेजी सम्बोधिनी का तमिल कन्नड़, तेलुगु, मलयालम में अनुवाद उनको सर्मपित किया गया तब उन्होंने क्या कहा। तमिल भाषा का अध्ययन करो। उसमें और हिंदी में जोर व्यतिरेकी बातें या साम्य हैं। उनको ख्याल में रखते हुए हिंदी सीखने में सहायक पुस्तक लिखो। वह कन्नड़ लोगों की हिंदी भाषा पढ़ने में सहायक रीडर से सवर्था पृथक होगी। आज केन्द्रीय हिंदी संस्थान आगरा (भारत सरकार) की इस दिशा में कदम रखा है। हिंदी कन्नड़ हिंदी-तमिल आदि का व्यतिरेकी अध्ययन भाषा विज्ञान की दृष्टि से किया जा रहा है। इस पर निर्भर करके प्रत्येक भाषाई क्षेत्र के लिए भिन्न-भिन्न रीति से हिंदी रीडरें तैयार होंगी। अभी प्रत्येक क्षेत्र में हिंदी लिखने व बोलने में कैसी-कैसी भूलें हुआ करती हैं, उनको कैसे दूर किया जाए। इस पर कर्नाटक, आन्ध्र, केरल आदि प्रदेशों में पृथक-पृथक हिंदी अध्यापकों के लिए कार्यशालाएं चलायी जाती हैं। वांछनीय यह है कि प्रत्येक दक्षिण भारतीय भाषा प्रदेश में केन्द्रीय हिंदी निदेशालय की एक शाखा स्थापित हो जिसकी तरफ से उस प्रदेश की भाषा की सहायता से पत्राचार द्वारा हिंदी सिखाने का उपक्रम हो। इससे हिंदी प्रचार में गति आएगी।

राष्ट्रभाषा हिंदी प्रचार की बुनियाद पर राजभाषा का कार्य चलेगा। राष्ट्रभाषा प्रचार द्वारा इन सत्तर पचहत्तर वर्षों से दक्षिण भारत में हिंदी के लिए जो अनुकूल भूमि तैयार की गयी है उसका उपयोग करते हुए राजभाषा का कार्य इस भूभाग में स्थित केन्द्रीय सरकारी कार्यालयों तथा भारत सरकार के औद्योगिक उपक्रमों में कार्य आगे बढ़ाया जाए।

बेंगलूर नगर की ही बात को लीजिए। यहां कितने ही केन्द्रीय सरकारी कार्यालय स्थित हैं—जैसे दूरवाणी विभाग, महालेखापाल का दफ्तर, डाक विभाग का मुख्य कार्यालय आदि आदि। प्रत्येक कार्यालय की अपनी-अपनी भाषाई विशेषताएं हैं। डाक विभाग की हिंदी, महालेखापाल की दफ्तरी हिंदी तथा दूरवाणी हिंदी की अपनी-अपनी विशेष आवश्यकताओं को दृष्टि में रखते हुए पृथक-पृथक मिसिलें हिंदी-बगल में अंग्रेजी में तैयार करके राजभाषा विभाग की तरफ से छापकर उपलब्ध किया जाए तो इन कार्यालयों में राजभाषा में मिसिल तैयार करने और आगे उच्चतम अधिकारी के पास पहुंचने वाली मिसिल हिंदी में पेश करने में लेखक, सेक्शन आफीसर तथा उच्च पदस्थ अधिकारियों को बड़ी सुविधा होगी। इन कार्यालयों में संचालित कार्यशालाओं में मैंने जाकर देखा है कि अंग्रेजी की कौन सी वाक्यावली को हिन्दी में कैसे व्यक्त किया जाए—इस बात की जानकारी के अभाव में हिंदी में कार्य करने में कष्ट होता है। सच

पूछिये तो प्रत्येक मंत्रालय की पृथक-पृथक राजभाषा प्रवीणता की परीक्षा चलायी जानी चाहिए। रेलवे हिंदी, डाक विभागीय हिंदी, दूरवाणी हिंदी इन्कम टक्स (आयकर विभाग) की आदि पृथक-पृथक हिंदी परीक्षाएं हों। मैंने इन्कम टैक्स के एक अफ़सर को हिंदी पढ़ाया था उसकी (उस विभाग की) आवश्यकताओं को दृष्टि में रखकर उन अफसर लोगों के लिए पृथक परीक्षा चलायी जाती थी। ऐसा प्रत्येक मंत्रालय में काम चले तो खामोशी से राजभाषा का काम शोरगुल के बिना वर्ष भर चलेगा। यह नहीं कि अगस्त 15, सितम्बर 14, या जनवरी 26 के आसपास कुछ दिन कतिपय अफसर आपस में मिलें और हिंदी के बारे में अंग्रेजी या स्थानीय भाषा में भाषण दें, या हिंदी नाटक खेलें या हिंदी कवि सम्मेलन करें और दो तीन दिन कुछ मिसिलें हिंदी में पढ़ें और मामला खत्म करें। साल भर न उनका हिंदी से काम पड़ेगा, व हिंदी उनको कोई प्रेरणा प्रदान करेगी।

एक और बात प्रादेशिक सरकारें भी अपनी भाषाओं में दफ्तरी काम-काज चलाने लगी हैं। उनका काम यद्यपि न भी हो तो भी उनकी कार्यप्रणाली से हिंदी में दफ्तरी कामोकाज चलाने में सुविधा होगी। अंग्रेजी सरकार ने प्रत्येक भारत सरकारी कार्यालय में जबर्दस्ती अंग्रेजी चलायी। वैसा हम नहीं कर सकते। इसमें क़ानूनी अड़चने भी हैं। हिंदी प्रेम की भाषा है। हिंदी का काम प्रेम से हो तभी उसमें कामयाबी मिले। ऊपर मैंने जो लिखा है उसका अयार्थ (कुछ न कुछ अर्थ) न किया जाय। हिंदी कार्यशालाओं में नाटक, काव्य-वाचन, कविता पाठ आदि मनोरंजन कार्यक्रम भी चलें और साथ ही दफ्तरी मिसिलों पर काम कैसे करना, इस बात में अनुभवी लोगों के द्वारा अभ्यासंगत प्रशिक्षण दिलाया जाय।

भारत सरकार के उद्यमों की बात ही निराली है। यहां तो अंग्रेजी सार्वभौमत्व चल रहा है, बहुत दिनों तक चलेगा भी। आई एस आर ओ (इन्डियन स्पेस रिसर्च इन्स्टिट्यूट) एच० एम० टी० (हिंदुस्तान मशीन टूल्स) आदि न जाने कितने ही उद्यम बेंगलोर में कारगर हैं। उन सबमें इन दिनों हिंदी अधिकारी नियुक्त हुए हैं। बेचारों की दीन दशा है। अंग्रेजी और अंग्रेजित के सम्मुख ये हिंदी अधिकारी अपनी हिंदी और राजभाषात्व को ले कर मिमियाते रह जाते हैं। न उनकी कोई पूछ होती है, न उनकी ऐसी सार्म्थय ही है कि उन उद्यम-संबंधी बातों को लेकर योग्य व्यक्तियों से लेख आदि लिखवाकर हिंदी की पत्र-पत्रिकाएं ही चलावें। उनका कार्य बड़ा कठिन है। एक तो उनको शुरू-शुरू में तत्वज्ञ या विशेषज्ञों से अंग्रेजी में लेख लिखवाकर हिंदी में अनुवाद करना पड़ता है। यह कष्ट साध्य है। पर ऐसा करना अवश्य चाहिए। बस इस समय ये हिंदी अधिकारी यही कार्य करें तो बहुत हुआ समझिये।

अरबी देशों में वहां की भाषाओं में सारा काम चले, चीन में चीनी भाषा में, जापान में जापानी भाषा में उद्यम, व्यापार-वाणिज्य आयात-निर्यात आदि व्यवहार की बात चले तो हिंदी में क्यों नहीं।

इस दिशा में हम दृढ़ प्रतिज्ञ होकर प्रेम के साथ आगे बढ़े तभी सफलता मिलेगी।

हमारी स्वैच्छिक संस्थाओं के द्वारा चालित हिंदी परीक्षाओं में गणित, भौतिकी, रसायन शास्त्र आदि विज्ञान संबंधी विषय रखना तो कठिन है। पर मानविकी (अर्थशास्त्र, भूगोल, राजनीति शास्त्र, समाजशास्त्र, इतिहास पर्यावरणीय विज्ञान) संबंधी विषय अवश्य हिंदी द्वारा पढ़ा सकते हैं और इन विषयों में परीक्षार्थियों को तैयार कर सकते हैं। हिंदी भाषा और साहित्य के प्रश्नपत्रों के साथ ऐसे कोई दो विषय संबंधी प्रश्न पत्र मिलाकर ये हिंदीत्तर प्रदेशों में स्थित स्वैच्छिक हिंदी संस्थाएं परीक्षाएं चलावें तो राजभाषा के प्रचार-प्रसार की दिशा में बहुत कुछ सहायता मिलेगी। कम से कम पच्चीस तीस वर्षों से लगातार काम करते हुए जो स्वैच्छिक हिंदी प्रचार संस्थाएं अखिल भारतीय हिंदी संस्था संघ से संबंध स्थापित करके इधर बरसों से हिंदी का काम कर रहीं हैं उन सब को (हर तरह की परीक्षा के पश्चात्) डीमड यूनिवर्सिटी घोषित किया जाए। इससे इन चालीस वर्षों में कार्यरत हिंदी संस्थाओं का स्तर बढ़ेगा, उनका मान बढ़ेगा और यू जी सी के क्षेत्र में प्रवेश करेंगी और उच्च शिक्षा की रीतिनीति को काम में लाकर जनता में विएयगत याने व्यवहार में आवश्यक हिंदी के रूप, शैली तथा भाषाई-के साथ हिंदी का प्रचार-प्रसार करेंगी। परीक्षाएं डिग्री स्तर की होंगी। उन परीक्षाओं का स्तर वर्दन हो विषय या वस्तु की दृष्टि से भी होकर रहेगा। इस समय केवल भाषाई प्रसार चल रहा है। विषयगत ज्ञान केबल पत्राचार, टिप्पण लेखन तक सीमित है। आगे चलकर इन संस्थाओं की व्यापकता बढ़ेगी। सारे हिंदीत्तर प्रदेश में Objective points of view to से हिंदी का प्रचार-प्रसार होगा। राजभाषा की बुनियाद विस्तृत होगी।

राजभाषा हिंदी हो इस बात का निर्णय कैसे हुआ। केवल हिंदी बोलने वालों की संख्या के बल पर निर्भर करके नहीं, अपितु हिंदीत्तर क्षेत्र में पूज्य महात्मा गांधी जी द्वारा प्रवर्तित हिंदी (राष्ट्रीयता की वाहिका हिंदी) का प्रचार-प्रसार के बल पर (इस दृष्टि से यहां यानि गांधी-हिंदी क्षेत्र में हिंदी हिंदोस्तानी-उर्दू-रेखता-दक्खनी-एक ही भाषा है। संरचना तथा व्याकरण की दृष्टि से भी यह भाषा यानि इस भाषा का एलबम एक है यद्यपि इसके पृथक-पृथक प्रदेशों में पृथक पृथक नाम हैं कोई इसे हिंदु भी कहते हैं और कोई कलदंरी (कानपुर की फैक्टरी-हिंदी) फ्रान्स के विद्वान गासम्द-तासी ने सर्वप्रथम डाहार्नले की परसर्ग वाली बात का समर्थन किया। हिंदी की क्रियाओं को दूदन्त क्रिया बताकर उनका विज्ञान की दृष्टि से विश्लेषण किया। संयुक्त क्रियाओं की विशेप चर्चा की। ईसाई लोगों ने भी हिंदी प्रचार प्रसार में अप्रत्यक्ष रूप से मदद की। विलियम कैरी प्रोटेस्टेन्ट था। उसके पास धन का अभाव था। सिरामपुर में उसने अपने वांछनीय कार्य है। मैं इस स्नेह-सम्मेलन में भाग लेने में आनन्द का अनुभव कर रहा हूं। अखिल भाषा का सीखना सिखाना प्रेम तथा स्नेह का कार्य है, कानूनन न कोई भाषा सीखी गयी, सीखी ही जाएगी। स्मरण रहे कि यूरोप में समस्त प्रदेशों की अपनी अपनी लिपियां रहीं। उनकी जगह एक रोमन लिपि का ग्रहण करने में 600 वर्ष लगे। राजभाषा का दाम यदि ठीक रास्ते पर चले तो दस वर्षों में काफी प्रगति होकर रहेगी। क्योंकि इसके पीछे देश/राष्ट्रसेवा, प्रेम तथा अपनी संस्कृति को बनाये रखने की बात है। आखिर राजभाषा हिंदी राष्ट्र की भावना स्थापित करने में सहायक होगी।

प्रस्तुतिः ना० नागप्पा
8/10, बुल टेम्पल रोड, शंकरपुरम,
बैंगलूर-560004

□

हिंदी साहित्य सम्मेलन:प्रयाग

12, सम्मेलन मार्ग, इलाहाबाद

हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग का 47वां अधिवेशन इलाहाबाद में इस आवाहन के साथ सम्पन्न हुआ कि हिंन्दी वासी स्वयं इसे पूरी तरह अपनायें। ऐसा करने से दूसरे आपके पास स्वयं आयेंगे। अधिवेशन ने इस बात को रेखांकित किया कि हिन्दी क़भी औपनिवेशिक प्रवृत्ति वाली नहीं रही और इसकी मूल प्रवृत्ति कभी ऐसा होने भी नहीं देगी। कई प्रमुख विद्वानों ने अधिवेशन के मंच से इस ओर ध्यान दिलाया कि हिन्दी सम्पूर्ण राष्ट्र की आवश्यकता है और संतों के मत का इतिहास साक्षी है कि गैर हिन्दी भाषियों ने राष्ट्रीय स्वरूप प्राप्त करने के लिए हिन्दी में अपना धर्म प्रचार किया। 17, 18 एवं 19 अक्तूबर 94 को सम्मेलन परिसर स्थित राजर्षि टंडन मंडपम् में सम्पन्न अधिवेशन ने इस बात पर क्षोभ व्यक्त किया कि थोड़े से अंग्रेजी भाषियों ने बड़ी चतुरता से अपनी भाषा लादे रखने की संवैधानिक व्यवस्था कर ली और उसे समय-समय पर आगे बढ़ाते रखने की साजिश की गयी।

सम्मेलन के खचाखच भरे विशाल सभागार में अधिवेशन के उद्घाटन सत्र के अध्यक्ष पद से बोलते हुए सुप्रसिद्ध साहित्यकार अमृत राय ने हिन्दी का प्रचार-प्रसार करने वालों से विनम्रता से काम करने की अपील की। उन्होंने कहा कि दूसरे प्रांतीय भाषाओं को अपदस्थ करके हिन्दी लाने की बात से ही दूरियां पैदा हुई थी, और वह स्थिति अब बदल गयी है, तो देश भर से आये प्रतिनिधियों ने ताली बजाकर इसका समर्थन किया। अधिवेशन की यह मूल भावना अंत तक बनी रही। विभिन्न सत्रों में सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री नरेश मेहता, कृष्णा सोबती सहित क़ई वक्ताओं ने हिन्दी के अलग-अलग स्वरूप की ओर इंगित करते हुए अन्य भारतीय भाषाओं से इसके अद्भुत सामंजस्य को दर्शाया।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने अपनी ऐतिहासिक परम्परा को बनाये रखते हुए इस अधिवेशन में समाजशास्त्र परिषद् एंवं साहित्य परिषद् की संगोष्ठी भी आयोजित किया। विख्यात समाजशास्त्री प्रोफेसर श्यामाचरण दुबे पहले सत्र के अध्यक्ष थे। उन्होंने कहा कि छद्म आधुनिकता हमारी वैचारिक ऊर्जा को क्षीण कर रही है। पश्चिम क़ा अंधानुकरण कर हम उसकी हास्यास्पद अनुकृति बनते जा रहे हैं। भाषा और विचार प्रक्रिया में भी यह समा गया है। इस सत्र में उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के कार्यकारी अध्यक्ष लक्ष्मीकांत वर्मा ने उद्घाटन सत्र में श्री अमृत राय के आरक्षण संबंधी वक्तव्य का हवाला देते हुए सवाल किया कि समाजशास्त्री वर्तमान विसंगतियों का क्या हल प्रस्तुत कर रहे हैं? सत्र के अंत में फिर बोलते हुए श्री दुबे ने कहा कि हमारा काम विश्लेषण है, राजा बनाना नहीं। श्री अमृत राय ने अपने पूर्व बयान को फिर उद्धृत किया और कहा कि मैं आरक्षण के सरलीकृत रासते क़ा नहीं, दबे कुचलों को अन्य सहायता देकर लोगों के बराबर लाने का पक्षधर हूं। इस सत्र को गोविन्द वल्लभ पंत सामाजिक विज्ञान संस्थान के निदेशक प्रोफेसर एस०पी० नागेन्द्र तथा जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय के डाक्टर आनन्द कुमार ने भी संबोधित किया।

साहित्य परिषद् का सत्र हिन्दी कहानी-स्वरूप और चुनौतियां शीर्षक पर आधारित था। इसके अध्यक्ष पद से चर्चित कथाकार श्री अमरकांत ने कहा कि राष्ट्रीय स्वातंत्र्य और राष्ट्रीय तथा सांस्कृतिक पहचान की लड़ाई में कहानी शुरू से ही शामिल हुई जिसका निर्वाह वह आज भी कर रही है। सुश्री कृष्णा सोबती ने इस बात पर संतोष व्यक्त किया कि कहानी गांव के चैतन्य को आज भी व्यक्त कर रही है, और साम्प्रदायिकता से दूर है। श्री भैरवप्रसाद गुप्त ने रचनाकार की पहली चुनौती पहले से स्थापित लेखकों को ही बताया और कहा कि हमें देखना चाहिये कि नया कथाकार शिल्प और कथानक के स्तर पर क्या लिख रहा है। श्री मार्कण्डेय एवं श्री दूधनाथ सिंह तथा श्री कामतानाथ का विचार 6ा कि लेखक बाहरी अनुभूतियों के साथ अपने अनुभव जोड़ता है। प्रोफेसर राम स्वरूप चतुर्वेदी ने इस बात को रेखांकित किया कि हिन्दी कथाकार उपकथानक के इर्द गिर्द ही घूमता है। लगभग सभी वक्ताओं ने इस बात पर दुःख व्यक्त किया कि बाहर से अंग्रेजी भाषा में हिन्दी कथाकारों का छपना भी एक समस्या है। सुरेन्द्र चौधरी (गया) मधुकर सिंह, नीलकान्त आदि प्रतिष्ठित कथाकारों ने भी अपने-अपने विचार व्यक्त किये।

इस अधिवेशन के साथ सम्मेलन का अमृतमहोत्सव समारोह भी सम्पन्न हुआ। हालांकि महोत्सव वर्ष 1985 ही था परन्तु इसका समापन लगभग नौ वर्ष बाद इसलिए हुआ कि सम्मेलन के प्रधानमंत्री डाक्टर प्रभात शास्त्री ने यह प्रण क़र रखा था कि समापन समारोह तभी करेंगे जब राजर्षि टंडन मंडपम बन जाये। इस समारोह की अध्यक्षता श्री नरेश मेहता ने की। अमृतमहोत्सव स्मारिका का लोकार्पण सुश्री लक्ष्मी शंकर व्यास, सर्वश्री लक्ष्मीकान्त वर्मा, डाक्टर विश्वम्भर नाथ उपाध्याय सम्मेलन के सभापति रामेश्वर शुक्ल अंचल, प्रचार मंत्री डा० सत्यप्रकाश मिश्र ने हिन्दी साहित्य सम्मेलन की गौरवमयी परम्परा एवं कार्यों का स्मरण किया।

राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार के क्षेत्र में उल्लेखनीय सेवाओं के उपलक्ष्य में सर्वश्री सिंहासन तिवारी 'कांत', श्री प्रद्युम्नदास वैष्णव तथा शिवशंकर मूलशंकर जानी को 'सम्मेलन सम्मान' से विभूषित किया गया। अधिवेशन के अध्यक्ष अमृत राय ने अंत में हिन्दीवासियों से ही उसे पूरी तरह अपनाने पर जोर दिया।

अन्त में सम्मेलन के प्रबन्ध मंत्री श्री विभूति मिश्र ने धन्यवाद ज्ञापित किया।

प्रस्तुतकर्ता—प्रभात ओझा
73 ए/2। मटियारा रोड,
इलाहाबाद।

केन्द्रीय सचिवालय हिंदी परिषद निरीक्षण निदेशालय शाखा, आयकर भवन उपगृह, न्यू मेरीन लाइन्स, बम्बई

राष्ट्रीय स्वाभिमान यज्ञ के तत्वावधान में आयोजित की गई दिनांक 19 जनवरी, 1994 की संगोष्ठी के आयोजक राम प्रकाश विश्वकर्मा शाखामंत्री ने सभी आगन्तुको का स्वागत किया। शाखा मंत्री ने बताया कि हमारे कार्यालय का कार्य मुख्यतः तकनीकी प्रकार का है। जबकि अधिकतर कार्यालयों में हिन्दी अधिकारी तथा अनुवादक कला विषय से शिक्षा पूरी करके आते हैं। विज्ञान तथा तकनीकी क्षेत्र के कार्यालयों के अधिकारियों तथा कर्मचारियों को हिन्दी में कार्य करने के लिए तत्संबंधी शब्दावली तथा

प्रशिक्षण उपलब्ध कराना चाहिए। इससे हिन्दी को वास्तविक रूप में बढ़ावा मिलेगा। हिन्दी के नाम पर लोगों का मनोरंजन करने से इसका वास्तविक स्वरूप नहीं बन पाता है। मनोरंजन की दृष्टि से जो कार्यक्रम प्रसारित होते हैं वे काफी उच्च कोटि के हैं। इस कारण से इन माध्यमों ने देश की अधिकांश जनता को अपने प्रभाव क्षेत्र में ले लिया है। जबकि हिन्दी भाषा का प्रयोग वैज्ञानिक तथा तकनीकी क्षेत्रों में नहीं के बराबर है।

पत्र सूचना कार्यालय के श्री सी॰ के॰ शर्मा ने कहा कि उनके कार्यालय में भाषायी समाचार पत्रों के लिए अलग अनुभाग है। प्रशासन में इस समय 80% काम हिन्दी में हो रहा है। कार्यालय में लोगों की अधिक जानकारी के लिए एक हिन्दी पत्रिका हिन्दी बुलेटिन भी निकलने जा रही है। इस तरह से लोगों तक हिन्दी की जानकारी पहुंचाई जा रही है।

विविध भारती कार्यालय के श्री विष्णु प्रकाश मिश्र ने कहा कि आकाशवाणी की स्थापना सन् 1935 आकाशवाणी ने हिन्दी के प्रसार के लिए हिन्दी के नाटकों का प्रसारण शुरू किया जिससे गांव-गांव तक हिन्दी का प्रसार होने लगा। आज के समय के अनुसार नगर के लिए दूरदर्शन उपयोगी है लेकिन गांव वालों में ट्रांज़िस्टर अधिक उपयोगी है। विविध भारतीय के पूरे के पूरे कार्यक्रम हिन्दी में हो रहे हैं। इससे जनता का मनोरंजन हिन्दी में हो रहा है। हिन्दी के कार्यक्रम पहले श्रीलंका से प्रसारित किये जाते थे जिससे देश का बहुत सारा पैसा बाहर चला जाता था। विविध भारत के कुल 38 स्टेशन हैं तथा सभी कार्यक्रम हिन्दी में प्रसारित किये जाते हैं। इससे हिन्दी की प्रगति में काफी सहायता मिली है।

'जनसत्ता' में कार्यरत श्री ऋषिकेश रजौरिया ने कहा कि किसी भी भाषा का विकास उसके साहित्य के विकास से होता है। दूरदर्शन वाले अपने व्यवसाय हेतु हिन्दी में कार्यक्रम प्रस्तुत करते हैं, अन्यथा वे हिन्दी में प्रसारण नहीं करते। दूरदर्शन और आकाशवाणी से जो हिन्दी कार्यक्रम प्रसारित किये जा रहे हैं, उनसे हिन्दी का सही विकास नहीं हो रहा है। क्योंकि ये दोनों माध्यम पूरी तरह व्यवसाय से जुड़ गए हैं। समाचारपत्र अगर किसी तरह गाँव तह पहुंच जाते हैं तो भी उनको पढ़ने वाले कम हैं। गांव में अधिकतर लोग अनपढ़ है। भारत सरकार से आगृह किया जाना हिए कि दूरदर्शन तथा आकाशवाणी के कार्यक्रमों में सही हिन्दी का किया जाए।

गोदीवाड़ा, बंबई के श्री अवधेश कुमार पांडेय ने कहा कि अगर म के अच्छे विद्यालय होंगे तो हिन्दी का विकास संभव हो सकेगा। दूरदर्शन सेवा की तरफ से हिन्दी के अच्छे कार्यक्रम प्रसारित किये जाएं तो भी हिन्दी का विकास संभव हो सकेगा।

अध्यक्ष ने अन्त में कहा कि अगर सब लोग सहमत हों, तो दूरदर्शन पर अच्छे हिन्दी कार्यक्रम प्रसारित करने के लिए प्रधानमंत्री जी को पत्र लिखा जाए जिससे इस बात पर जोर दिया जाए कि संचार माध्यमों के माध्यम से जो भी कार्यक्रम प्रसारित किये जायें उनमें उच्च कोटि की हिन्दी का प्रयोग हो। उन्होंने रामायण, महाभारत तथा चाणक्य धारावाहिक की हिन्दी का उल्लेख करते हुए बताया कि इनमें उच्च स्तर की संतोषजनक हिन्दी का प्रयोग हुआ है। इस पर संगोष्ठी में उपस्थित सभी सदस्यों ने अपनी सहमति प्रकट की।

अन्त में श्री नितिन खंडारे ने सबका आभार व्यक्त किया तथा संगोष्ठी को सुचारू रूप से सम्पन्न होने के लिए धन्यवाद दिया।

क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन, भुवनेश्वर

राजभाषा विभाग की ओर से क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन 13 अगस्त, 1994 को "सूचना भवन" भुवनेश्वर में आयोजित किया गया। सम्मेलन की अध्यक्षता माननीय उप गृह मंत्री श्री रामलाल राही ने की। मुख्य अतिथि के रूप में ओड़िसा राज्य के महामहिम राज्यपाल श्री बी॰ सत्यानारायण रेड्डी ने विभिन्न कार्यालयों आदि को राजभाषा शील्ड और प्रमाणपत्र देकर पुरस्कृत किया। इस सम्मेलन में राजभाषा विभाग के सचिव श्री चन्द्रधर त्रिपाठी, संयुक्त सचिव श्री देवस्वरुप तथा निदेशक (तकनीकी) श्री बृज मोहन सिंह नेगी भी शामिल हुए। इस सम्मेलन में पूर्व क्षेत्र अर्थात् पश्चिम बंगाल, बिहार, ओड़िसा और अण्डमान निकोबार द्वीप समूह में स्थित कार्यालयों के प्रतिनिधियों के अलावा पूर्व और पूर्वोत्तर क्षेत्र की नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों के अध्यक्ष एवं सचिव भी शामिल हुए।

13 अगस्त, 1994 को भुवनेश्वर में आयोजित क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन के अवसर पर मुख्य अतिथि महामहिम राज्यपाल श्री बी॰ सत्यानारायण रेड्डी (ओड़िसा राज्य) ने कहा कि मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि यहां आप लोगों के साथ क्षेत्रीय स्तर पर आयोजित इस राजभाषा सम्मेलन में सम्मिलित होने का अवसर मिला है। सबसे पहले मैं पश्चिम बंगाल, बिहार, ओड़िसा एवं अण्डमान निकोबार द्वीप समूह से आए हुए प्रतिनिधियों को बधाई और शुभ कामनाएं अर्पित करता हूं। जैसाकि आप सब जानते हैं कि हिन्दी देश की राष्ट्रभाषा है जिसे भारत के संविधान में संघ की राजभाषा के रूप में मान्यता दी गयी है। आजादी के लड़ाई के दौरान हिन्दी सम्पूर्ण देश में संचार, सम्पर्क एवं प्रसार का माध्यम थी। महात्मा गांधी ने आजादी की लड़ाई और हिन्दी को समान्तर रखा था। उन्होंने ठीक ही कहा था कि एक प्रान्त दूसरे प्रान्त से संबंध जोड़ने के लिए एक सर्वमान्य भाषा की आवश्यकता है। ऐसी भाषा तो हिन्दी या हिन्दुस्तानी हो सकती है। महात्मा गांधी जी का हिन्दी को हिन्दुस्तानी नाम देने का एक मात्र उद्देश्य यही था। हिन्दी भाषा एक ऐसी भाषा होनी चाहिए जो मुश्किल शब्दों के बजाए आसान शब्दों का अर्थ शब्दों पर आधारित हो और उसे भारत के हर क्षेत्र में साधारण से साधारण व्यक्ति भी आसानी से समझ और बोल सके। यही उद्देश्य महात्मा गांधी जी का था। राष्ट्रभाषा हिन्दी सही मायनों में मानव से मानव को जोड़ने का ताकत और माध्यम है। इसलिए हिन्दी को राजभाषा, राष्ट्रभाषा और जनभाषा की हैसियत से महत्वपूर्ण बनाने के लिए यह बहुत जरूरी है कि सभी देशवासी और सभी कारोबारों में हिन्दी का ज्यादा से ज्यादा प्रयोग करें। सभी सरकारी और गैर-सरकारी कारोबार हिन्दी में ही होने चाहिए। साथ ही साथ अन्य भारतीय भाषाओं तथा संस्कृत भाषा की भी उन्नति करनी चाहिए। यदि हम ऐसा करने में सफल होंगे तो मेरा यह विश्वास है कि हिन्दी समस्त देशवासियों, गांधी जी के शब्दों में सर्वमान्य भाषा बन जाएगी। राजभाषा के रूप में हिन्दी के कार्यान्वयन की दिशा में राजभाषा विभाग सराहनीय प्रयास कर रहा है।

मुझे आशा और विश्वास है विभिन्न स्थानों से आए हुए प्रतिनिधिगण राजभाषा नीति पर विशेष उल्लेख, आलोचना कर सकेंगे और इसके कार्यान्वयन की दिशा में अपने-अपने क्षेत्रों में सफल प्रयास करेंगे। इससे पूर्व श्री चन्द्रधर त्रिपाठी, सचिव (राजभाषा विभाग) ने महामहिम राज्यपाल महोदय तथा माननीय उप गृह मंत्री श्री राही जी का स्वागत करते हुए कहा कि महामहिम राज्यपाल ने आज इस सम्मेलन में आने का जो कष्ट किया

उसके लिए हम उनके अत्यंत आभारी हैं। साथ ही यह उनके हिन्दी प्रेम का, राष्ट्रभाषा के प्रति आस्था का एक छोटा सा उदाहरण है। मैं समझता हूं कि इस सभागृह में उपस्थित सब लोगों को बहुत अच्छी तरह से पता होगा, किन्तु ऐसे लोग भी हो सकते हैं जिनको पूरा आभास न हो माननीय राज्यपाल का हिन्दी प्रेम जो एक सामान्य राजनेता या एक देशभक्त का होता है उससे कहीं अधिक है। उन्होंने न स्वयं हिन्दी का प्रयोग करते रहे हैं बल्कि जहां भी रहें, जिस पद को उन्होंने सुशोभित किया उसको, उस पर रहते हुए उन्होंने बाकी सबको भी हिन्दी के प्रयोग की प्रेरणा दी है। ऐसे भी उदाहरण आए हैं जबकि लोगों ने उन्हें अंग्रेजी में लिखा है और उन्होंने उसका जवाब हिन्दी में ही दिया है। मैं आप लोगों से इतना कहना चाहूंगा कि आदरणीय राही जी राजभाषा विभाग के प्रमुख प्रेरणा स्त्रोत हैं। पिछले एक वर्ष में मैंने यह देखा की राजभाषा के लिए हमारे राजनेताओं में बहुत कम लोग उस हद तक समर्पित हैं जैसे कि हमारे माननीय उप मंत्री जी! राजभाषा विभाग की, राजभाषा की उन्नति और प्रचार प्रसार के लिए वे सदा प्रयत्नशील रहे हैं और आज उनका यहां पर उपस्थित होना भी उसी का प्रमाण है। भुवनेश्वर के और भुवनेश्वर के बाहर से आए हुए वरिष्ठ अधिकारियों, नगर राजभाषा कार्यान्यवन समितियों के अध्यक्षों, सचिवों राजभाषा अधिकारियों जो कि इस पूरे पूर्व भारत से आए हुए हैं, उन सबका मैं हार्दिक स्वागत करता हूं। आप लोग यहां कल से आए हुए हैं। मैं समझता हूं कि कल जो एक कंप्यूटर प्रदर्शनी आयोजित की गई, जो कि आज भी चल रही है, उससे भी आप लोगों को यथेष्ठ जानकारी प्राप्त हुई होगी।

क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन के समापन पर संयुक्त सचिव (राजभाषा) श्री देवस्वरुप ने महामहिम ओड़िसा राज्य के राज्यपाल श्री सत्यनारायण जी, राज्य के उप गृह मंत्री श्री रामलाल राहीजी, सचिव (राजभाषा) श्री चन्द्रधर त्रिपाठी जी, अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक नाल्को श्री शैलेन्द्र कुमार जी, अध्यक्ष नराकास भुवनेश्वर श्री दास जी, सारे उपक्रमों, कार्यालयों तथा बैंकों के वरिष्ठ अधिकारी एवं प्रबंधक गण तथा हिन्दी अधिकारी वर्ग के प्रति धन्यवाद ज्ञापित करते हुए कहा कि वास्तव में यह हमारे लिए बहुत ही खुशी की बात है कि आज का यह समारोह राजभाषा का चिन्तन ऐसी सड़कों, पगडंडियों पर आगे बढ़ते हुए समापन की ओर आ रहा है जो चिन्तन और विचार हमारे कार्य के लिए न केवल मार्ग दर्शक है बल्कि उस मार्ग दर्शन में सार्थक है। राजभाषा का कार्य उसके कार्यान्वयन की नीति प्रेरणा, प्रोत्साहन और सद्भावना पर आधारित है और प्रेरणा, प्रोत्साहन, सद्भावना के लिए सबसे आवश्यक सहकारिता होती है। इस सत्र, इस सम्मेलन और जो थोड़ी-सी प्रदर्शनी यहां चल रही है इसके लिए हमें बहुत मदद बहुत सारे कार्यालयों से मिली है और इसके लिए धन्यवाद देना तो मेरा कार्य है ही लेकिन सर्वप्रथम मैं धन्यवाद देना चाहुंगा राज्यपाल महोदय को और उनकी सरकार को। राज्यपाल महोदय आपका भाषण इतना आत्मीयतापूर्ण था जितना आत्मीयतापूर्ण राष्ट्र की राष्ट्रीयता के लिए राजभाषा का मुद्दा होता है। मैं जानता हूं कि जब जिक्र अपने अनुभवों का, अपने तर्क को आगे बढ़ाने के लिए कोई महानुभाव प्रयोग करता है तो उसकी आत्मीयता और उसकी उस लक्ष्य के प्रति परायणता झलकती है और मैं आपको आश्वस्त करना चाहता हूं कि जो मैं कह रहा हूं वो बात सबने महसूस की है। इस सम्मेलन को सफल आयोजन के लिए उड़ीसा सरकार को मैं धन्यवाद देना चाहूंगा। भारत सरकर के उप गृह मंत्री को जिनकी प्रेरणा और मार्ग दर्शन से इसका आयोजन हुआ है।

नराकास बैंक, अहमदाबाद में हिंदी कार्यशाला/संगोष्ठी

अहमदाबाद नगर के सभी बैंकों के वरिष्ठ कार्यपालकों के लिए एक हिन्दी संगोष्ठी का आयोजन दिनांक 9.6.94 को बैंक आॅफ बड़ौदा के स्टाफ प्रशिक्षण महाविद्यालय में किया गया। इस संगोष्ठी को श्री चन्द्रधर त्रिपाठी, सचिव, राजभाषा विभाग गृह मंत्रालय, नई दिल्ली तथा के॰ एन॰ मेहता क्षेत्रीय उप निदेशक, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, बम्बई ने विशेष रूप से सम्बोधित किया।

कार्यशाला के उद्घाटन सत्र में विशेष अतिथि के रूप में आमंत्रित अवांशंकर नागर, अध्यक्ष गुजरात, हिन्दी अकादमी, ने अपने प्रासंगिक सम्बोधन में कहा कि हिन्दी के सम्बन्ध में एक नई जागृति विचारों के आदान-प्रदान के स्तर पर हो रही है, इसका पहला श्रेय भारत सरकार को जाता है, जो विभिन्न अवसरों पर सेमिनार प्रशिक्षण कार्यक्रम व्याख्यान, समारोह आयोजित करती है तथा दूसरा श्रेय हिन्दी प्रचार संस्थाओं को जाता है। नागर ने आगे संविधान के अनुच्छेद 351 की चर्चा की तथा हिन्दी के शब्द भंडार को अधिक से अधिक संस्कृत से लेने की सलाह प्रदान की।

इस अवसर पर बैंक नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष दुर्गेशचन्द्र सिंह जाडेजा, उप महाप्रबन्धक, देना बैंक, अंचल कार्यालय ने कहा कि हिन्दी के व्यवहार को हम जीवन-प्रक्रिया के बाहर की चीज़ नहीं मान सकते हैं यह भाषा तो हमारे संस्कारों में गहरे पैठी है। भाषण भले ही हम कभी अंग्रेजी में दे दें। उन्होंने कहा कि हिन्दी आम जन की भाषा है और बैंक भी आम जनता के आर्थिक उत्थान हेतु ही कार्य कर रहे हैं, अतः हमें जनभाषा हिन्दी को अपनाना ही होगा।

बैंक आॅफ बड़ौदा स्टाफ महाविद्यालय के प्राचार्य एस॰वी॰ नारायणन ने कहा कि मेरे लिए सचमुच यह प्रसन्नता की बात है कि यह आयोजन हमारे बैंक के इस महाविद्यालय में हो रहा है। श्री नारायणन ने कहा कि राजभाषा नीति के कार्यान्वयन में कार्यपालकों की भूमिका महत्वपूर्ण है कार्यपालक अपने द्वारा तथा अपने अधीन स्टाफ सदस्यों से निपटाए वाले दोनों ही प्रकार के कार्यों में अच्छा तालमेल रखते हुए हि प्रयोग बैंकों में बढ़ा सकते हैं।

कार्यशाला के विशेष सम्बोधन के रूप में चन्द्रधर त्रिपाठी स मंत्रालय ने अपने वक्तव्य में कहा कि हिन्दी के विषय में अनकहा रह गया है इसलिए इस सम्बन्ध में मैं कोई मौलिक कर रहा हूं किन्तु भाषा के संस्कार की बात ऐसी है जिसे कभी लेना अच्छा है। श्री त्रिपाठी हिन्दी भाषा के जनाधार को विभि से स्पष्ट करते हुए बताया कि हिन्दी को राजभाषा के रूप में गया है। आगे उन्होंने भारत की भावनात्मक एकता और तथा भाषा का प्रश्न मन की गूढ़तम भावनाओं से जुड़े हो बातें प्रस्तुत की। बैंकों में हिन्दी के कार्यान्वयन के लिए वरिष्ठ कार्यपालकों में सही आस्था और दृष्टिकोण को अपनाने क दी और कहा कि हिन्दी का सवाल केवल एक बातचीत तक ही सी नहीं है वह राष्ट्रीयता का सवाल है। त्रिपाठी ने पूरे आवेश से सारांश पड़ा कि इस देश में कोई भाषा बढ़ रही है तो वह अंग्रेजी ही है न कि गुजराती हिन्दी

अथवा अन्य भारतीय भाषाएं। सचिव महोदय ने विनम्र भाव से कार्यपालकों को हिन्दी के काम के प्रति वीतरागी होने से बचने का सुझाव दिया। राजभाषा कार्यान्वयन के आदेशों को त्रिपाठी ने अपने मतानुसार कहा कि इन्हें मात्र सरकारी आदेश में न समझ कर राष्ट्रीय आदेश समझें।

त्रिपाठी ने कहा कि हिन्दी के प्रयोग को अब मात्र प्रतीकात्मक नहीं रहने दें अपितु अधिक से अधिक वास्तविक व ठोस रूप प्रदान करें। बैंकों में हिन्दी के कार्य की प्रगति दिखाने के लिए आंकड़ों की दौड़ पर बल न देकर भाषा के प्रति निष्ठा का भाव बढ़ाया जाए। सचिव महोदय ने राजभाषा के कार्य में दण्ड की व्यवस्था के सम्बन्ध में बोलते हुए कहा कि इस दिशा में दण्ड की व्यवस्था का प्रावधान करना हमेशा कठिन प्रश्न रहेगा मगर जान बूझकर यदि कोई स्टाफ सदस्य कार्यान्वयन सम्बन्धी आदेशों की अवहेलना करता है तो उसे वरिष्ठ कार्यपालक के आदेश की अवज्ञा मानकर उसके अनुसार जैसी भी अनुशासनात्मक कार्रवाई निश्चित की गई है, उसका प्रयोग तो किया ही जा सकता है। अन्ततः त्रिपाठी ने विनम्रतापूर्वक सुझाया कि राजभाषा के कार्य को गले पड़ी चीज़ न समझें अपितु इसके प्रति आस्था और निष्ठा से काम लें।

स्टेट बैंक आॅफ सौराष्ट्र ने एक प्रतियोगिता का आयोजन किया जिस में राजभाषा नीति तथा इसके संवेधानिक स्थिति पर प्रश्न पूछे गए। इस प्रतियोगिता में कार्यशाला में उपस्थित सभी बैंकों के वरिष्ठ कार्यपालकों ने भाग लिया। इस प्रतियोगिता के प्रथम स्थान पर दीपक पटेल, देना बैंक, दूसरे स्थान पर पी०डी० कापड़िया, सिडबी, मनोरंजन बैंक आॅफ बड़ौदा, तीसरे स्थान पर कुणाल सिंह, स्टेट बैंक आॅफ पटियाला। विशेष पुरस्कार नितिन बी० व्यास, इण्डियन ओवरसीज़ बैंक तथा दूसरा विशेष पुरस्कार पी० जी० गुजारिया, भारतीय औद्योगिक विकास बैंक ने प्राप्त किया। विजेताओं को सचिव महोदय के करकमलों से सभी ट्राफियां वितरित की गई।

कार्यक्रम के दूसरे भाग के रूप में नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक आयोजित की गई। इस बैठक का संचालन शिवशंकर वर्मा, देना बैंक, अंचल कार्यालय, अहमदाबाद ने किया तथा बैंकों में हिन्दी कार्य की प्रगति तथा योगदान की समीक्षा के० एन० मेहता उप निदेशक, गृह मंत्रालय, बम्बई ने की। बैठक के अंत में अनूपचन्द्र भाषाण मुख्य प्रबन्धक देना बैंक, बम्बई धन्यवाद ज्ञापन प्रस्तुत किया।

आन्ध्रा बैंक आंचलिक कार्यालय, हैदराबाद में हिंदी सम्मेलन

आन्ध्रा बैंक, आंचलिक कार्यालय, हैदराबाद ने संपर्क अधिकारी/लिपिक (हिन्दी) के लिए दि० 09.02.94 को एक दिवसीय राजभाषा सम्मेलन का आयोजन किया। इस अवसर पर श्री शेख जाफर साहेब, राजभाषा अधिकारी ने अपने वक्तव्य में कहा कि—शाखा स्तर पर राजभाषा हिन्दी के सफल कार्यान्वयन के लिए हिन्दी में कार्यसाधक ज्ञान/प्रवीणता प्राप्त अधिकारियों और लिपिकों को संपर्क अधिकारी/लिपिक के रूप में नामित किया जाता है। वर्ष में एक बार संपर्क अधिकारियों और लिपिकों के लिए एक दिवसीय राजभाषा सम्मेलन आयोजित किया जाता है और राजभाषा कार्यान्वयन की समीक्षा शाखावार की जाती है और राजभाषा के बेहतर कार्यान्वयन के लिए अमूल्य सुझाव भी दिये जाते हैं।

मुख्य अतिथि श्री जी० वेंकटेशम, वरिष्ठ प्रबन्धक (यो व वि), आंचलिक कार्यालय, हैदराबाद ने कहा कि हिन्दी सिर्फ भारत में ही नहीं बल्कि विश्व के कई देशों में बोली जाती है। उन्होंने सभी कर्मचारियों से अनुरोध किया कि वे अपनी अपनी शाखाओं में हिन्दी का ज्यादा से ज्यादा प्रयोग करें।

हिंदुस्तान पेपर कॉरपोरेशन लि० कलकत्ता में "अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन"

हिन्दुस्तान पेपर कॉरपोरेशन के अध्यक्ष सह प्रबन्ध निदेशक श्री बी०टी० श्रीधरन की अध्यक्षता में नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उपक्रम) कलकत्ता द्वारा 24 तथा 25 फरवरी 94 को अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन का आयोजन किया गया। महामहिम राज्यपाल श्री के०वी० रघुनाथ रेड्डी ने इस ऐतिहासिक सम्मेलन के उद्घाटन हेतु "दीप" प्रज्वलित किया।

भारत सरकार के गृह मंत्रालय में राजभाषा विभाग के संयुक्त सचिव श्री देव स्वरूप की अध्यक्षता में हुए उद्घाटन समारोह में दर्शकों और प्रतिनिधियों का स्वागत करते हुए समिति के अध्यक्ष श्री बी० टी० श्रीधरन ने कहा कि यह समिति और राजभाषा विभाग इस सम्मेलन में आये सुझावों का पूरा लाभ उठायेंगे। आपने अत्यन्त व्यस्तता के बावजूद भले ही अल्प हो महामहिम राज्यपाल द्वारा समय दिये जाने का भी स्वागत किया और आभार बताया।

इस अवसर पर "अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन" की ओर से महाकवि शेषेन्द्र शर्मा को शाल ओढ़ाकर एक प्रशस्ति पत्र तथा "राष्ट्रीय सांस्कृतिक एकता पुरस्कार" प्रदान किया। प्रशस्ति पत्र में भी शेषेन्द्र शर्मा को "राष्ट्रेन्दु" की संज्ञा से सम्बोधित किया गया है। इस संज्ञा से सुशोभित और सम्मानित श्री शेषेन्द्र भारत के प्रथम व्यक्ति हैं।

अपने सम्मान के प्रति आभार व्यक्त करते हुए राष्ट्रेन्दु शेषेन्द्र ने कहा कि कवि, कवि होता है वह किसी देश, भाषा अथवा काल का नहीं होता, इन सब से ऊपर, सबसे परे होता है। आपने मुझे नहीं सम्पूर्ण कविता और सम्पूर्ण राष्ट्र को सम्मानित किया है।

इसी अवसर पर श्री मुरलीधर सर्राफ को किसी राजभाषा सम्बन्धी पद पर न होते हुए भी केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद के माध्यम् से हिन्दी को राष्ट्र की राजभाषा के रूप में कार्यान्वित करने हेतु तथा सर्वश्री ज्योति लाल खत्री, महेन्द्र प्रताप राय और देव नारायण तिवारी को विविध संस्थानों में हिन्दी अधिकारी के पद पर आसीन रहते हुए हिन्दी की सेवा करने हेतु 'राजभाषा सम्मान" प्रदान किया गया।

महामहिम राज्यपाल श्री के० वी० रघुनाथ रेड्डी द्वारा अपने उद्घाटन भाषण में संविधान में राजभाषा सम्बन्धी उपबन्धों का उल्लेख करते हुए सरकार द्वारा हिन्दी के विकास और कार्यान्वयन में पूरा सहयोग देने की बात कही गई।

संयुक्त सचिव श्री देव स्वरूप ने अपने अध्यक्षीय भाषण में समस्त प्रतिभागियों को इन बाधाओं के बावजूद उपस्थित होने के लिए धन्यवाद

ज्ञापित किया और आश्वासन दिया कि यहां आये प्रस्तावों पर राजभाषा विभाग गंभीरता से विचार करेगा।

समापन समारोह

सांसद श्री शंकर दयाल सिंह ने अपने समापन भाषण में कहा कि "संसद में 10—12 सांसद हिन्दी का विरोध करते हैं किन्तु दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा से 60 हजार छात्रों ने हिन्दी के प्रमाण पत्र लिये। अब इन दस लोगों की बात मानी जाये अथवा साठ हजार की। जब मैं संसद में यह बता रहा था तो हिन्दी का हिमायती मैं अकेला ही था।" आपने कहा कि चूड़ीवाल जी का कथन अर्द्ध सत्य है। सरकार द्वारा क्षमा मांगे जाने का सवाल ही नहीं उठा। हिन्दी के विकास में कलकत्ता और बंगाल की भूमिका पर प्रकाश डालते हुए श्री सिंह ने श्री बी० टी० श्रीधरन के प्रयासों की भूरि-भूरि प्रशंसा की। आपने "राष्ट्रेन्दु" शेषेन्द्र शर्मा को सम्मानित करने की सराहना करते हुए नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उपक्रम) कलकत्ता के साथ-साथ अन्य नराकासों को भी पूरा सहयोग देने का आश्वासन दिया।

हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड, जिंक लेड स्मेल्टर, विशाखापटनम में हिन्दी संगोष्ठी

विशाखापटनम इस्पात संयंत्र, विशाखापटनम द्वारा दिनांक 12.3.1994 को "औद्योगिक क्षेत्र में अनुशासन" नामक विषय पर एक अखिल भारतीय हिन्दी संगोष्ठी आयोजित की। संगोष्ठी में श्री के० जाय कुट्टी, वरिष्ठ प्रशासन अधिकारी एवं श्री मोहम्मद शरीफ, वरिष्ठ आशुलिपिक ने अपने आलेख प्रस्तुत किए।

हिन्दी प्रतियोगिताएं

हिन्दी सुलेख प्रतियोगिता
अहिन्दी भाषी वर्ग

प्रथमः मोहम्मद शरीफ, वरिष्ठ आशुलिपिक, द्वितीयः 1. श्री के डेविड राजू, प्रारूपकार, 2. श्रीमती पी० नागमणी, सहायक, तृतीयः श्री के रघुरामन, आशुलिपिक,

हिन्दी भाषा वर्ग:

प्रथमः श्री विद्या विनोद नंदावत, वरिष्ठ लेखा अधिकारी

श्रुतलेख प्रतियोगिता:
केवल अहिन्दीभाषा वर्ग:

प्रथमः श्रीमती डी० कमला, वरिष्ठ आशुलिपिक, द्वितीयः श्री के० सत्यनारायण, सहायक फोरमैन, लेड संयंत्र, तृतीयः श्री सी वी कृष्णा राव, जिंक आक्साइड संयंत्र

हिन्दी टंकण परीक्षा परिणाम

हिन्दी शिक्षण योजना, नई दिल्ली द्वारा विशाखापटट्नम केन्द्र में आयोजित हिन्दी टंकण परीक्षा में श्री एस० ए० करीम, वरिष्ठ सहायक, विद्युत विभाग ने 94% अंक प्राप्त कर उत्कृष्ट श्रेणी प्राप्त की।

भारतीय पेट्रोलियम संस्थान, देहरादून कवि सम्मेलन, झलकियां

संस्थान में 8 मई, 1994 को पद्म श्री गोपाल दास "नीरज" एवं अन्य गणमान्य कवियों के सान्निध्य में एक कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया। सर्वप्रथम डा० गिरीश चन्द्र मिश्र, राजभाषा अधिकारी ने पद्म श्री नीरज व अन्य कवियों, निदेशक महोदय, अतिथियों व श्रोताओं का स्वागत किया। डा० मिश्र द्वारा अपने अध्ययन काल को याद करते हुए नीरज जी के साथ गुजारा हुआ समय व भाव-भीनी यादों से सब को अवगत करवाया। तत्पश्चात निदेशक, डा० टी० एस० आर० प्रसाद राव द्वारा अंग वस्त्र भेंट कर पद्मश्री नीरज का अभिनन्दन किया गया। तदुपरान्त डा० गिरीज शंकर त्रिवेदी द्वारा कवि सम्मेलन का संचालन बड़े भावपूर्ण ढंग से किया गया। डा० त्रिवेदी ने इस अवसर पर बोलते हुए कहा कि जहां विज्ञान और साहित्य कंधे से कंधा मिलाकर चलते हैं, वह संस्थान अवश्य ही उन्नति की राह पर अग्रसर होता है। इस प्रकार कवि सम्मेलन की कार्यवाही आरम्भ हुई।

मलेरिया अनुसंधान केन्द्र, विकास मार्ग, दिल्ली में "मलेरिया: समस्या एवं समाधान" पर वैज्ञानिक संगोष्ठी

भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद के संस्थान "मलेरिया अनुसंधान केन्द्र" दिनांक 7 जून 1994 को हिन्दी में "मलेरिया—समस्या एवं समाधान" विषय पर एक वैज्ञानिक संगोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें राजभाषा विभाग के निदेशक (अनुसंधान) श्री राजकुमार सैनी ने विशेष अतिथि के रूप में भाग लिया। संगोष्ठी में वैज्ञानिकों एवं विशेषज्ञों ने मलेरिया पर चल रहे अनुसंधान के विभिन्न पक्षों पर प्रकाश डाला। केन्द्र के वैज्ञानिकों ने मलेरिया नियंत्रण की कीटनाशी रहित जैव पर्यावरणीय पद्धति, मच्छरों की संरचना एवं पारिस्थितिकी, कीटनाशियों के प्रति मच्छरों में विकसित प्रतिरोध क्षमता, मलेरिया—रोधी औषधि के प्रति मलेरिया परजीवियों का प्रतिरोध (रेजिस्टेन्स), मलेरिया वैक्सीन निर्माण में हुई प्रगति एवं उपस्थित कठिनाइयों, फैल्सीपैरम अथवा मस्तिष्क मलेरिया की घातकता आदि विषयों पर हुए शोध-कार्य का दृश्य-श्रव्य माध्यमों की सहायता से हिन्दी में अत्यन्त स्पष्ट और सुचारू रूप से प्रस्तुत किया। संगोष्ठी की अध्यक्षता एवं संचालन केन्द्र के निदेशक प्रख्यात वैज्ञानिक पद्म-श्री डा० विनोद प्रकाश शर्मा ने की।

राजभाषा विभाग में निदेशक श्री राजकुमार सैनी ने अपने भाषण में कहा कि विदेशी भाषा के माध्यम से विज्ञान का अध्ययन मौलिक चिन्तन में बाधा पहुंचाता है। वास्तव में मौलिक चिन्तन मातृभाषा में ही सहजता से हो सकता है। सदियों से अंग्रेजी पर अधिकार प्राप्त करने के प्रयासों के बावजूद भी बहुत कम लोग उसमें मौलिक चिन्तन करने में सफल हुए हैं। श्री सैनी ने कहा कि जब तक इंगलैण्ड में फ्रान्सीसी भाषा का वर्चस्व था, तब तक वहां पर विशेष मौलिक कार्य नहीं हो पाया। संगोष्ठी का संचालन डा० सुरेन्द्र कुमार शर्मा, परामर्शक (हिंदी) ने किया।

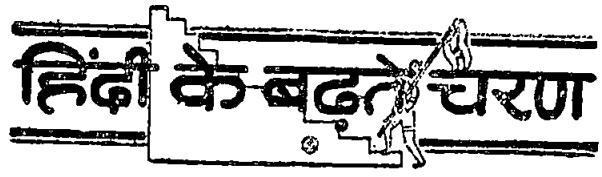

केन्द्रीय कार्यक्रम निर्माण केन्द्र, दूरदर्शन, नई दिल्ली

हिन्दी सप्ताह के दौरान सरकारी कामकाज में विभिन्न कार्यक्रमों के आयोजन के साथ-साथ कार्यालय के अनुभागों/विभागों में हिन्दी के प्रयोग की स्थिति का निरीक्षण किया गया। इस परिप्रेक्ष्य में कार्यालय के कुल पन्द्रह अनुभागों/विभागों की फाइलों, रजिस्टरों आदि में हिन्दी भाषा के प्रयोग की स्थिति देखी गई। विवरण निम्नवत् है:—

समन्वय अनुभाग:—पहचान कार्डों में हिन्दी का प्रयोग आरम्भ कर दिया गया है। प्रायः प्रयोग में आने वाले प्रपत्र अंग्रेजी भाषा में ही हैं। यह आश्वासन दिया कि वह सभी प्रपत्रों के हिन्दी पाठ व प्रशासन के माध्यम से तैयार कराकर प्रयोग में लाया जाएगा।

पुस्तकालय:—पुस्तकालय में हिन्दी की अपेक्षा अंग्रेजी में भाषा की पुस्तकें तथा पत्र-पत्रिकाएं बहुत अधिक मंगवाई जा रही हैं। उनकी तुलना में हिन्दी भाषा की पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं की संख्या नगण्य सी प्रतीत होती है। राजभाषा विभाग द्वारा जारी किए गए आदेशों के अनुसार किसी भी विभागीय पुस्तकालय में जितने बजट की पुस्तकें पत्र-पत्रिकाएं खरीदी जाती हैं उनमें से 50 प्रतिशत बजट हिन्दी भाषा की पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं की खरीद पर व्यय किया जाना चाहिए। इस संबंध में निदेशक महोदय अपेक्षित कार्यवाही की कृपा करें।

लेखा अनुभाग:—प्रायः सभी कार्यों में हिन्दी का प्रयोग आरम्भ कर दिया गया है, कुछ प्रपत्र अंग्रेजी में हैं जिनके हिन्दी अनुवाद की व्यवस्था करायी जानी अपेक्षित है। तत्पश्चात यह अनुभाग पूर्णतः हिन्दी का प्रयोग करने वाला अनुभाग बन जाएगा।

प्रशासन अनुभाग:—टिप्पण और आलेखन में 90 प्रतिशत तक हिन्दी भाषा का प्रयोग दिखाई पड़ा। हिन्दी अधिकारी और अनुवादक का पद रिक्त होने के कारण यह बतलाया गया कि अनुवाद न हो पाने की वजह से प्रायः 80 प्रतिशत प्रपत्र अभी भी अंग्रेजी में ही प्रयुक्त हो रहे हैं। सुझाव है कि इस प्रकार के सभी प्रपत्रों आदि के एक साथ कोई अन्य व्यवस्था करके अनुवाद करा दिया जाए और उन्हें प्रयोग में लाया जाए। उस दिशा में यह अनुभाग यदि केन्द्र निदेशक कुछ ऐसा निर्णय लें तो राजभाषा विभाग के आदेशों के अनुसार चल-वैजयन्ती का हकदार बन सकता है।

प्रस्तोता अनुभाग:—कुछ अनुभागों का निरीक्षण किया गया जिनमें कार्यक्रम निष्पादक डा० रेखा व्यास का कार्य हिन्दी भाषा के प्रयोग के क्षेत्र में अद्वितीय मिला। अन्य अनुभागों में प्रयोग की मात्रा नगण्य सी है। सभी प्रस्तुतकर्ताओं को अपने-अपने अनुभाग में टिप्पण-आलेखन का कार्य हिन्दी में करने के लिए प्रेरित और प्रोत्साहित किया जाए। दो-तीन प्रस्तुतकर्ताओं के ही कार्य का निरीक्षण किया जा सका शेष से निरीक्षण के समय भेंट न हो सकी।

छायांकन अनुभाग:—अद्यलेक्षा प्रपत्र द्विभाषी रूप में दिखाई पड़ा। बताया गया कि टिप्पण आलेखन का कार्य यहां नहीं होता। इस अनुभाग के वीडियो एग्जी० श्री वाई०एन० जौहरी का कार्य प्रशंसनीय है उन्हें प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और उनको अपने अनुभाग में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए स्वयः नेतृत्व करना चाहिए।

सुरक्षा अनुभाग:—हिन्दी का कार्य आरम्भ कर दिया गया है। सभी फाइलों और रजिस्टरों में हिन्दी का प्रयोग देखने को मिला। कुछ सुरक्षा कर्मी प्रोत्साहन के हकदार हैं।

संपदा और दृश्यसज्जा अनुभाग:—फाइलों पर अच्छे टिप्पण और आलेखन देखने को मिले। विशेष रूप से प्रदीप अग्निहोत्री और अनुपम यादव और सुरेन्द्र शर्मा का कार्य उत्कृष्ट कोटि का था।

इसके अतिरिक्त केयर टेकर, कर्तव्य कक्ष, स्वागत कक्ष, परिवहन अनुभाग में भी हिन्दी के कार्य का निरीक्षण किया गया। इन कक्षों में लगभग 40 प्रतिशत कार्य हिन्दी में हो रहा है। सम्बन्धित कर्मचारियों को प्रयास करना चाहिए कि वे अधिकाधिक हिन्दी का प्रयोग करें।

अभियांत्रिकी अनुभाग में हिन्दी का प्रयोग प्रोत्साहन चाहता है। श्री सी० के० जैन, सहायक केन्द्र अभियंता ने आश्वासन दिया कि वे स्वयं नेतृत्व कर सभी को प्रोत्साहित करेंगे। यदि प्रयास में शिथिलता न आयी तो कार्यालय के सभी अधिकारी और कर्मचारी राजभाषा विभाग द्वारा प्रकाशित वार्षिक कार्यक्रम के लक्ष्यों को शीघ्र प्राप्त कर लेंगे। इसी प्रयोजन के लिए 12 सितम्बर 94 को प्रशासन शब्दावली, वार्षिक कार्यक्रम, हिन्दी में प्रयोग संबंधी आदेशों-नियमों के संकलन, संसदीय समिति की रपट तथा राजभाषा विभाग द्वारा प्रकाशित राजभाषा भारती और राजभाषा पुष्पमाला की प्रतियां सभी को उपलब्ध करा दी गई थी।

हिन्दी दिवस के अवसर पर केन्द्रीय कार्यक्रम निर्माण केन्द्र, दूरदर्शन, नई दिल्ली में दिनांक 12.9.94 से 17.9.94 तक "हिन्दी सप्ताह" का आयोजन किया गया। इस सप्ताह के दौरान आयोजित हिन्दी निबंध, टिप्पण आलेखन, टंकण आदि प्रतियोगिताओं में केन्द्र के 31 सदस्यों ने भाग लिया तथा विभिन्न हिन्दी कार्यशालाओं में 41 और सदस्यों ने प्रशिक्षण प्राप्त किया।

दिनांक 12.9.94 को केन्द्र के निदेशक श्री राजेश प्रसाद माथुर ने सभी सदस्यों को संबोधित करते हुए हिन्दी भाषा को संवैधानिक स्थिति, राजभाषा के रूप में इसकी उपादेयता आदि की ओर संकेत करते हुए सरकारी कामकाज में उसका प्रयोग करने के लिए प्रेरित किया, 14 सितम्बर को लब्ध प्रतिष्ठ विद्वान श्री बालस्वरूप राही ने हिन्दी की महत्ता पर प्रकाश डाला।

समापन समारोह के अवसर पर 27 सितमबर 94 को हिन्दी वाक् प्रतियोगिता का भी आयोजन किया गया, जिसके निर्णायक श्री सुधीश और सुश्री राज बुद्धिराजा के विचारोत्तेजक उद्‌बोधनों ने सभी उपस्थिति सदस्यों को मंत्रमुग्ध कर दिया।

विभिन्न प्रतियोगिताओं के परिणाम निम्नवत रहे:—

हिन्दी निबंध, टिप्पण और आलेखन एवं वाक् व टंकण प्रतियोगिताओं का आयोजन। हिन्दी निबंध (अहिन्दी भाषी वर्ग) डॉ रेखा व्यास-प्रथम, सत्यबीर यादव-द्वितीय, नरेन्द्र सिंह रावत-तृतीय। (अहिन्दी भाषीवर्ग) श्री एस०के०लाहिड़ी-प्रथम, श्री अनिल कुमार पीके-द्वितीय व शेखर चक्रवर्ती-तृतीय रहे। हिन्दी टिप्पणन एवं आलेखन प्रतियोगिता में डॉ० रेखा व्यास-प्रथम, शेखर चक्रवर्ती-द्वितीय व चन्द्र बल्लभ-तृतीय रहे।

हिन्दी टंकण प्रतियोगिता में शिव शंकर वर्मा-प्रथम, सुरेश कुमार-द्वितीय एवं कु० कमलेश-तृतीय रहीं। वाक् प्रतियोगिता में डॉ० रेखा व्यास-प्रथम विपुल कुलश्रेष्ठ-द्वितीय व एस०के० लाहिड़ी-तृतीय रहे।

अंत में निदेशक ने सभी आगत अतिथियों के प्रति आभार व्यक्त करते हुए केन्द्र के सभी सदस्यों से हिन्दी सप्ताह को अपने कामकाज में हिन्दी वर्ष बनाकर प्रसारण माध्यम को एक नई दिशा प्रदान करने की प्रेरणा के साथ समापन समारोह को सम्पन्न घोषित किया गया।

हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड में कम्प्यूटरों में राजभाषा का प्रयोग

सन् 1980 में करीब 2,000 कर्मचारी/कार्यपालकों के माह वार वेतन पर्चियां मैनुअल ढंग से तैयार करने के लिए कम से कम 5 व 6 सहायकों की जरूरत होती थी। प्रोजेक्ट रिपोर्ट, प्रशासनिक परियोजनाएं एवं अंतिम लेखा रिपोर्ट आदि तैयार करने के लिए बिना कम्प्यूटर के एक तकनीकी सहायक की नियुक्ति की गई। इस माहौल से गुजरने वाली कम्प्यूटर की स्थिति आज हमारी इकाई में उच्च दशा की प्राप्ति कर एक सम्पूर्ण कम्प्यूटर संकुल के रूप में विकसित हुआ है। अर्थात् आज प्रत्येक विभाग में पीसी/एक्सटी कम्प्यूटर होने के साथ साथ प्रयोगशाला प्रक्रियाएं/संयंत्र प्रौद्योगिकी तथा अभिकल्पन एवं तथा यहां तक कि विपणन रिपोर्ट कम्प्यूटर द्वारा जारी हो रही है। इन कम्प्यूटर की आवश्यकताओं को देखते हुए ए०सी०ई०, बंबई एवं अपेल इंडिया, नई दिल्ली के द्वारा प्रबंधन ने समस्त संबंधित सहायकों व कार्यपालकों को पूर्णकालिक 21 दिवसीय कम्प्यूटर प्रशिक्षण प्रदान किया है। कम्प्यूटर की अधिक उपयोगिता को दृष्टिगत करते हुए हमारे राजभाषा अनुभाग के उपयोगार्थ सन् 1989 में सबसे पहले साफ्टेक द्वारा विकसित किया गया "अक्षर" नामक पैकेज खरीदा गया। बाद में हमारे द्वारा "अक्षर" पैकेज के माध्यम से राजभाषा के कार्यान्वयन में की गई प्रगति को दृष्टिगत करते हुए हाल ही में एक और पैकेज "देवबेस" भी खरीदा गया है। उपरोक्त द्विभाषिक कम्प्यूटर पैकेजों द्वारा कार्मिक व प्रशासन विभाग, लेखा विभाग, क्रय व विक्रय विभाग, आदि में कई रिपोर्टें, नेमी प्रकृति के दस्तावेज आदि द्विभाषा में तैयार किये जा रहे हैं। इन कार्यों का संक्षिप्त ब्यौरा नीचे वर्णित है:

कार्मिक व प्रशासन विभाग में राजभाषा का कार्य

कार्मिक व प्रशासन विभाग में ज्यादातर काम अर्थात् विभिन्न विषयों के परिपत्र, आदेश, निविदा सूचनाएं, प्रधान कार्यालय को भेजे जाने वाले भविष्य निधि से संबंधित पत्र, ऋण मंजूरी व अग्रेषण पत्र आदि नेमी प्रकृति के होते हैं। इन सब दस्तावेजों को द्विभाषिक रूप में तैयार कर संबंधित सहायकों को फ्लापी में कापी कर दिया गया है। इससे आज प्रशासन विभाग का लगभग 85% पत्राचार हिन्दी में हो रहा है। साथ ही सेवा रिकार्ड, सेवा निवृत रिकार्ड, कर्मचारी वैयक्तिक सूचना, जिंक कालोनी में निवास करने वाले कर्मचारियों से संबंधित ब्यौरे आदि हिन्दी में भी "देवबेस" में तैयार करने की कोशिश जारी है।

यही नहीं प्रशासन विभाग में हिन्दी टंकण में प्रशिक्षित सहायकों द्वारा मैनुअल टंकण मशीन (Manual Typewriter) पर पत्रादि द्विभाषा में टाइप करवाने के लिए कम्प्यूटर के "अक्षर" पैकेज द्वारा द्विभाषा में "पत्राचार संदर्भिका" नामक एक पुस्तिका तैयार की गई है। इसमें प्रशासन विभाग के समस्त दस्तावेज जैसे परिपत्र आदेश, अग्रेषण पत्र आदि समाविष्ट कर उनकी विशेष विषय सूची तैयार की गई हैं। इस विषय सूची के माध्यम से प्रत्येक टंकक हिन्दी विभाग की सहायता के बिना अपने आप हिन्दी पाठ का टंकण कर सकता है। इसके अतिरिक्त द्विभाषिक मुद्रण सरलता से होने हेतु इकाई से समस्त फार्मों को कम्प्यूटर द्वारा द्विभाषा में तैयार किया गया है।

वित्त व लेखा विभाग में हिन्दी कार्य

वित्त व लेखा विभाग में कई अग्रेषण पत्र चैक अग्रेषण पत्र (Cheque Forwarding Memo.) लागत रिपोर्ट, नामे व जमा संज्ञापन आदि द्विभाषा में जारी किये जा रहे हैं। इन फार्मेटों का द्विभाषी रूप "अक्षर" पैकेज द्वारा एक बार तैयार कर कम्प्यूटर की मुख्य मेमरी में रखा गया हैं। इससे प्रत्येक संबंधित सहायक इसका प्रयोग कर सकता है।

भंडार, क्रय व विक्रय विभागों में हिन्दी काम

इन विभागों में दावा पत्र, बीमा पत्र, निविदा पत्र, निविदा स्वीकृति पत्र, स्टाक स्थिति पत्र, विपणन रिपोर्ट जो कि नेमी प्रकृति के हैं, भी कम्प्यूटर द्वारा द्विभाषा में तैयार किये गये हैं। इस विभाग में सहायक मेल मर्ज की सहायता से पहले निविदा भेजे जाने वाले पार्टियों के नाम मेलिंग "Mailing" सूची में "नान डाकुमेंट मिसिलें" के रूप में तैयार कर एक ही दस्तावेज द्वारा सब को भेज देता है।

प्रक्रिया विभाग

प्रक्रिया विभागों में भी ऊपर वर्णित अनुसार कई काम किये गये हैं।

गत 4 साल से हिन्दी अनुभाग का सारा काम कम्प्यूटरों में किया जा रहा है। कम्प्यूटरों में हिन्दी प्रयोग की वजह से इकाई के कुल हिन्दी पत्राचार जोकि सन् 1989 तक लगभग 10.5 प्रतिशत था अब एकदम बढ़कर 56 प्रतिशत पत्राचार हिन्दी में हो रहा है। यह श्रेय केवल कम्प्यूटर को जाता है। साथ ही दैनिक पत्रों के प्रेषण आंकड़ों की रिपोर्ट भी कम्प्यूटरीकृत है, जिससे दैनिक हिन्दी पत्राचार की प्रगति का रोजवार परिचय मिलता है। साथ ही विशाखापट्टणम स्थित कई केन्द्रीय सरकारी कार्यालयों/उपक्रमों की सहायकों को कम्प्यूटरों में हिन्दी के प्रयोग संबंधी प्रशिक्षण भी समय समय पर हमारे हिन्दी अनुभाग द्वारा दिया जा रहा है।

इस तरह समग्र रूप में यह व्याख्या की जा सकती है कि आज जिंक स्मेल्टर में कम्प्यूटर के बिना हिन्दी का कार्यान्वयन एक दम कम हो जाने की संभावना है।

निष्कर्ष:

हम यह कह सकते हैं कि आधुनिक युग का समस्त तकनीकी और वैज्ञानिक ज्ञान कम्प्यूटर पर निर्भर हो गया है। अतः कम्प्यूटर के समस्त पैकेजों में धीरे धीरे हिन्दी का प्रयोग करने पर समस्त तकनीकी और वैज्ञानिक कार्यों में हिन्दी का प्रयोग स्वतः ही होने लगेगा। इस कठिन लेकिन अत्यन्त उपयोगी लक्ष्य की प्राप्ति हेतु भारत सरकार के राजभाषा विभाग के प्रोत्साहन के अनुसार वैज्ञानिक एवं राजभाषा हिन्दी के कार्यान्वयन में रत सज्जन मिलकर लगन पूर्वक लग जाएं तो मंजिल कोई अधिक दूर नहीं।

भारतीय कपास निगम लिमिटेड में राजभाषा हिंदी का प्रयोग

हिंदुस्तान पेट्रोलियम, बंबई की अध्यक्षता में आयोजित होने वाली नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों में पिछले 3 वर्षों से भारतीय कपास निगम को अपने दिन-प्रति-दिन कार्य में हिंदी का अधिकांश प्रयोग करने के कारण राजभाषा शील्ड से राष्ट्रीय स्तर पर और नगर राजभाषा समिति के स्तर पर भी सम्मानित किया गया है। हिंदी का प्रयोग निगम ने किस प्रकार अपने प्रशासनिक और व्यावहारिक क्षेत्र में मुख्यालय और शाखा कार्यालयों के साथ-साथ बढ़ाया है, इसे व्यक्तिगत रूप से देखने की इच्छा टॉलिक के सदस्यों ने बार-बार संयोजक के सामने व्यक्त की थी। संयोजक, टॉलिक ने भारतीय कपास निगम और टॉलिक के वरिष्ठ अधिकारियों से बातचीतें के बाद 25 मार्च, 1994 दोपहर 3.00 बजे का समय निश्चित किया।

25 मार्च 1994 दोपहर 3.00 बजे भारतीय कपास निगम के परिसर में टॉलिक की सदस्य-सचिव, सुश्री सरोज जैन, प्रबंधक (हिंदी) के साथ 28 उपक्रमों के 35 प्रतिनिधि उपस्थित हुए। इस कार्यक्रम के आरंभ में डॉ रीता कुमार, प्रबंधक (कार्मिक/हिंदी) द्वारा उनका स्वागत किया गया और संक्षेप में उन्हें भारतीय कपास निगम में हिंदी के व्यावहारिक प्रयोग की जानकारी देते हुए कुछ नमूने भी प्रस्तुत किये गये। इस अवसर पर निगम की ओर से श्री मा०म०जैन, प्रभारी निदेशक (वित्त) ने अध्यक्षता की और उपस्थित प्रतिनिधियों के प्रश्नों और समस्याओं का समाधान भी किया। उन्होंने हिंदी के व्यावहारिक पक्ष में आनेवाली कठिनाइयों के साथ-साथ निगम द्वारा उनके बीच से समाधान रास्ता ढूंढने के तरीकों पर भी प्रकाश डाला इसके बाद उपस्थित प्रतिनिधियों को 3 समूहों में बांटते हुए कुछ मुख्य अनुभागों जैसे क्रय अनुभाग, लेखा अनुभाग, सतर्कता अनुभाग और कंप्यूटर अनुभाग में व्यक्तिगत रूप से निरीक्षण करने और स्वयं देखने के लिए आमंत्रित किया गया। इस अवसर पर अनुभाग प्रभारियों ने प्रतिनिधियों को विशेष रूप से जानकारी दी। कार्यक्रम के अंत में श्री मोहन जोशी, निदेशक (क्रय-विक्रय) ने निगम की ओर से सभी प्रतिनिधियों और टॉलिक के सदस्य-सचिव का स्वागत करते हुए उन्हें निगम में भारत सरकार की राजभाषा नीति के कार्यान्वयन की दिशा में निरंतर किये जा रहे प्रयासों की जानकारी दी और उपस्थित सदस्यों के प्रति निगम की ओर से आभार व्यक्त किया।

हिंदी में काम कराने के लिए अभियान

सरकार दफ्तरों में हिंदी में काम करने और अंग्रेजी की मानसिकता से मुक्ति दिलाने के उद्देश्य से केंद्रीय सचिवालय हिंदी परिषद ने विशेष अभियान शुरू किया है। इसके तहत परिषद का हर एक सदस्य महीने में कम से कम एक कर्मचारी को हिंदी में काम करने के लिए पूरी तरह तैयार करेगा। परिषद का मानना है कि इस तरह काम करने से सरकारी दफ्तरों में हिंदी में काम करने वालों की संख्या बढ़ती जाएगी।

परिषद के पदाधिकारियों ने आज प्रेस कांफ्रेंस में बताया कि इस अभियान के तहत हिंदी में काम करने के लिए लोगों को मानसिक तौर पर तैयार किया जाएगा।

आमतौर पर होता यह है कि लोग हिंदी में काम करने की बातें तो जोर-शोर से करते हैं, लेकिन काम अंग्रेजी में ही करते हैं। परिषद के अध्यक्ष और केंद्रीय रसायन एवं पेट्रो रसायन मंत्रालय में सचिव कौशल कुमार माथुर ने बताया कि देश भर में परिषद की करीब चार सौ शाखाएं और 29 हजार से ज्यादा सदस्य हैं। हर एक सदस्य के एक-एक नया सदस्य बनाने से यह तादाद लगातार बढ़ती जाएगी।

परिषद के पदाधिकारियों के मुताबिक केंद्र सरकार के दफ्तरों में फिफहाल 40 फीसदी काम हिंदी में हो रहा है। केंद्रीय मंत्रालयों से करीब चार करोड़ पत्र हर साल हिंदी में ही लिखे जाते हैं। वैसे उन्होंने माना कि अंग्रेजी में लिखे पत्रों की तादाद इनसे कई गुना ज्यादा है। परिषद पदाधिकारियों का मानना है कि कई अफसर भी दफ्तर में हिंदी में कामकाज करना चाहते हैं लेकिन अपनी पढ़ाई का माध्यम अंग्रेजी होने के कारण वे चाहते हुए भी ऐसा नहीं कर पाते। इसके अलावा कई लोग हिंदी में काम करने से झिझकते हैं। उन्होंने कहा कि परिषद कर्मचारियों की इस झिझक को ही खत्म करना चाहती है।

डीडीए के रिटायर इंजीनियर सदस्य आरएस गुप्ता, सहायक अभियंता और परिषद के सचिव दर्शन सिंह, रक्षा मंत्रालय के अनुवाद अधिकारी और परिषद के प्रबंध मंत्री प्रेमचंद धस्माना, गृह मंत्रालय के लेखा अधिकारी जैनुद्दीन अंसारी, केंद्रीय तार घर के सहायक अभियंता महाराज कृष्ण सफाया समेत परिषद के कई पदाधिकारियों ने अपने-अपने दफ्तरों के उन गैर हिंदी भाषी अधिकारियों-कर्मचारियों के बारे में बताया जो अब सारा काम हिंदी में करते हैं। परिषद ने दावा किया कि तमिलनाडु में भी उनके करीब छह सौ सदस्य हैं। इसी तरह पूर्वोत्तर राज्यों में भी परिषद काम कर रही है।

परिषद की स्थापना तीन मई 1960 को दिल्ली में हुई थी। इसका मुख्य उद्देश्य केंद्र सरकार के अधिकारियों और कर्मचारियों में हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति रुचि पैदा करना है।

(जनसत्ता 16 जनवरी 1994 से साभार)

समाचार दर्शन

इंस्टिट्यूशन ऑफ इंजीनियर्स की परीक्षाओं का माध्यम हिन्दी भी

एक छात्र ने केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद से शिकायत की थी कि इंस्टिट्यूशन आॅफ इंजीनियर्स की परीक्षाओं में हिन्दी माध्यम की अनुमति प्राप्त करनी चाही, किन्तु ऐसे किसी नियम के अभाव का बहाना बनाकर उसे अनुमति देने से इन्कार किया गया। परिषद ने लम्बे पत्र-व्यवहार के पश्चात् इंस्टिट्यूशन के मुख्यालय से यह स्पष्टीकरण प्राप्त किया कि "नियम 7.1 की शर्तों के अधीन डिप्लोमाधारी छात्रों को सेक्शन "ए" (डिप्लोमा स्टीम) परीक्षा में अपने उत्तर हिन्दी या किसी भी क्षेत्रीय भाषा में लिखने की अनुमति दी जा सकती है और वे तदनुसार सेक्शन "बी" ने भी उसी भाषा का प्रयोग करते रह सकते हैं"।

पुस्तकालय तथा सूचना सहायकों की भर्ती परीक्षा में हिन्दी का विकल्प हुआ।

साप्ताहिक रोजगार समाचार के 11-17 जून, 1994 के अंक में कर्मचारी चयन आयोग का एक विज्ञापन प्रकाशित हुआ है जिसके अनुसार पुस्तकालय तथा सूचना सहायकों के बहुत से पदों पर नियुक्ति के लिए एक लिखित प्रतियोगितात्मक परीक्षा ली जाएगी, जिसके सभी विषयों के प्रश्न-पत्र वस्तु-परक प्रकार के होंगे। सभी प्रश्न-पत्र हिन्दी तथा अंग्रेजी में छापे जाएंगे।

भारतीय ऑडिट और लेखा सेवा भर्ती परीक्षा में हिन्दी का पूर्ण विकल्प

साप्ताहिक रोजगार समाचार के 29 अक्तूर, 1994 के अंक में संघ लोक सेवा आयोग का एक विज्ञापन प्रकाशित हुआ है जिसके अनुसार भारतीय ऑडिट लेखा सेवा के 50 पदों पर नियुक्ति हेतु एक विभागीय परीक्षा मार्च 1995 में आयोजित की जाएगी। परीक्षा में (1) सामान्य अध्ययन, (2) सामान्य अंग्रेजी अथवा हिन्दी (3) सेवा नियम, (4) वित्तीय प्रबन्धन और राजकीय आॅडिटिंग के प्रश्न-पत्र होंगे जिनके उत्तर हिन्दी में भी दिए जा सकने का विकल्प होगा और वे द्विभाषी रूप में छापे जायेंगे।

अनुरोध है कि उक्त विकल्प की जानकारी अधिक से अधिक व्यक्तियों को दी जाए जिससे वे हिन्दी माध्यम अपना सकें। यह भी जरूरी है कि सरकार की जिन-जिन अन्य परीक्षाओं में अंग्रेजी भाषा के विकल्प में हिन्दी भाषा का विकल्प नहीं दिया गया है तथा उपरोक्त प्रकार की अन्य परीक्षाओं में निर्धारित प्रश्न पत्रों में जिन-जिन का उत्तर हिन्दी में दिए जाने का विकल्प नहीं दिया गया है, उनमें हिन्दी के विकल्प के लिए उपरोक्त उदाहरण देकर निरन्तर प्रयत्न किए जाएं।

भारतीय बैंकर्स संस्थान की परीक्षाओं में हिन्दी का विकल्प

भारतीय बैंकर्स संस्थान ने अपने 19 जनवरी, 1944 के पत्र संख्या-हिवि/194/94 द्वारा सूचित किया है कि निम्नलिखित परीक्षाओं के लिए हिन्दी माध्यम का विकल्प प्रदान किया हुआ है:-

1. बैंक प्रबन्धन में डिप्लोमा
2. ग्रामीण बैंकिंग प्रमाण-पत्र
3. विकास बैंकिंग प्रमाण-पत्र

विमान परिचारिकाओं तथा सहायक उड़ान परसरों की भर्ती परीक्षा में हिन्दी का विकल्प।

साप्ताहिक रोजगार समाचार के 21 मई, 1994 के अंक में छपे एक विज्ञापन के अनुसार एयर इण्डिया लिमिटेड ने 200 विमान परिचारिकाओं (एयर होस्टेज) तथा 160 सहायक उड़ान परसरों के पदों पर नियुक्ति के लिए आवेदन पत्र मांगे हैं, जिनका चयन एक लिखित प्रतियोगिता के आधार पर होगा जिसके उत्तर हिन्दी में भी दिये जा सकेंगे।

उक्त दोनों प्रकार के पदों की भर्ती के लिए आवेदकों का स्नातक होना अथवा उच्च माध्यमिक शिक्षा उत्तीर्ण होना और साथ ही होटल प्रबन्धन में तीन वर्षीय डिप्लोमाधारी होना आवश्यक है।

पद्मश्री डा० दुबे द्वारा राष्ट्रपति को ग्रन्थ भेंट

डाक्टर हरीसिंह गौड़ विश्वविद्यालय, सागर के इमेरिट्स प्रोफेसर पद्मश्री डा० लक्ष्मीनारायण दुबे ने राष्ट्रपति भवन, नयी दिल्ली में अपने नये ग्रन्थ

"राहुल सांक्रत्यायन : व्यक्ति और वाङ्मय" ग्रंथ राष्ट्रपति डा० शंकर दयाल शर्मा को भेंट करते हुए श्री विश्वम्भर नेवर साथ में ग्रंथ के संपादक श्री श्रीनिवास शर्मा।

हिंदुस्तान पेपर कारपोशन लि० कलकत्ता में उद्घाटन सत्र में अध्यक्षीय भाषण करते हुए राजभाषा विभाग, भारत सरकार के संयुक्त सचिव श्री देव स्वरूप बैठे हैं :—समिति के अध्यक्ष श्री बी०टी० श्रीधरन और पश्चिमी बंगाल के महामहिम राज्यपाल श्री के०बी० रघुनाथ रेड्डी।

भोपाल में आयोजित अखिल भारतीय भाषा साहित्य सम्मेलन में डा० अमर सिंह वधान, मुख्य अधिकारी (राजभाषा) सिंडीकेट बैंक को उपाधि प्रमाण-पत्र "समन्वय श्री" प्रदान करते हुए डा० शान्ता वीर महास्वामी।

आन्ध्रा बैंक, आंचलिक कार्यालय, हैदराबाद में संपर्क अधिकारी। लिपिक (हिंदी) सम्मेलन की एक झलक।

"विश्वभाषा हिन्दी"—की प्रति राष्ट्रपति डा॰ शंकरदयाल शर्मा को भेंट की। इस पर प्रसन्नता व्यक्त करते हुए महामहिम राष्ट्रपतिजी ने पद्मश्री डा॰ दुबे को बधाई दी। इस ग्रन्थ में विश्व हिन्दी सम्मेलन के चारों विश्व अधिवेशनों के साथ ही, संयुक्त राष्ट्र में हिन्दी की स्थिति की विवेचना की गयी है।

हिंदी परिषद, बरणगांव शाखा द्वारा स्थापना दिवस समारोह संपन्न

केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद, आ॰नि॰ बरणगांव शाखा द्वारा दिनांक 3 मई 1994 को निर्माणी के मुख्य सभाकक्ष में हिन्दी परिषद का स्थापना दिवस समारोह बड़ी धुमधाम से संपन्न हुआ। इस अवसर पर स्थानीय कवियों का एक हिन्दी कवि सम्मेलन भी आयोजित किया गया। निर्माणी के महाप्रबन्धक श्री दि॰बिं॰ बेटिगेरी मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। कार्यक्रम के प्रारंभ में परिषद के सचिव श्री चन्द्रभूषण शर्मा ने पुष्पमाला अपर्ण करके मुख्य अतिथि का स्वागत किया। और आगे अपने भाषण में उन्होंने सभी का स्वागत करते हुए हिन्दी परिषद की गतिविधियों के बारे में श्रोताओं को जानकारी दी। इसके पश्चात "हिन्दी शुध्दलेखन प्रतियोगिता" एवं 29वीं अखिल भारतीय हिन्दी निबंध प्रतियोगिता के विजेताओं को महा प्रबन्धक श्री॰ बेटिगेरी के करकमलों द्वारा पुरस्कार वितरित किये। बाद में परिषद के उपाध्यक्ष, अपर महाप्रबन्धक श्री जी॰ अग्रवाल ने प्रत्येक को गुलाबपुष्प देकर कवि सम्मेलन में सम्मिलित होने वाले कवियों का स्वागत किया और कवयित्री श्रीमती शोभा खासनीस के सरस्वति वंदना से कवि सम्मेलन का आरंभ हुआ। इस कवि सम्मेलन में सर्वश्री रमाकांत पाटिल, यशवंत कदम, जी॰डी॰ खान, रमाकांत भोलाणे, आर॰एम॰फ्लटणकर, के॰ एफ॰ मोरे, ए॰के॰ सोनी, गोपाल व्यास, डी॰के॰ कन्हाडे डैनियल लाल, पी॰डी॰निकम, जे॰यू॰ तायडे, राजू अठवाल, आदि कवियों ने भाग लिया। कार्यक्रम का संचालन हिन्दी कवि श्री वेदभूषण शर्मा (राही) ने किया। इस कार्यक्रम में श्री एम॰एल॰ गुप्ता, अपर महाप्रबन्धक एवं अध्यक्ष, रा॰ भा॰ का॰ समिति, अन्य अधिकारीगण तथा कर्मचारियों ने बड़ी संख्या में उपस्थित होकर कवि सम्मेलन का आनंद लिया। इस कार्यक्रम को सफलता प्राप्त कराने में सर्वश्री एन॰जी॰ गड़वाल, गफ्फार, नियाज मुहम्मद, अनिल माली, संतोष पात्रा, संजय सोनार, कमलेश बाविस्कर पी॰पी॰ मदाने तथा परिषद के अन्य कार्यकर्ताओं ने कठिन परिश्रम किये।

97 वीं जयन्ती के अवसर पर पं॰ राम प्रसाद बिस्मिल को याद किया गया

12 जून महान क्रान्तिकारी कवि और लेखक पं॰ राम प्रसाद बिस्मिल' की 97 वीं जयन्ती कल 11 जून 1991 को अखिल भारतीय साहित्य परिषद एवं दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन (सनेही मण्डल) के संयुक्त तत्वावधान में सेक्टर 20 स्थित प्रेटर नोएडा के सभागार में एक सादे किन्तु आकर्षक समारोह के रूप में मनायी गयी। इसमें नोएडा गाज़ियाबाद तथा दिल्ली से पधारे विद्वानों, कवियों व साहित्यकारों ने भाग लिया। कार्यक्रम का शुभारम्भ हिन्दी अकादमी दिल्ली के सचिव डा॰ रामशरण गौड़ द्वारा 'बिस्मिल' के चित्र पर माल्यार्पण तथा दीप प्रज्ज्वलन के साथ हुआ। श्री गौड़ इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि थे। संचालन कार्यक्रम के संयोजक हास्य व्यंग्यकार "बाबा" कानपुरी ने किया तथा अध्यक्षता श्री राजमणि तिवारी ने की। परिषद के प्रांतीय संयोजक मदन लाल वर्मा 'क्रान्त' ने मुख्य वता के रूप में बोलते हुए अपनी 10 वर्ष की शोध यात्रा के अनुभव और महान क्रांतिकारी के अनुपलब्ध साहित्य को खोजने में आने वाली बाधाओं का विस्तार से उल्लेख करते हुए इस बात पर दुख व्यक्त किया कि 'बिस्मिल' जैसे महान साहित्यकार को इतनी जल्दी भुला दिया गया जबकि उनसे प्रेरणा पाकर शहीद हुए चन्द्रशेखर 'आज़ाद' और भगतसिंह जैसे बलिदानियों के आज घर घर चित्र मिलते हैं। 'बस्मिल' का न तो कहीं कोई चित्र मिलता है न कहीं कोई स्थान है जो रामप्रसाद 'बिस्मिल' के नाम पर हो। उन्होंने कहा कि 'बिस्मिल ' द्वारा रचित 11 पुस्तकों में से वे अभी तक 5 पुस्तकें ही खोज पाये हैं। लगभग 600 पृष्ठों की शोधपूर्ण सामग्री उनके पास तैयार है किन्तु आज ऐसा कोई प्रकाशक नहीं जो इस महत्वपूर्ण दस्तावेज़ को प्रकाशित कर सके। उन्होंने नोएडा महानगर का नाम **'बिस्मिल विहार'** रखने का सुझाव दिया। उपस्थित समुदाय ने इसका समर्थन करते हुए प्रशासन से मांग की कि इस सम्बन्ध में कोई ठोस निर्णय लिया जाये। दिल्ली से पधारे गज़लकार विनय 'सरगम' ने 'बिस्मिल' की दो अनुपलब्ध गज़लों 'सदा-ए-नफ़स' (आत्मा की आवाज़) तथा **'आग का दरिया'** गाकर सुनायीं जिन्हे श्रोताओं की आंखें भर आयी। इन्हीं गज़लों के कुछ शेर—**"अहले वतन अगरचे हमें भूल जायेंगे, अहले वतन को हमसे भुलाया न जायेगा।" तथा "हम क़ौम के मारों का इतना ही फसाना है। रोने को नहीं कोई हँसने को जमाना है। सब वक्त की बातें हैं, सब खेल है किस्मत का, बिंध जाये सो मोती है, रह जाये सो दाना है।"** सुनकर उपस्थित जन समुदाय भाव विभोर हो उठा। बाबा कानपुरी ने 'बिस्मिल' द्वारा रचित प्रार्थना—**" वह शक्ति हमें दो दया निधे। कर्तव्य मार्ग पर डट जावें पर सेवा पर उपकार में हम जग-जीवन सफल बना जावें। निज आन मान मर्यादा का प्रभु ध्यान रहे अभिमान रहे, जिस देश जाति में जन्म लिया बलिदान उसी पर हो जावें।"** सुनाते हुए कहा कि यह प्रार्थना मैंने प्राइमरी स्कूल में गायी थी लेकिन इसके रचनाकार के रूप में जब मुझे यह ज्ञात हुआ कि यह प॰ रामप्रसाद 'बिस्मिल' की लिखी हुई है। तब से मेरे जीवन में विश्वास मानिये, बहुत बड़ा परिवर्तन आ गया। ऐसी उत्कृष्ट प्रार्थना कोई क्रान्तिकारी कवि ही लिख सकता है सन्त नहीं। क्योंकि मान अभिमान और बलिदान की बात सन्त कवि कर ही नहीं सकता।

भारत हैवी इलेक्ट्रिकल्स से पधारे सुप्रसिद्ध हिन्दी विद्वान एवं वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी डा॰ गोपेश गोस्वामी ने 'बिस्मिल' जैसे महापुरुष के व्यक्तित्व और कृतित्व की एक रूपता पर प्रकाश डालते हुए कहा कि वे जैसा मन में सोचते थे वैसा ही प्रत्यक्ष करते भी थे। उन्होंने एक समूची पीढ़ी को बलिदान की प्रेरणा दी यह कोई आसान काम नहीं था। उन्होंने इस अवसर पर कई रोचक संस्मरण भी सुनाये किन्तु इस बात पर आश्चर्य व्यक्त किया रामप्रसाद 'बिस्मिल' जैसे राष्ट्रीय धारा के कवि और क्रान्तिकारी विचारक को अभी तक इतना उपेक्षित क्यों रखा गया? कहीं इसमें भी तो कोई षडयन्त्र नहीं? उन्होंने विद्वानों का आवाहन किया कि वे इस पर गम्भीरता से विचार करें और उन्हें प्रकाश में लायें।

मुख्य अतिथि पद से बोलते हुए डा॰ रामशरण गौड़ ने कहा कि नोएडा महानगर चूंकि नया नया बसा है अतः यहाँ पर किसी प्रकार साहित्यिक प्रदूषण नहीं है जबकि दिल्ली न जाने कितनी बार बसी और कितनी बार उजड़ी किन्तु वहाँ आज भी इतना साहित्यिक प्रदूषण है जिसका वर्णन नहीं

किया जा सकता। उन्होंने प० रामप्रसाद 'बिस्मिल' के साथ साथ प० गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही' का भी पावन स्मरण करते हुए कहा कि ये वह अगर क्रान्तिकारी विचारक थे जिन्होंने भारत माँ का चित्र संवारने और निखारने में अपने व्यक्तित्व और कृतित्व भेंट चढ़ा दिया। आज साहित्यकारों को चाहिए कि वे 'बिस्मिल' के आचरण से कुछ तो सीखें। 'बिस्मिल' का अर्थ होता है 'घायल' आज सम्पूर्ण देश की दशा दूर्दशा में बदल रही है और साहित्यकार चैन की बंशी बजा रहा है। परिवर्तन की सीढ़ियाँ बनाने में कवि को ही दधीची बनना पड़ता है, 'बिस्मिल' बनना पड़ता है। उन्होंने बिस्मिल की ये अमर पंक्तियाँ भी सुनायी "शहीदों की चिताओं पर जुड़ेंगे हर बरस मेले, वतन पर मरने वालो का यही बाकी निशां होगा। किन्तु आज क्या हो रहा है?

कार्यक्रम के अध्यक्ष पद से बोलते हुए केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के पूर्व निदेशक राजमणि तिवारी ने कहा कि एन०सी०ई०आर०टी०, दिल्ली द्वारा अभी हाल ही में प्रकाशित **'रामप्रसाद बिस्मिल की आत्म कथा'** मैंने पढ़ी और अपने पोते से पढ़वाकर सुनी उनका जितना भी साहित्य है सब प्रकाशित होना चाहिए। उसे पुस्तकालयों में पहुंचना चाहिए तथा नवयुवकों को पढ़ना चाहिए। उन्होंने कहा कि जिस प्रकार विवेकानन्द को समझने के लिये एक और विवेकानन्द चाहिए ठीक इसी प्रकार बिस्मिल का साहित्य एकत्र करने और उसका विवेचन करने के लिये एक और रामप्रसाद चाहिए। उन्होंने कान्त जी को साधुवाद देते हुए कहा कि बिस्मिल की मृत्यु के ठीक 20 साल बाद पैदा हुए एक युवक में यह भावना कहां से पैदा हुई कि वह बिस्मिल के साहित्य पर चिन्तन और मन्थन करें? आवश्य ही यह कोई दैवी शक्ति है हमारा सबका यह प्रयास होना चाहिए कि उस अमर क्रान्तिकारी के प्रसाद को घर-घर जाकर पहुंचायें तभी **'बिस्मिल जयन्ती'** मनाना सार्थक सिद्ध होगा।

'ग्रेटर नोएडा' की ओर से प्रतिनिधि स्वरूप पधारे विधि अधिकारी श्री टी०एन० गोविल ने इस अवसर पर प्रशासन की ओर से यह आश्वासन दिया कि हम प० रामप्रसाद बिस्मिल के नाम पर नोएडा अथवा ग्रेटर नोएडा में कोई न कोई भव्य स्मारक बनाने का प्रयास करेंगे। आर्य समाज, नोएडा के प्रधान डा०ए०बी० आर्य ने बिस्मिल जयन्ती के उपलक्ष्य में महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा लिखित भव्यार्थ प्रकाश तथा ए०बी० आर्य द्वारा रचित भूलोक्की कहानियां पुस्तकें उपस्थित जन समुदाय में वितरित कीं। परिषद के अध्यक्ष यशोदानन्दन महेश्वरी ने सभी आगतुकों विशेषकर ग्रेटर नोएडा प्रशासन तथा सनेही मण्डल के अध्यक्ष एल०के० गुप्ता को धन्यवाद दिया जिनके कारण यह समारोह सम्भव हो सका।

अंग्रेजी बनाम हिंदी

ब्रह्म समाज के एक नेता ने स्वामी दयानन्द जी से कलकत्ते में कहा-"अगर आपने अंग्रेजी पढ़ी होती तो कमाल हो जाता।" स्वामीजी ने उत्तर में प्रश्न ही रखा—"कौन-सा ऐसा कमाल हो जाता जो सिर्फ अंग्रेजी पढ़ने से होता है?" आप वेदों का संदेश बाहर दे सकते थे।

स्वामीजी: "मैंने तो साधारण सी भूल की थी कि अंग्रेजी नहीं पढ़ी लेकिन आपने तो मौलिक और गम्भीर भूल की है कि आपको संस्कृत और हिन्दी नहीं आती। आप हिन्दी और संस्कृत जानते होते तो हम दोनों ग्यारह बन जाते। पहले देश में काम करते, बाद में बाहर जाते। जिनके घर में कूड़ा-करकट भरा हो वे पड़ोसियों को सफाई की शिक्षा कैसे दे सकते हैं और सुनने वाले पर इसका प्रभाव कैसे पड़ेगा?

(द्वैमासिक खनन भारती फरवरी, 1994 अंक-49 से साभार)

मैथिली शरण गुप्त जयन्ती समारोह

गुप्त जी ने हिन्दी भाषा को शक्ति दी और संवर्धित किया

——बृजेन्द्र सिंह मकुशवाह

सोनपुर पर्वोत्तर रेलवे के सोनपुर मंडल द्वारा दिनांक 3/8/94 को आयोजित राष्ट्रकवि मैथिली शरण गुप्त की 108वीं जयन्ती समारोह की अध्यक्षता करते हुए मंडल रेल प्रबन्धक श्री बृजेन्द्र सिंह कुशवाह ने कहा कि गुप्त जी को काव्य-साधना की प्रेरणा स्वदेश प्रेम से मिली थी। उन्होंने कहा कि काव्य-साधक गुप्त जी ने अपनी काव्य-साधना के माध्यम से हिन्दी भाषा को शक्ति दी और हिन्दी साहित्य को सम्बर्धित किया।

मुख्य अतिथि के रूप में राज नारायण महाविद्यालय-हाजीपुर के हिन्दी विभागाध्यक्ष डा० नवल किशोर प्रसाद श्रीवास्तव ने कहा कि गुप्त जी ने हिन्दी काव्य की सफल आधार शीला रखी। उन्होंने इनकी दर्जनों काव्य-कृतियों में/भारतीय इतिहास, परम्परा, सभ्यता और /वर्णित संस्कृति के भावों का सोदाहरण विश्लेषण किया।

मुख्य वक्ता प्रो० डा० पारसनाथ सिन्हा ने कहा कि गुप्त जी आपादमस्तक कवि थे। वे अपनी भाषा की सहजता और भावों की गहनता के कारण तुलसी के बाद हिन्दी के सबसे महानकवि माने जाते हैं।

समारोह के प्रारम्भ में श्री शैलेन्द्र कुमार, उप मुख्य राजभाषा अधिकारी ने आगत अतिथियों, एवं प्रबुद्ध श्रोताओं का स्वागत करते हुए कहा कि गुप्त जी की काव्य -साधना आदि कवि बाल्मीकि, व्यास और तुलसी की काव्य परम्परा के अनुरूप थी जो सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य के लिए प्रकाश स्तम्भ है।

श्री दवारिका राय "सुबोध" राजभाषा अधिकारी ने राष्ट्रकवि गुप्त जी की साहित्य-साधना की छवि का दर्शन कराते हुए आमंत्रित विद्वान अतिथियों का परिचय प्रस्तुत किया। उक्त अवसर पर मैथिली शरण गुप्त की "काव्य-साधना" विषय पर परिचर्चा का विषय प्रवर्तन करते हुए श्री राम चन्द्र सिंह त्यागी, राजभाषा अधीक्षक ने गुप्त जी के साहित्यिक अनुवाद, पौराणिक अख्यानों के आधार पर रचित सद्ग्रथों तथा उनका राष्ट्रीय भावनाओं पर विस्तृत प्रकाश डाला।

श्री चन्द्र देव सिंह, राजभाषा सहायक ने गुप्त जी की भाषाई एवं बड़ा हिन्दी काव्य-रचना की यात्रा पर अपना विचार प्रकट किया तो डा० बिजली प्रसाद सिंह ने गुप्त जी के काल पर विचार करते हुए उनकी आज की प्रासंगिता पर प्रकाश डाला।

कार्यक्रम का शुभारम्भ श्री उदय शंकर प्रसाद, सिन्हा की सरस्वती वंदना "वीणा वादिनी वर दे" से किया गया। अंत में श्री महेश कुमार गुप्त अपर मंडल रेल प्रबन्धक ने धन्यवाद ज्ञापन किया।

सेना में राजभाषा का प्रचार-प्रसार

भारतीय सेना में राजभाषा के चर्तुमुखी प्रचार-प्रसार के लिए 105 वायु रक्षा रेजिमेंट के कप्तान श्री रमेश उपाध्याय द्वारा एक अभूतपूर्व योजना तैयार की गई है जिसे बम्बई हिंदी विद्यापीठ के सौजन्य से मूर्त रूप दिया गया है। बम्बई हिंदी विद्यापीठ भारत सरकार द्वारा एक मान्यता प्राप्त स्वैच्छिक संस्था है, जिसकी परिक्षाएं सेना के उपर्युक्त यूनिट के कमाण्ड अधिकारी के निर्देशन में बम्बई महानगर में स्थित कलीना मिलिटरी कैंप फरवरी, 1994 से चल रही हैं। और इसका लाभ सेवा रत और सेवा निवृत्त सैनिकों और उनके परिवारों को पहुंच रहा है।

विद्यापीठ सैनिकों की अन्य इकाईयों में भी परीक्षाएं स्थापित करने के लिए तत्पर है। ऐसा करने पर गैर हिंदी भाषी सैनिकों और उनके परिवारों के बीच राजभाषा के प्रचार-प्रसार को जहां सुगम और सरल बनाया जा सकेगा वहीं हिंदी भाषी सैनिकों के बीच हिंदी के पठन-पाठन को और सुदृढ़ बनाने में सहायता मिलेगी। रक्षा मंत्रालय के दिनांक 30 मार्च, 1994 के पत्र सं० र म अरण्भ 20(18)/93-रक्षा सभा द्वारा इस योजना की सूचना सेना के तीनों अंगों एवं सभी उपक्रमों को दी गई है। योजना का लाभ कार्यरत सैनिक अभूतपूर्व सैनिक और उनके परिवार के सदस्य उठा सकते हैं।

संसदीय राजभाषा समिति की पहली उप समिति द्वारा फ्रन्टियर, मुख्यालय, कलकत्ता सीसुबल का निरीक्षण

संसदीय राजभाषा समिति की पहली उप समिति ने राजभाषा नीति के अनुपालन की स्थिति का आंकलन करने के लिये फ्रन्टियर मुख्यालय कलकत्ता सीसुबल के कार्यालय का 20 जुलाई, 1994 को निरीक्षण किया।

निरीक्षण के दौरान समिति ने फ्रन्टियर मुख्यालय कलकत्ता में राजभाषा नीति के कार्यान्वयन के लिये किये जा रहे प्रयासों एवं प्रगति की सराहना की।

हिंदी की जीत

कांग्रेस के भूतपूर्व अध्यक्ष तथा गांधीवादी नेता पट्टाभि सीतारमैया अपने भेजे गए सभी पत्रों पर हिंदी में पता लिखते थे। दक्षिण डाकखाने वालों को इससे परेशानी होती थी। उन्होंने कहा कि आप अंग्रेजी में पत्र लिखा करें जिससे डाक बांटने में परेशानी न हो। डा० सीतारमैया को यह मंजूर नहीं था। उन्होंने कहा हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा है और मैं इसी का प्रयोग करूंगा। तब डाकघर वालों ने उनके लिए धमकी भरा पत्र लिखा कि आपने हिंदी में पता लिखा तो उन्हें डेड लेटर भेज दिया जायेगा।

डा० सीतारमैया अपनी बात पर अड़ गये और हिंदी पत्राचार जारी रखा। काफी दिनों के शीतयुद्ध के बाद डाकघर वालों को झुकना पड़ा। इस तरह जीत हिंदी की हुई।

नवभारत टाइम्स के 14.9.94 के अंक में सभार/ (प्रस्तुतिः साथ)

उपन्यास 'हिंसा-विहिंसा' का लोकार्पण

'लेखक स्वयं अपना आलोचक होता है। वह अपनी रचना की कमियों को एक आलोचक से बेहतर समझ सकता है। आचोचकों के दिशा-निदेशन में लिखा जाने वाला हिंदी साहित्य कभी भी जीवंत नहीं हो सकता। यदि ऐसा होता तो आज सारे आलोचक कथाकार/उपन्यासकार हो गये होते। लेखकों को अभिव्यक्ति की आज़ादी देनी ही होगी, तभी हिन्दी साहित्य को सशक्त रचनाएं प्राप्त हो सकेंगी।' यह बात हिन्दी के सशक्त कथाकार, पत्रकार श्री कमलेश्वर ने नई दिल्ली में कही। वह पिछले दिनों 'रूसी-हिन्दी साहित्य व सांस्कृतिक समिति के मंच पर जाने-माने युवा कथाकार पत्रकार श्री रंजन जैदी के तीसरे उपन्यास 'हिंसा/अहिंसा' को लोकार्पण समारोह की अध्यक्षता कर रहे थे।

श्री कमलेश्वर ने कहा कि रंजन जैदी या हिंदी उपन्यास 'हिसा-अहिंसा क्षुब्ध मानसिकता की आक्रांत अभिव्यक्ति है। यह अपने समय का एक सशत उपन्यास है और इसकी भाषा व घटनाएं पाठक को अंत तक पढ़ने के लिए विवश करती हैं। विश्वास हो जाता है कि हम प्रेमचंद पर तो गर्व कर सकते हैं, पर उन पर आज आश्रित नहीं हैं।

रूसी विज्ञान तथा संस्कृति केन्द्र में आयोजित इस अविस्मर्णीय समारोह में कवि श्री जगदीश चतुर्वेदी ने कहा कि प्रस्तुत उपन्यास अपने समय का इतिहास नहीं है, पर तत्कालीन राष्ट्रीय घटनाओं का झरोखा अवश्य है। आजादी का अहसास और गांधी जी की अहिंसावादी नीति का प्रसार भारत की हर स्टेट तक पहुंच गया था। 'हिंसा-अहिंसा' ऐसे ही एक स्टेट की जिंदा तस्वीर है। हिन्दी उपन्यास के इतिहास में यह उपन्यास एक मील का पत्थर साबित होगा।

लाल बहादुर संस्कृत विद्यापीठ के कुलपति डा० श्रीधर वशिष्ठ ने 'हिंसा-अहिंसा' की सांस्कृतिक व्याख्या करते हुए कहा कि संस्कृत में अहिंसा का एक अर्थ-क्षमा भी होता है।

कश्मीरी भाषा के चर्चित कवि और संस्कृत के विद्वान श्री त्रिलोकी नाथ धर ने अपने लिखित आलेख में उपन्यास के साहित्यिक व कलात्मक पहलू पर प्रकाश डाला। इस अवसर पर रूसी विज्ञान एवं संस्कृति केन्द्र के उप-निदेशक श्री एलेक्जांद्र चेशेश्को ने भारत और रूस के परस्पर साहित्य व संस्कृति के आदान-प्रदान तथा इस प्रकार के आयोजनों के होते रहने पर प्रसन्नता व्यक्त की।

कथाकार सुरेश उनियाल व भूतपूर्व एयर वाइस मार्शल वी०एम० तिवारी ने भी उपन्यास हिंसा-अहिंसा पर अपने विचार व्यक्त किये। श्री तिवारी ने कहा कि इस उपन्यास पर एक बेहतरीन फिल्म बनाई जा सकती है।

उर्दू लेखक व दिल्ली पुलिस के उपायुक्त श्री ए०ए० फारूकी ने कहा कि एक लम्बे अंतराल के बाद एक अच्छा उपन्यास पढ़ने को प्राप्त हुआ है। उन्होंने 'हिंसा-अहिंसा' को एक सशक्त उपन्यास बताया।

कार्यक्रम का संचालन करते हुए हिंदी कथाकार प्रेम-जन्मेजय ने रंजन ज़ैदी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला और साथ ही साथ उपन्यास 'हिंसा-अहिंसा' पर भी अपनी राय व्यक्त की।

अंत में संयोजक हिंदी के कवि श्री दिविक रमेश ने उपस्थित साहित्यकारों, पत्रकारों व श्री चेशेश्कों का धन्यवाद शापित किया, जिनके सौहार्दपूर्ण रवैये से इस प्रकार से आयोजन सपन्न होते हैं।

प्रस्तुतिः- रामहित नन्दन
दिल्ली प्रशासन कालोनी,
नीमड़ी कालोनी, अशोक विहार
दिल्ली-110062

प्रभावी राजभाषा निरीक्षण

बेंगलूर स्थित क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग द्वारा किए जा रहे राजभाषा निरीक्षण के फलस्वरूप हिंदी का प्रगामी प्रयोग दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा है। निरीक्षण तक सिर्फ अंग्रेजी में निष्पादित काम, निरीक्षण के तुरंत बाद नियमानुसार द्विभाषी रूप में निष्पादित किए जाने की कई मिसाल हैं।

उदाहरणार्थ हाल ही में, उप निदेशक (का०) श्री डी० कृष्ण पणिक्कर ने 2.6.94 को विशाखापट्टणम स्थित ड्रेजिंग कार्पोरेशन आॅफ इंडिया के मुख्यालय में राजभाषा निरीक्षण किया तो पाया कि वहां के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक के सचिवालय में आवतियों पर प्रयुक्त तारीख मोहर सिर्फ अंग्रेजी में ही है।

श्री पणिक्कर ने उस पर आपत्ति प्रकट की और सर्वोच्च पदाधिकारी के ध्यान में इस उल्लंघन को लाकर, तत्काल इसे अंग्रेजी मात्र रबड़ मुहर को नष्ट करने और नियमानुसार द्विभाषी रबड़ की मोहर इस्तेमाल करने की क्रियाविधि को सुनिश्चित करने का जर्बदस्त आग्रह किया। प्रसन्नता की बात है कि इस प्रभावी प्रस्तुतीकरण के परिणामस्वरूप, मौके पर कार्रवाई कराकर ठीक उसी दिन अपराह्न से द्विभाषी रबड़ मुहर काम में लायी गयी।

वैज्ञानिक शोध लेख हिन्दी में

भारत के वैज्ञानिकों की प्रवृत्ति है कि वे जो भी शोध करते हैं उसे विदेशी पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कराने का प्रयास करते हैं। इसका एक बड़ा कारण है कि यहाँ के वैज्ञानिकों की तरक्की का एक प्रमुख मापदण्ड है कि किस वैज्ञानिक के कितने शोध-पत्र विदेशी पत्रिकाओं में छपे हैं। जिस वैज्ञानिक के शोध पत्र विदेशी पत्रिकाओं में अधिक से अधिक छपते हैं उसे उतना ही बड़ा वैज्ञानिक समझा जाता है और इसी आधार पर उसे तरक्की देकर ऊंचे पदों पर आसीन किया जाता है। उसके कार्यों का लाभ भारत को क्या हुआ यह कोई नहीं पूछता। परिणाम यह होता है कि यहाँ का वैज्ञानिक भारत के बजाए विदेशों में विख्यात हो जाता है और अवसर प्राप्त होते ही वह विदेश में जाकर बस जाता है।

कैसी विडम्बना है कि भारत के पैसे से, भारत की मिट्टी पर व भारत की प्रयोगशालाओं में किया गया शोध कार्य भारत के बजाय विदेश में जाकर छपता है और भारत के बजाय विदेशी उसका लाभ उठाते हैं। यह हमारी विदेशी सोच का परिणाम है कि हम अपने देश के वैज्ञानिकों के कार्यों का लाभ नहीं उठा पाते और प्रतिभाशाली वैज्ञानिकों से वंचित हो जाते हैं।

इसके विपरीत कई देशों में उनके वैज्ञानिकों की तरक्की अपने देश में प्रकाशित लेखों के आधार पर की जाती है। वहाँ के वैज्ञानिकों को अपने देश छोड़कर जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। रूस, जापान, चीन, फ्रांस, हंगरी, इटली तथा पोलेण्ड आदि देशों के वैज्ञानिक अपने शोध कार्यों का प्रचार-प्रसार अपने देश में करते हैं और उन्नति कर रहे हैं। परन्तु भारत विदेशी सोच के कारण इन सभी देशों से पीछे है। बस विदेशों के लिए वैज्ञानिक तैयार करता है।

पिछले कुछ वर्षों तक हिन्दी की ऐसी पत्र-पत्रिकाएं नहीं थी जिनमें वैज्ञानिक विषयों के अच्छी स्तर के शोध-पत्र प्रकाशित होते हों। इस कारण भी भारतीय वैज्ञानिक अपने लेख मौलिक रूप से हिन्दी में लिखने की आवश्यकता अनुभव नहीं करते थे। अब स्थिति काफी बदल चुकी है। भारतीय वैज्ञानिक तथा औद्योगिक परिषद द्वारा एक उच्च स्तरीय पत्रिका प्रकाशित की जाने लगी है, जिसमें मौलिक शोध लेख हिन्दी में प्रकाशित किए जाते हैं। इसी प्रकार कृषि अनुसंधान संचार केन्द्र करनाल द्वारा भी एक शोध-पत्रिका कृषि संबधी शोध पत्रों के लिए प्रकाशित की जाती है जिसमें उच्चस्तरीय शोध पत्र हिन्दी में वर्षों से प्रकाशित हो रहे हैं। विभिन स्थानों पर अब विविध वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों की संगोष्ठिया भी आयोजित हो रही है, जिनमें मौलिक शोध पत्र हिन्दी में प्रस्तुत किए जाते हैं और उन पर चर्चा भी हिन्दी में होती है। इस प्रकार अब किसी वैज्ञानिक को अपना शोध-पत्र मौलिक रूप से हिन्दी में लिखने में संकोच नहीं होना चाहिए। देश के विश्वविद्यालयों तथा शोध संस्थानों के निदेशकों आदि द्वारा भी अपने वैज्ञानिकों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे अपने शोध परिणामों को स्वदेशी पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कराएं ताकि भारत की जनता उनका लाभ उठा सकें।

प्रस्तुतः हरिबाब कंसल, महामंत्री हिन्दी व्यवहार संगठन ई-9/23,
वसन्त विहार, नई दिल्ली-110057

वधान को 'समन्वय श्री' की उपाधि

दिनांक 22 मई 1994 को भोपाल में आयोजित अखिल भारतीय भाषा साहित्य सम्मेलन में सिंडीकेट बैंक, मंडल कार्यालय, भोपाल के मुख्य अधिकारी (राजभाषा) डा० अमर सिंह वधान (अहिंदी भाषा) को उनकी हिंदी भाषा के प्रयोग-प्रसार एवं साहित्य साधना के लिए "समन्वय श्री" उपाधि से सम्मानित किया गया।

अंग्रेजी मात्र 0.54 प्रतिशत की मातृभाषा

10 मई, 1994 के दैनिक जागरण में छपे समाचार के अनुसार राज्यसभा में एक प्रश्न के उत्तर में गृह राज्य मंत्री श्री पी० एम० सईद ने सूचित किया कि 1981 की जनगणना के अनुसार भारत में मात्र 0.54 प्रतिशत लोगों की मातृभाषा अंग्रेजी है। 1991 की जनगणना के आ अभी तैयार किए जा रहे हैं।

उपभोक्ता से पाठक स्वयं विचार करें कि अंग्रेजी का शिक्षा और प्रशासन में प्रयोग का कहां तक औचित्य है।

संसदीय राजभाषा समिति के उपाध्यक्ष: श्री शंकर दयाल सिंह

संसदीय राजभाषा समिति के अध्यक्ष एवं केन्द्रीय गृह मंत्री श्री शंक़र राव चव्हाण ने सुप्रसिद्ध लेखक एवं सांसद श्री शंकर दयाल सिंह को इस समिति का उपाध्यक्ष मनोनीत किया है। श्री शंकर दयाल सिंह ने संसदीय राजभाषा समिति के उपाध्यक्ष के रूप में अपना कार्यभार गृहण करने के पश्चात् समिति की छठी रिपोर्ट प्रस्तुत करने के सम्बन्ध में आयोजित बैठकों में विचार-विमर्श भी प्रारम्भ कर दिया है।

श्री सिंह संसदीय राजभाषा समिति के संस्थापक सदस्यों में हैं। संविधान की धारा 344 के अनुसार 1976 में जब संसदीय राजभाषा समिति का गठन किया गया था तो श्री सिंह उसके सदस्य तथा तृतीय उप समिति के संयोजक मनोनीत किए गए थे। इस समय भी वे तृतीय उप समिति के संयोजक के रूप में कार्यरत हैं।

श्री शंकर दयाल सिंह ने देश और विदेश में राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार में सतत सक्रिय योगदान किया है। वे 1976 तथा 1993 के मारीशस में आयोजित विश्व हिन्दी सम्मेलनों में भारत का प्रतिनिधित्व कर चुके है। तथा सोवियत संघ, सूरीनाम, त्रिनिडाड, नार्वे, नेपाल तथा बंगला देश में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी सम्मेलनों में उन्होंने भारतीय प्रतिनिधि मंडल के सदस्य तथा प्रतिनिधि मंडल के नेता के रूप में भी भाग लिया है। 1993-94 में राष्ट्रपति जी के साथ उच्च स्तरीय शिष्टमंडल के सदस्य के रूप में 10 देशों की यात्रा के दौरान श्री शंकर दयाल सिंह ने यह महसूस किया कि विदेशों में लोग भारतीय प्राच्य साहित्य के प्रति जिज्ञासा रखते हैं तथा हिन्दी सीखने में उनकी काफी रूचि हैं।

श्री सिंह विगत 30 वर्षों से हिन्दी की सभी श्रेष्ठ पत्र-पत्रिकाओं में नियमित रूप से लिख रहे हैं और उनके पाठकों का बहुत बड़ा वर्ग पूरे देश में है। श्री सिंह की अब तक 32 मौलिक और 10 संपादित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

श्री सिंह का विचार है कि हिन्दी को प्रतिष्ठित करने की दिशा में उसे केवल सरकारी स्तर तक ही सीमित रखना नहीं होगा वरन् संसार के अन्य देशों के समान उसे राष्ट्रीयता के साथ जोड़ना होगा, तभी हिन्दी सही अर्थ में प्रतिष्ठित होगी।

राहुल सांकृत्यायन ग्रंथ राष्ट्रपति को भेंट

महापंडित राहुल सांकृत्यायन के व्यक्तित्व और कृतित्व पर आधारित एक स्मारक ग्रंथ राष्ट्रपति डा॰ शंकर दयाल शर्मा को राष्ट्रपति भवन दिल्ली में, गत 7 जून 94 को भेंट किया गया। इसका प्रकाशन कलकत्ता के हिन्दी दैनिक 'छपते-छपते' ने राहुल सांकृत्यायन जन्म शताब्दी समारोहों के सिलसिले में किया है।

जाने-माने हिंदी समालोचक श्री निवास शर्मा द्वारा संपादित इस ग्रंथ में राहुल सांकृत्यायन की साहित्यिक, सांस्कृतिक गतिविधियों और विभिन्न विधाओं में लिखे उनके साहित्य पर अनेक जाने माने विद्वानों और विशेषज्ञों के लेख संगृहित किए गए हैं।

ग्रंथ भेंट करते हुए इसके प्रकाशक श्री विश्वम्भर नेवर ने बताया कि राहुल जी के रचनात्मक व्यक्तित्व के कई आयाम हैं: इतिहासकार, पुरातात्विक, अनुसंधाता, साहित्यकार, दार्शनिक, राजनीतिज्ञ, समालोचक तथा मनीषी। भाषा, साहित्य, मानविकी, दर्शन, विज्ञान, इतिहास, पुरातत्व, समालोचना, निबंधादि को उन्होंने अपनी लेखनी से समृद्ध किया। इस पुस्तक में राहुल सांकृत्यायन के भारतीय साहित्य और सांस्कृतिक जीवन में किए गए योगदान की समालोचनात्मक व्याख्या करके उनके व्यक्तित्व को जनता के सामने लाने का प्रयास किया गया है।

ग्रंथ में स्वयं राहुल सांकृत्यायन के भी कुछ लेखों के अतिरिक्त जिन प्रमुख साहित्यकारों की रचनायें शामिल हैं, उनमें प्रमुख हैं- डा॰ कमला सांकृत्यायन, डा॰ नगेन्द्र ठाकुर सिंह, भीष्म साहनी, डा॰ वीरेन्द्र सक्सेना, गोपाल प्रसाद और डा॰ श्याम दिवाकर आदि।

इस अवसर पर श्री चंदुलाल, श्रीमती वीणा वर्मा, सरला माहेश्वरी, श्रीमती चन्द्रकला पांडे (सांसद) के अलावा राहुल सांकृत्यायन की सुपुत्री जया तथा कई जाने माने पत्रकार और विद्वान उपस्थित थे।

—प्रस्तुतकर्ता: श्री वीरेन्द्र त्रिपाठी

पाराद्वीप पत्तन न्यास के सतर्कता अधिकारी : श्री सत्य त्रिपाठी

श्री त्रिपाठीजी अपने स्कंध में अधिक व्यस्त रहने के बावजूद भी हिन्दी के प्रति पूरा सम्मान दे रहे हैं साथ ही हिन्दी में काम करने के लिए अपने अधीनस्थ कर्मचारियों का उत्साह भी बढ़ा रहे हैं। पत्तन न्यास में यह निर्णय लिया गया कि पत्तन न्यास के सभी अधीनस्थ कार्यालयों में कम से कम एक फाइल का काम हिन्दी मे होना चाहिए। श्री त्रिपाठी इस निर्णय के अनुपालन मे किसी भी प्रकार की ढील नहीं दिए हैं। जैसाकि श्री त्रिपाठी जी अहिन्दीभाषी हैं और राजभाषा कार्यान्वयन के क्षेत्र में प्रसंसनीय कार्य किए हैं।

"हम हिन्द के वासी हैं, हिन्दी में ही बोलेंगे।
राष्ट्रीयता के महामन्त्र को, जनमानस में घोलेंगे।।"

—श्री ज्योतिष कुमार झा (प्रथम)

प्रशिक्षण/भर्ती परीक्षाएं और हिंदी

भारत सरकार, केन्द्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय का दिनांक 15 नवम्बर, 1994 का पत्र सं॰ 19011/3/भा/94 के हि॰प्र॰सं॰

हिंदी प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ के वर्ष 1995 के नई दिल्ली तथा उप-संस्थानों के पूर्णकालिक गहन प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के संदर्भ में।

जैसा कि आपको ज्ञात है यह संस्थान हिंदी प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ के पूर्णकालिक गहन प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों का आयोजन करता है। वर्ष 1995 की समय-सारणी आपको भेजी जा रही है। राजभाषा विभाग के दिनांक 10.9.1987 के कार्यालय ज्ञापन संख्या-18015/6/86-रा॰भा॰ई॰ द्वारा सूचित किया जा चुका है कि केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान द्वारा केंद्रीय सरकार के मंत्रालयों/विभागों/स्वायत्त संस्थानों, संगठनों एवं बैंकों आदि के प्रोबेशन पर तथा नये भर्ती हुए अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए हिंदी प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ पाठ्यक्रमों के पूर्णकालिक गहन हिंदी पाठ्यक्रम आयोजित किए जाते हैं।

2. यह देखा गया है कि नये भर्ती होने वाले कर्मचारियों का हिंदी का प्रशिक्षण नियत समय में पूरा नहीं हो पा रहा है। इसलिए राजभाषा विभाग द्वारा यह प्रयास किया गया है कि नए भर्ती हुए कर्मचारियों को उनके प्रोबेशन के दौरान ही हिंदी में प्रशिक्षित कर दिया जाए। अतः सभी मंत्रालयों/विभागों आदि से अनुरोध है कि नीचे लिखे पाठ्यक्रमों के लिए अपने अधिकारियों/कर्मचारियों को नामित कर इस सुविधा का लाभ उठाएं।

3. वर्ष 1995 के प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ गहन पाठ्यक्रमों की समय-सारणी

सत्र	गहन पाठ्यक्रम	कार्य दिवस	प्रशिक्षण की तिथियां
प्रथम	प्रबोध	25 दिन	1.2.95 से 9.3.95 तक
	प्रवीण	20 दिन	10.3.95 से 7.4.95 तक
	प्राज्ञ	15 दिन	10.4.95 से 2.5.95 तक
द्वितीय	प्रबोध	25 दिन	1.6.95 से 6.7.95 तक
	प्रवीण	20 दिन	7.7.95 से 3.8.95 तक
	प्राज्ञ	15 दिन	4.8.95 से 29.8.95 तक
तृतीय	प्रबोध	25 दिन	4.10.95 से 9.11.95 तक
	प्रवीण	20 दिन	10.11.95 से 7.12.95 तक
	प्राज्ञ	15 दिन	8.12.95 से 29.12.95 तक

4. कृपया यह सुनिश्चित करें कि भविष्य में पूर्णकालिक गहन हिंदी प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में नामित सभी प्रशिक्षार्थियों की सूची संबंधित सहायक निदेशक, गहन हिंदी प्रबोध/प्रवीण/प्राज्ञ पाठ्यक्रम, केन्द्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान तथा उप-संस्थानों को पाठ्यक्रम प्रारम्भ होने से कम से 15 दिन पूर्व अवश्य भेजें तथा उसकी प्रतिलिपि उपनिदेशक, केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, 2ए-पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली को भी प्रेषित करें।

5. **संस्थान/उपसंस्थानों के पते निम्न प्रकार हैं:—**

1. सहायक निदेशक (भाषा), केंद्रीय हिंदी संस्थान, पर्यावरण भवन, नई दिल्ली-3.
2. सहायक निदेशक (भाषा), केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण उपसंस्थान, चौथा तल, शास्त्री भवन, हैडोज रोड, मद्रास-600006.
3. सहायक निदेशक (भाषा), केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण उपसंस्थान, छठा तल, केंद्रीय उत्पाद शुल्क भवन, एल॰बी॰ स्टेडियम रोड, बशीर बाग, हैदराबाद-29.
4. सहायक निदेशक (भाषा), के॰हि॰प्र॰ उप-संस्थान, दूसरा तल, 89/11 जे॰सी॰ रोड, बैंगलूर-560002.
5. सहायक निदेशक (भाषा), के॰हि॰प्र॰ उप-संस्थान, रक्षा लेखा नियंत्रक का कार्या 1 फयानान्स रोड, पुणे-411001.
6. सहायक निदेशक (भाषा), के॰हि॰प्र॰-उप-संस्थान, कामर्स हाऊस, तीसरी मंजिल करीमभाय रोड, बेलार्ड इस्टेट, बम्बई-400038.
7. सहायक निदेशक (भाषा), के॰हि॰प्र॰ उप-संस्थान, जी॰आई॰ प्रेस भवन, 8 किरण शंकर राय रोड, द्वितीय तल, कलकत्ता-700001.

6. हिंदी का प्रशिक्षण प्रबोध, प्रवीण और प्राज्ञ के तीन पाठ्यक्रम मिलाकर पूरा होता है। इस बात को ध्यान में रखकर ये पाठ्यक्रम इस प्रकार रखे गए हैं कि कार्यालय जहां तक संभव हो, प्रशिक्षार्थी को प्रथम पाठ्यक्रम के प्रारम्भ से अन्तिम पाठ्यक्रम तक की सम्पूर्ण अवधि के लिए एक बार ही नामित और कार्यमुक्त कर सकें।

7. मूलतः ये पाठ्यक्रम प्रोबेशन पर चल रहे कर्मचारियों और अधिकारियों के लिए हैं लेकिन हिंदी प्रशिक्षण के लिए बाकी बचे पुराने कर्मचारियों और अधिकारियों को भी नामित किए जाने पर प्रवेश दिया जा सकता है ताकि संबंधित कार्यालय प्रशिक्षण का लक्ष्य निर्धारित समयावधि में प्राप्त कर सकें।

8. संस्थान के पाठ्यक्रम पूर्णकालिक होते हैं, इन्हें नियत कार्यदिवसों में पूरा किया जाता है इस प्रशिक्षण के लिए प्रशिक्षार्थियों को संबंधित कार्यालयों द्वारा कार्यमुक्त किया जाता है। ये कक्षाएं प्रातः 9.30 बजे से सांय 6.00 बजे तक चलाई जाती हैं। प्रशिक्षण की अवधि के दौरान

प्रशिक्षार्थी अपनी ड्यूटी पर माने जाते हैं तथा पाठ्यक्रम की परीक्षा उत्तीर्ण कर लेने पर प्रतिभागियों को प्रमाण-पत्र दिये जाते हैं। ये सभी पाठ्यक्रम निःशुल्क हैं किन्तु बैंकों तथा अन्य सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों आदि की परीक्षा शुल्क के रूप में प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ प्रत्येक परीक्षा के लिए परीक्षा शुल्क 50/- रुपये प्रति प्रशिक्षार्थी की दर से देना होता है।

9. राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के आदेशों के अनुसार हिंदी का सेवाकालीन प्रशिक्षण प्राप्त करना अनिवार्य है और सरकार यथाशीघ्र इस प्रशिक्षण को पूरा कर लेना चाहती है। अतः अनुरोध है कि दिल्ली तथा दिल्ली से बाहर के सभी सम्बद्ध और अधीनस्थ कार्यालयों तथा अपने नियंत्रणाधीन निगमों/उपक्रमों/कम्पनियों/अभिकरणों/संगठनों, स्वायत्त संस्थाओं आदि के प्रशिक्षण के मात्र अधिकारियों/कर्मचारियों को अधिक से अधिक संख्या में नामित करें।

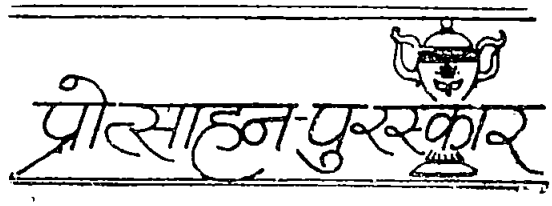

माता कुसुम कुमारी हिंदीतर भाषी हिंदी लेखक-सम्मान

माता कुसुम कुमारी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दीतर-भाषी हिन्दी लेखक सम्मान के अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में न्यायमूर्ति श्री सुरेन्द्र नाथ भार्गव मुख्य न्यायाधीश सिक्किम उच्च न्यायालय ने डा० एम० रंगय्या हैदराबाद डॉ पद्मजा घोरपड़े पूण, श्री र० शौरिराजन मद्रास, सी भास्कर राव बिहार, श्री कोंजेटिरोशय्या वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी को दो—दो हजार रुपये शाल, प्रतीक व प्रमाण पत्र भेंट कर सम्मानित किया। मद्रास के (मरणो परन्त) डॉ टी एस कुप्पु स्वामी कर पुरस्कार श्री र० शौरिराजन ने 5 हजार रुपये का प्राप्त किया। प्रकाशक वर्ग में श्री दिग्दर्शन लाल जैन (ऋषभ चरण जैन एवं सन्तति) नई दिल्ली की चल वैजयन्ती सहित 5 हजार रुपये से सम्मानित किया गया। पत्र सम्पादन हेतु श्री वंशम्पायन घोषाल की अनुपस्थिति रही उन्हें पुर० डाक से भेज दिया जायेगा। समग्र लेखन का पुरस्कार 11000 रु० केरल के डॉ नूरणि ईश्वर विश्वनाथ अय्यर ने महामहिम श्री बृश्की से ग्रहण किया।

डा० अय्यर ने कहा कि पुरस्कार में राशि गौण होती है यह प्रतीक मात्र होते हैं उन्होंने कहा कि माता कुसुम कुमारी के नाम पर प्रदान किया जाने वाला पुरस्कार समस्त हिन्दीतर भाषी प्रान्तों के हिन्दी लेखकों का सम्मान है। उन्होंने कहा कि हिन्दीतर क्षेत्रों में हिन्दी के प्रति जागरूकता व भावना बढ़ रही है। स्वतंत्रता से पूर्व हिन्दी, हिन्दी प्रदेश की भाषा थी किन्तु अब वह सारे देश की भाषा बन चुकी है। उन्होंने जोर देते हुए कहा कि हिन्दी के अखिल भाषा स्वरूप विकास के लिए कार्य करने की आवश्यकता है और यह भी ध्यान रखा जाना आवश्यक है कि भारतीय भाषाओं में हो रहे कार्य हिन्दी की अनेकों शैलियों में भी विकसित हों।

मुख्य अतिथि न्यायमूर्ति श्री सुरेन्द्र नाथ भार्गव ने कहा कि अंग्रेजों ने एक सुनियोजित षडयन्त्र के तहत हमारी संस्कृति पर आक्रमण किया था। यह आक्रमण न्याय के क्षेत्र पर भी था किन्तु न्याय सम्बन्धी कार्यों में हिन्दी व प्रदेश का प्रश्न मुख्य रूप से संकल्प व भावना का प्रश्न है इन क्षेत्रों में हिन्दी का प्रयोग किया जावे तो उससे वादी, प्रतिवादी तथा अभिभाषकों आदि सभी को सुविधा रहेगी। उन्होंने कहा कि साहित्यकारों को अपने वर्तमान से जोड़ना आवश्यक है वे ही समाजिक कुरीतियों और भेदभावों से उत्पन्न होने वाले समय पर ध्यान देने में सक्षम है।

केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो, अनुवाद प्रशिक्षण केन्द्र, बम्बई के 38वें सत्र का प्रमाण-पत्र वितरण समारोह

केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो, अनुवाद प्रशिक्षण केन्द्र, बम्बई के 38वें सत्र का समापन समारोह दिनांक 30 जून, 1994 को सम्पन्न हुआ। इस समारोह के मुख्य अतिथि के रूप में एस०एन०टी०डी० विश्वविद्यालय, बम्बई के हिन्दी विभागाध्यक्ष, डा० उमा शुक्ला उपस्थित रहीं, जिनके कर-कमलों से प्रशिक्षणार्थियों को स्वर्ण, रजत पदक तथा प्रमाण-पत्र वितरित किए गए तथा समारोह की अध्यक्षता, अनुवाद प्रशिक्षण केन्द्र के प्रशिक्षण अधिकारी, श्री नगेन्द्र कुमार मिश्र ने की। समारोह के मुख्य अतिथि डा० शुक्ला ने प्रशिक्षणार्थियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि प्रायः सरकारी कार्यालयों में अनुवाद की भाषा कुछ दरूह-सी होती है। अनुवाद के माध्यम से उसे सरल और सुबोध बनाकर हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार में सहयोग प्रदान करेंगे, जिससे सम्प्रेषण में किसी रकार की बाधा न आए।

इस अवसर पर मिनरल एक्सप्लोरेशन कार्पोरेशन लिमिटेड, नागपुर के श्री कृष्णानंद शुक्ल (कनिष्ठ राजभाषा सहायक) को स्वर्ण पदक तथा भारतीय जीवन बीमा निगम, कार्यालय, बम्बई की श्रीमती मॅटिल्डा स्टनॅली

(सहायक) को रजत पदक प्रमाण-पत्र से सम्मानित किया गया। अन्य 26 प्रशिक्षणार्थियों को भी सफलतापूर्वक प्रशिक्षण प्राप्त करने पर प्रमाण-पत्र दिए गए।

केन्द्र के प्रशिक्षण अधिकारी, श्री मिश्र ने अनुवाद के महत्व पर प्रकाश डाला तथा कहा कि केन्द्रीय कार्यालयों, उपक्रमों व बैंकों के माध्यम से सरकार ऐसी सर्वमान्य सम्पर्क भाषा का विकास करना चाहती है, जिसे प्रत्येक भारतीय सरलता से समझ सकें।

श्री कैलाशनाथ गुप्त परस्कृत

भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली द्वारा आयोजित अखिल भारतीय निबन्ध प्रतियोगिता में श्री कैलाशनाथ, गुप्त, पुलिस अधीक्षक, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो, नई दिल्ली एवं प्रधान, केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद, लोकनायक भवन शाखा, नई दिल्ली को उनके हिन्दी निबन्ध के लिए 1500/रुपये के द्वितीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया। यह पुरस्कार उन्हें संस्था की वार्षिक साधारण सभा के अवसर पर 31 अक्तूबर 94 को प्रदान किया गया। इस प्रतियोगिता की विशेषता यह थी कि चुने हुए विषयों में अंग्रेजी तथा हिन्दी किसी भी भाषा में लेख दिये सकते थे। श्री गुप्त ने हिन्दी ही में लेख देकर व पुरस्कार जीत कर हिन्दी की प्रतिष्ठा बढ़ाई, इसके हेतु वह बधाई के पात्र हैं। उल्लेखनीय है कि अपने कार्यालय में हिन्दी में अत्यधिक डिक्टेशन देकर हिन्दी प्रचार-प्रसार बढ़ाने हेतु श्री गुप्त को पहले ही सम्मानित किया जा चुका है। हिन्दी प्रेमी श्री गुप्त केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद, नई दिल्ली के आजीवन प्रतिनिधि एवं नागरी लिपि परिषद, नई दिल्ली के आजीवन सदस्य भी हैं।

केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो, अनुवाद प्रशिक्षण केन्द्र, बम्बई के 39वें सत्र का प्रमाण-पत्र वितरण समारोह

केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो, अनुवाद प्रशिक्षण केन्द्र, बम्बई के 39वें सत्र का समापन समारोह दिनांक 30 सितम्बर, 1994 को सम्पन्न हुआ। इस समारोह की मुख्य अतिथि डॉ० (श्रीमती) बानी कर, उप निदेशक (पश्चिम) हिन्दी, शिक्षण योजना, राजभाषा विभाग, बम्बई के कर-कमलों से प्रशिक्षणार्थियों को स्वर्ण, रजत पदक तथा प्रमाण-पत्र वितरित किए गए। कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए संयुक्त निदेशक, श्री कृष्ण ना० मेहता ने सरकारी कार्यालयों में अनुवाद की भाषा को जन सामान्य के निकट की सुबोध एवं सरल भाषा बनाने का विशेष आग्रह किया। डा० (श्रीमती) बानी कर ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व ही राजभाषा हिन्दी जन-जन में लोकप्रिय रही है।

इस अवसर पर विदेश संचार निगम लिमिटेड, बम्बई की अनुवादक, श्रीमती संगीता पाध्ये को स्वर्ण पदक तथा इंडियन एयर लाइंस, गोवा के यातायात अधीक्षक डी०वी० वंडेकर को रजत पदक से सम्मानित किया गया। अन्य 11 प्रशिक्षणार्थियों को भी सफलतापूर्वक प्रशिक्षण प्राप्त करने पर प्रमाण-पत्र प्रदान किये गए।

केन्द्र के प्रशिक्षण अधिकारी, श्री नगेन्द्र मिश्र ने अनुवाद के महत्व पर प्रकाश डालते हुए प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी ज्ञानार्जुन में अनुवाद को सशक्त माध्यम बताया तथा सभी का आभार व्यक्त किया।

भारतीय कपास निगम लिमिटेड को आशीर्वाद संस्था द्वारा पुरस्कार

बंबई महानगर की एक साहित्यिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक संस्था, 'आशीर्वाद' द्वारा दिनांक 30.9.1994 को सिडनहॅम कॉलेज के सभागार में आयोजित कार्यक्रम में बंबई स्थित सार्वजनिक उपक्रमों में वर्ष, 1993-94 के दौरान राजभाषा हिंदी के प्रगामी प्रयोग में प्रशंसनीय कार्य हेतु भारतीय कपास निगम लिमिटेड को माननीय मंत्री राजस्व एवं सास्कृतिक कार्य महाराष्ट्र सरकार के श्री विलास राव देशमुख के कर कमलों से प्रथम पुरस्कार 'आशीर्वाद' स्मृति चिन्ह तथा वर्ष, 1994 की चल वैजयन्ती प्रदान कर सम्मानित किया गया, यह पुरस्कार निगम की ओर से श्री मो०ना०जोशी, निदेशक(क्रय-विक्रय) ने ग्रहण, किया. भारतीय कपास निगम लिमिटेड, के श्री मा०बि०लाल, अध्यक्ष एवं प्रबन्ध निदेशक महोदय को हिंदी में किये गये सराहनीय कार्य के लिए विशेष रूप से सम्मानित किया गया। यह विशेष सम्मान अध्यक्ष एवं प्रबन्ध निदेशक की ओर से श्री मो०ना०जोशी, निदेशक (क्रय / विक्रय) महोदय ने ग्रहण किया.

नौवहन महानिदेशालय राजभाषा चल शील्ड एवं पुरस्कार वितरण

नौवहन महानिदेशालय, भारत सरकार की राजभाषा नीति का अनुपालन सुनिश्चित कराने और सरकारी कामकाज में हिन्दी का प्रयोग, स्वस्थ प्रतिस्पर्धा तथा प्रोत्साहन के माध्यम से बढ़ाने रहने के लिए लगातार प्रयत्न करता रहा है। इसी क्रम में वर्ष 1991 से **"नौवहन महानिदेशालय राजभाषा चल शील्ड"** की शुरूआत की गई है। इन शील्डों की संख्या तीन है, जिनमें से एक मुख्यालय के अनुभागों, दूसरा "ख" क्षेत्र में स्थित संबंध/अधीनस्थ कार्यालयों एवं अंतर राष्ट्रीय स्तर की शिक्षण संस्थाओं तथा तीसरा "ग" क्षेत्र में स्थित संबंध/अधीनस्थ कार्यालयों और अंतर राष्ट्रीय स्तर की शिक्षण संस्थाओं के लिए है।

पिछले वर्ष हिन्दी में सबसे अधिक और सबसे अच्छा काम करने के लिए, मुख्यालय के कार्मिक अनुभाग, "ख" क्षेत्र में स्थित सरकारी नौवहन कार्यालय, बमबई और "ग" क्षेत्र में स्थित समुद्री वाणिज्य विभाग, गोवा ने नौवहन महानिदेशालय राजभाषा चल शील्ड जीता।

नौवहन महानिदेशक एवं पदेन अपर सचिव भारत सरकार की ओर से, भारत सरकार के मुख्य सर्वेक्षक श्री आर० जी० सिंह ने दिनांक 24 मई, 1994 को समुद्री वाणिज्य विभाग, गोवा के प्रभारी सर्वेक्षक, श्री राजेन्द्र कुमार, सरकारी नौवहन कार्यालय, बम्बई के सहायक शिपिंग मास्टर श्री ए० जी० वैद्य, मुख्यालय के कार्मिक अनुभाग के सहायक नौवहन महानिदेशक, श्री एच० पी० शर्मा को उपर्युक्त शील्ड प्रदान किया।

इस अवसर पर हिंदी टंकण की परीक्षाओं में उच्च स्थान पाने वाले दो कर्मचारियों, श्री विलास कांबले और श्री ब्रज सुंदर दास को भी पुरस्कृत एवं सम्मानित किया गया। मराठी भाषी श्री कांबले ने 95 प्रतिशत और

बंगला भाषी श्री दास ने 90 प्रतिशत अंक प्राप्त किए हैं। इसके अलावा मराठी भाषी अवर श्रेणी लिपिक, कु० अर्चना नाईक को हिंदी टंकण की परीक्षा में 89 प्रतिशत अंक प्राप्त करने के उपलक्ष्य में सम्मनित किया गया।

उपर्युक्त शील्ड एवं पुरस्कार विरतण समारोह में मुख्यालय के अधिकारियों एवं कर्मचारियों के अलावा, जल भूतल परिवहन मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति के सम्मानित सदस्य प्रो० (डा०) अमरनाथ बी० दुबे, केन्द्रीय राजभाषा परिषद के अध्यक्ष, श्री इन्द्रजीत त्रिपाठी "राष्ट्रीय" तथा लाल बहादुर शास्त्री उन्नत समुद्रीय अध्ययन एवं अनुसंधान महाविद्यालय के प्राचार्य, कैप्टन एस०एस०एस० रिवाड़ी ने भी भागीदारी की।

नौवहन टैक्स्टाइल कारपोरेशन (एम० एन०) लि०, बम्बई निगम कार्यालय को द्वितीय पुरस्कार

वर्ष 1993-94 के दौरान कार्यालयीय कामकाज में राजभाषा के उत्कृष्ट कार्यान्वयन के लिए भारत सरकार के बम्बई स्थित सार्वजनिक उपक्रमों/निगमों की नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा एन०टी०सी० (एम०एन०) लि०, बम्बई के निगम कार्यालय को (300 तक कर्मचारियों के "ख" समूह में) द्वितीय पुरस्कार प्रदान किया गया। पुरस्कार वितरण समारोह दिनांक 8-6-1994 को एस०एस० हॉल, वानखेडे स्टेडियम, चर्चगेट, बम्बई में संपन्न हुआ तथा समारोह के मुख्य अतिथि श्री चन्द्रधर त्रिपाठी, सचिव, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के कर-कमलों से पुरस्कार प्रदान किए गए। निगम की ओर से डा० लल्लन पाठक, वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी ने पुरस्कार ग्रहण किया।

उल्लेखनीय है कि इस निगम को पिछले तीन वर्षों से लगातार नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति से शील्ड (चल वैजयंती) पाने का गौरव प्राप्त हो रहा है।

केन्द्रीय उत्पाद शुल्क एवं सीमा शुल्क समाहर्तालय पी०ब०नं० 10, माणिकबाग पैलेस, इन्दौर

केन्द्रीय उत्पाद शुल्क एवम् सीमाशुल्क मुख्यालय कार्यालय के निम्नांकित कर्मचारियों को वर्ष 1993-94 के दौरान सरकारी कामकाज मूलरूप से हिंदी में करने के लिए प्रोत्साहनस्वरूप, पुरस्कार राशि दी गई है:—

सर्वश्री किशोर कुमार पटेल, ड्राफ्ट्समेन (प्रशासन), कैलाश वर्मा, कर सहायक (स्थापना-I) राकेश श्रीवास्तव, नि०श्रे०लि० (प्रशासन), गिरीश काले, नि०श्रे०लि० (प्रशासन), वि० एम० कोहद, नि०श्रे०लि० (स्थापना-II), मोतीलाल मीना, उ०श्रे०लि० (स्थापना-I), दशरथ दायर, नि०श्रे०लि० (स्थापना-I), (ले० एन० ढाली, नि०श्रे०लि० (स्थापना-II), आर०बी० चक्रवर्ती, उ०श्रे०लि० (स्थापना-II) तथा नितिन जैन, नि०श्रे०लि० (प्रशासन)

बोकारो स्टील प्लांट एवं बोकारो नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति प्रथम पुरस्कार से सम्मानित

भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, पूर्वी क्षेत्र (कार्यान्वयन) द्वारा 13 अगस्त, 1994 को भुवनेश्वर (उड़ीसा) में आयोजित राजभाषा सम्मेलन में बोकारो स्टील प्लांट एवं बोकरो नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति को प्रथम पुरस्कार स्वरूप अलग-अलग शील्ड प्रदान किये गये। उड़ीसा के महामहिम राज्यपाल श्री सत्य नारायण रेड्डी से उक्त दोनों शील्ड बोकारो स्टील प्लांट के श्री जीवन लाल नामदेव, सहायक महाप्रबंधक (संपर्क एवं प्रशासन) ने प्राप्त किया। राजभाषा विभाग, पूर्वी क्षेत्र के अधीन "क" क्षेत्र के उपक्रमों में किये गये राजभाषा कार्यान्वयन संबंधी नीति के सर्वोत्कृष्ट अनुपालन के लिए बोकारो स्टील प्लांट को प्रथम पुरस्कार मिला और बोकारो नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति को राजभाषा विभाग, पूर्वी क्षेत्र स्थित नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों में सराहनीय कार्य हेतु प्रथम पुरस्कार मिला। शील्ड के साथ बोकारो नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, बोकारो स्टील प्लांट, श्री बृजपाल क्षत्रिय एवं समिति के सदस्य सचिव तथा सहायक महाप्रबंधक (संपर्क एवं प्रशासन) श्री जीवन लाल नामदेव को राजभाषा के रूप में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग को बढ़ाने के लिए प्रशंसा पत्र भी प्रदान किये गये। श्री योगेन्द्र प्रसाद साहु, उपमुख्य (संपर्क एवं प्रशासन) राजभाषा विभाग को भी 1992-93 में राजभाषा नीति के सफल कार्यान्वयन के लिए प्रशस्ति पत्र प्रदान किया गया। इस अवसर पर माननीय गृह उपमंत्री श्री रामलाल राही एवं श्री चन्द्रधर त्रिपाठी, सचिव, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार भी उपस्थित थे। उक्त सम्मेलन का उद्घाटन माननीय गृह उपमंत्री ने किया।

उक्त दो पुरस्कारों के अलावा इन्दिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार योजना के अन्तर्गत वर्ष 1992-93 के लिए बोकारो नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति "क" क्षेत्र में प्रथम पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

इस तरह बोकारो इस्पात संयंत्र अपने कार्यालयों में राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए पुरजोर प्रयास करने के अलावा बोकारो नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य संगठनों के कार्यालयों में भी राजभाषा हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए भरपूर प्रयास कर रहा है। यह "सेल" परिवार के लिए एक उल्लेखनीय उपलब्धि है। ध्यातव्य है कि बोकारो इस्पात संयंत्र को वर्ष 1989-90 में राजभाषा हिन्दी के सफल कार्यान्वयन के फलस्वरूप "सेल" अध्यक्ष द्वारा 1991 में अध्यक्षीय राजभाषा शील्ड प्राप्त हुआ था और बोकारो नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति को पूर्वी क्षेत्र के अन्तर्गत वर्ष 1991 में तृतीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

दक्षिणी क्षेत्र राजभाषा अधिकारी सम्मेलन एवं प्रामण-पत्र व शील्ड वितरण समारोह

दक्षिणी क्षेत्र में वर्ष 1994-95 का क्षेत्रीय राजभाषा अधिकारी सम्मेलन, एन०एम०डी०सी०लि० हैदराबाद के सौजन्य से 8.8.94 को हैदराबाद एमराल्ड होटल के सम्मेलन कक्ष में एन०एम०डी०सी० के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री सी० एस० मोहन की अध्यक्षता में संपन्न हुआ जिसमें राजभाषा विभाग के सम्मानीय सचिव महोदय श्री चन्द्रधर त्रिपाठी विशेष अथिति थे।

सम्मेलन के समापन सत्र में सचिव महोदय ने इस क्षेत्र में वर्ष 1992-93 की अवधि के दौरान, राजभाषा कार्यान्वयन में उत्तम निष्पादन के लिए चयनित नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों, केन्द्रीय कार्यालयों, उपक्रमों और बैंकों को प्रमाणपत्र व शील्ड प्रदान करके सम्मानित किया।

सचिव महोदय ने अपने उद्‌बोधन में इस बात पर जोर दिया कि राजभाषा कार्यान्वयन की जिम्मेदारी संबंधित कार्यालयों के अध्यक्षों की जिम्मेदारी हैं। राजभाषा नियम 12 के द्वारा यह जिम्मेदारी उन्हीं को सुपुर्द की गयी है। हिंदी अधिकारी, विशेषज्ञ अधिकारी है। उनकी सेवा का नियमानुसार सदुपयोग करते हुए दूसरे सभी संबंधित अधिकारियों और कर्मचारियों के द्वारा अपेक्षित कार्यालयीन कार्य हिंदी में निष्पादित करने कारगर कदम उठाना उनकी जिम्मेदारी है। राजभाषा विभाग के प्रति कार्यालयाध्यक्ष ही जवाबदार हैं। यह उनका सरकारी दायित्व है। सचिव महोदय ने चाहा कि हर राजभाषाधिकारी / हिंदी अधिकारी इस तथ्य को संबंधित उच्च पदाधिकारियों को अवगत कराकर, वार्षिक कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्य प्राप्ति के लिए भरसक कोशिश करें।

प्रतिभागी अधिकारियों ने अपनी-अपनी कठिनाईयां पेश की। क्षेत्रीय कार्यालय की तरफ से उप निदेशक श्री डी० के० पणिक्कर ने पेश की गयी हर समस्या का व्यवहारिक समाधान देते हुये स्पष्ट किया कि इस संबंध में हर संभव सहयोग सहायता और सही सलामत उनके कार्यालय से संप्राप्त है और आगे भी संप्राप्त होता रहेगा।

उद्‌घाटन और समापन सत्र के बीच में कार्यसत्र का संचालन क्षेत्रीय कार्यालय की तरफ से अनुसंधान अधिकारी श्री एन० ठाकुर ने चलाकर, हिंदी अधिकारियों का हौसला बढ़ाया और उन्हे आगे बढ़ने के लिए ठीक दिशाबोध दिया।

आखिर प्रयोजक कार्यालय के प्रबंधक (रा०भा०) श्री गोवर्धन ठुकर ने, अपने संस्थान को इस राष्ट्र निर्माण कार्य में महत्ती भूमिका निभाने का मौका प्रदान करने के लिए, राजभाषा विभाग को खासकर उप निदेशक श्री श्री० के० पणिक्कर को हार्दिक धन्यवाद देते हुये और आगे भी इस महान परंपरा का बनाये रखने का वादा करते हुये, भव्य मारोह का समापन किया।

आयुध निर्माणी खमरिया की प्रतिभा—"सुशील आनंद"

देश को समर्पित सेवा के स्वर्णिम 50 वर्ष पूर्ण करने के उपलक्ष्य में आयुध निर्माणी अम्बरनाथ द्वारा वर्ष 1993-94 को स्वर्ण जयंती वर्ष के रूप में मनाया गया और इसी अवसर पर अखिल भारतीय स्तर पर आयुध निर्माणी संगठन तथा सम्बद्ध संस्थानों के सभी कर्मचारियों के लिए "संपूर्ण गुणवत्ता प्रबंधन में निर्माणियों के कर्मचारियों का योगदान" विषय पर एक निबंध प्रतियोगिता का हिंदी, अंग्रेजी तथा मराठी तीन भाषाओं में आयोजन किया गया।

इस प्रतियोगिता में आयुध निर्माणी खमरिया जबलपुर के क्यू०पी० एंड ई० अनुभाग में कार्येक्षक के पद पर कार्यरत श्री सुशील आनंद ने हिंदी भाषा में निबंध लिखकर पूरे संगठन एवं सम्बद्ध संस्थानों में प्रथम स्थान प्राप्त कर सिद्ध कर दिया कि आयुध निर्माण खमरिया सिर्फ गोलाबारूद के निर्माण में ही नहीं अपितु राजभाषा कार्यान्यवन के क्षेत्र में भी श्रेष्ठ है।

आयुध निर्माणी अम्बरनाथ में स्वर्ण जयंती के उपलक्ष्य में आयोजित समारोह के दौरान श्री सुशील आनन्द को रु० 1000/- पुरस्कार देकर सम्मानित किया गया।

एक दिन हिन्दी एशिया में नहीं, विश्व की पंचायत में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगी ।

गणेश शंकर विद्यार्थी

राष्ट्रभाषा हिन्दी किसी व्यक्ति या प्रांत की सम्पत्ति नहीं है, उस पर सारे देश का अधिकार है।

सरदार वल्लभभाई पटेल

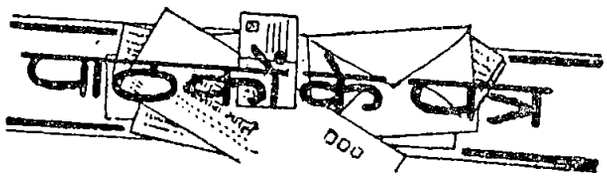

"राजभाषा भारती" का प्रत्येक अंक स्थाई रूप से संग्रह करने योग्य है क्योंकि इसमें राजभाषा हिंदी के प्रयोग संबंधी समस्याओं के निराकरण के विषय में अनुभवी शासकों और विद्वानों के लेख तो रहते ही हैं, सरकारी कार्यालयों में हिंदी के बढ़ते हुये प्रयोग के बारे में भी जानकारी रहती है। हिंदी सलाहकार समितियां, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों और अन्य राजभाषा सम्मेलनों के कार्यवृत्त भी इसमें छपते हैं जिससे कि पाठकों पर यह प्रभाव रहता है कि हिंदी के व्यवहार पक्ष को सफल बनाने के लिए कितने गम्भीर प्रयत्न किये जा रहे हैं। अन्य निजी समाचार पत्रों और पत्र-पत्रिकाओं में हिंदी के प्रयोग संबंधी हीन भावना भरे लेख रहते हैं। राजभाषा पत्रिका उनसे उत्पन्न कोहरे को दूर करती है और एक उत्साहमय आशा का संचार करती है। उससे ऊर्जा लेकर अधिकारियों और कर्मचारियों को हिंदी में काम करने की प्रेरणा और मार्ग दर्शन मिलता है। आपके पिछले कुछ अंक तो विशेष रूप से एक से एक उत्तम और आकर्षक बने हैं, जो बरबस पाठक को उन्हें पढ़ने के लिए मजबूर कर देते हैं। इस सफल परिवर्तन के लिए आप तथा आपके सभी सहयोगी बधाई के पात्र हैं। आपके सचिव एवं संयुक्त सचिव भी विशेष रूप से प्रशंसनीय हैं जिनके सहयोग के बिना ये इतने सुंदर अंक छप पाना कठिन होता।

—जगन्नाथ, संयोजक केन्द्रीय सचिवालय हिंदी परिषद, एक्स वाई-68, सरोजिनी नगर, नई दिल्ली-23।

"राजभाषा भारती" अंक 64 की एक प्रति साभार प्राप्त हुई। पत्रिका का हमने अवलोकन किया तथा यह पाया कि पत्रिका में प्रकाशित सभी लेख स्तरीय एवं ज्ञानवर्धक हैं।

—नरसिंह राम, सहायक निदेशक (राजभाषा) परमाणु ऊर्जा विभाग, तूतीकोरिन—628007, तमिलनाडु।

"राजभाषा भारती" के माध्यम से आप राष्ट्र भाषा हिंदी की सराहनीय सेवा कर रहे हैं। राजभाषा भारती ने केवल कार्यालयीन हिंदी के प्रचार प्रसार का काम रही है अपितु साहित्यिक एवं चिंतन परक रचनाओं को प्रकाशित कर सृजनात्मक साहित्य को संवर्धित कर रही है। इस पत्रिका में प्रकाशित रचनाएं अपना साहित्यिक मूल्य भी रखती हैं। इस पत्रिका के माध्यम से आप हिंदी भाषा तथा साहित्य के लिए उर्वरक भूमि तैयार कर रहे हैं। पत्रिका के निरंतर विकास के लिए मेरी शुभकामनाएं।

—राम गोपाल सोनी, एफ-4, इन्द्रलोक अर्पामेंटस तेलन्मखेदी लेआउट, अमरावती रोड़, नागपुर—440010।

उक्त पत्रिका में प्रकाशित सभी सामग्री ज्ञानवर्धक एवम् उत्तम है। यह पत्रिका दिन रात चौगुनी तरह फलती फूलती रहें, यही मेरी हार्दिक कामना है।

—अधिशासी (का एवम् प्र०), द मणया नेशनल पेपर मिल्स लि० वेलागुला—571606 (कर्नाटक)

कार्यालयीन कामकाज में राजभाषा हिंदी को बढ़ावा देने में भारती का महत्वपूर्ण योगदान प्राप्त होता है। इस कार्यालय के कर्मचारी तथा अधिकारी वर्ग इस पत्रिका का जठण करते हैं। हिंदी की कार्य-प्रेरणा जागृत करने में "राजभाषा भारती" एक दीपस्तंभ समान मालूम होता है।

—विजय प्रभाकर कांबले, हिंदी अनुवादक दूरसंचार जिला प्रबंधक का कार्यालय अहमदनगर—414001 (महाराष्ट्र)

"राजभाषा भारती" प्रकाश स्तम्भ की भांति है जो न सिर्फ राजभाषा कार्यान्वयन क्षेत्र की गतिविधियों पर प्रकाश डालती है वरन् कार्यान्वयन के लिए मार्ग प्रशस्त भी करती है।

—डा० जगन्नायर, अंचल प्रबंधक राजभाषा कक्ष, इंडियन बैंक, वर्ल्ड ट्रेड सेंटर, बाबर रोड, नई दिल्ली।

"राजभाषी भारती" पत्रिका का 62 वां अंक पढ़ा। अंक अत्यंत महत्वपूर्ण, ज्ञानप्रद, रोचक तथा उपयोगी है। "चिंतन" के अंतर्गत प्रकाशित लेख "भारतीय जनमानस और भाषीय अस्मिता" में व्यक्त विचार वास्तव में पाठनीय हैं। लेखक डा० रामगोपाल सोनी के उपरोक्त लेख में लेखक की निम्नांकित पंक्तियां विशेष रूप से उल्लेखनीय लगीं:

"भाषायी अस्मिता के द्वारा ही हम उच्च प्रजांतत्र की स्थापना कर सकते हैं और एक नए भारत का निर्माण कर सकते हैं"

"चैक भी हिन्दी में लेखे" अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसके अंतर्गत चेक हिन्दी में जारी करने से संबंधित अत्यंत उपयोगी बातें बताई गई हैं।

"राजभापा भारती" पत्रिका राजभापा से संबंधित भारत सरकार की नीति, राजभाषा नीति का कार्यान्वयन, सरकार द्वारा जारी आदेश, अनुदेश आदि के बारे में आवश्यक जानकारी पाठकों के सामने प्रस्तुत करने वाली स्तरीय पत्रिका है। पत्रिका का हर अंक अत्यंत सावधानी से एवं परिश्रमपूर्वक बनाया हुआ होता है। इसलिए पत्रिका का हर अंक न केवल पठनीय, बल्कि संग्रहणीय भी होता है। इस पत्रिका की जितनी प्रशंसा की जाए उतनी कम ही है।

—(डा० लल्लन पाठक,) वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी, एन०टी०सी० हाउस, 15 एन०एम० मार्ग, बम्बई, 400 038

"राजभाषा भारती" का उक्त अंक मिला, धन्यवाद। नव-वेश विन्यास तथा उत्कृष्ट मुद्रण एवं शोधात्मक तथा सूचनाप्रद लेखों के कारण यह अंक अपने आप में अभिनव है। बिना मूल्य मिलने वाली इस पत्रिका में अमूल्य सामग्री रहती है, सुयोग्य प्रकाशन हेतु बधाई।

—शिव शंकर वर्मा, सदस्य सचिव, देना बैंक, देना लक्ष्मी बिल्डिंग, चौथी मंजिल, 188-ए, आश्रम रोड, पो०बा० 4089 नवरंग पुरा, अहमदाबाद-380009.

"राजभाषा भारती" के सभी अंकों का अवलोकन मैंने किया है। पत्रिका में प्रकाशित लेख सुन्दर और सुरूचिपूर्ण हैं, संक्षिप्त तथा सारगर्मित हैं। हिन्दी के विकास और प्रसार के साथ-साथ इससे राष्ट्रीय एकता की भावना को भी बढ़ावा मिलता है। यह राष्ट्रीय स्तर पर सबसे स्तरीय एवं पठ्नीय पत्रिका है।

—शशि भूषण सिंह, महामंत्री, शहीद बच्चन स्मारक पुस्तकालय सिवान 841226 बिहार

"राजभाषा भारती" त्रैमासिक पत्रिका भारतीय जीवन संस्कृति एवं उससे जुड़े अन्यान्य पहलुओं पर विद्धानों के उत्कृष्ट विचारों का एक मात्र संकलित रूप है। साथ ही इस पत्रिकका में भाषा की सरलता एवं भावनाओं की सादगी सहज रूप से परिलक्षित होती हैं।

—शुभ यश राम, राजभाषा अधिकारी, एन०टी०पी०सी० कहलगांव परियोजना, पो० कहलगांव-जि० भागलपुर, बिहार

"राजभाषा भारती" अक्तूबर-दिसम्बर, 1993 का अंक 63 प्राप्त हुआ। अत्यधिक प्रसन्नता हुई। हार्दिक धन्यवाद।

राजभाषा हिन्दी के प्रचार, प्रसार व विकास कार्य के साथ भारतीय भाषाओं के बहुमुखी विकास में पत्रिका सराहनीय योगदान कर रही है। संपादकीय विवरण के साथ साथ चिंतन में प्रकाशित समग्र लेख आकर्षक, रोचक, ज्ञानवर्धक व पठनीय रहे। अन्य स्तम्भ भी उपयुक्त सामग्री प्रस्तुत करते हैं।

राजभाषा विषयक संघ की नीति को स्पष्ट करने में 'राजभाषा पत्रिका' अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

पत्रिका के संपादक, उपसंपादक, संपादन सहायक, प्रकाशक तथा समस्त लेखकगण धन्यवाद के पास हैं।

पत्रिका के उज्जवलतम् भविष्य के लिए हार्दिक शुभ कामनाएं अर्पित हैं। सधन्यवाद।

—डॉ शहाबुद्दीन नियाज मुहम्मद शेख, कार्याध्यक्ष, राष्ट्रीय हिन्दी परिषद, काजी बिल्डिंग, नेवसा-414 603, जिला-अहमदनगर (महाराष्ट्र)

कुछ महीने पूर्व, 'पुलिस अन्वेषण' जैसे तकनीकी प्रकार के पुस्तक की समीक्षा को 'राजभाषा भारती' में पढ़कर प्रसन्नता हुई। यह हिंदी (नागरी लिपि) के प्रचार-प्रसार में सहायक है।

—ति० कृ० राजामणि ऐयर, 14-7, दक्षिण बस्ती, डा० कांसबाहाल, उडिसा-770034.

"राजभाषा भारती" जनवरी-जून 1993 का अंक मिला पत्रिका के अन्तर्गत चिंतन पुस्तक समीक्षा आदि विषय काफी रूचिकर है पत्रिका में केन्द्रीय कार्यालयों की गतिविधियों का समावेश निश्चय ही हिन्दी की प्रगति में सहायक है लेकिन देहातों में स्थित या पिछड़े जिलों के कार्यालयों में होने वाली हिन्दी दिवस की गतिविधियों को विशेष स्थान दिया जाना दिया जाना चाहिये क्योंकि इसकी ज्यादा आवश्यकता पिछड़े इलाकों को है। फिर भी इस पत्रिका का इस कार्यालय में आना प्रशंसनीय है।

—कमल कुमार, स्टेशन इंजीनियर, स्थानीय आकाशवाणी केन्द्र, (एफ०एम०) बीड़-महाराष्ट्र-431122.

"राजभाषा भारती" अंक 62 देखने का अवसर प्राप्त हुआ, इस अंक के "चिंतन" खण्ड में अनेक सूचनाबद्ध एवं रोचक लेख पढ़ने को मिले। इस खण्ड में प्रकाशित श्री निशिकान्त महाजन द्वारा लिखित लेख "संघ की राजभाषा नीति एवं प्रशासन के विभिन्न पहलुओं पर विधिवत प्रकाश डाला गया है तथा इससे संबंधित अद्यतन जानकारियों को उद्धृत करके लेखक महोदय ने राजभाषा से जुड़े हुए लोगों के लिए एक समुचित एवं नियमानुकुल मार्ग प्रशस्त किया है। इस लेख के पूववर्ती अंक मुझे देखने को प्राप्त नहीं हुए किन्तु इस सामप्य अंक को पढ़कर उक्त अंकों को देखने की जिज्ञासा जागृत हुई है।

—आनन्द प्रकाश राय, भूवैज्ञानिक भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण उत्तरी क्षेत्र, सेक्टर ई हिमालयन भूविज्ञान प्र-भाग 9 वां तल बी ब्लाक कमरा संख्या 961 अलीगंज लखनऊ-2260201

हमें राजभाषा भारती के अंक कभी-कभी महालेखाकार कार्यालय में देखने को मिलतें हैं। इनमें प्रकाशित सामग्री रोचक प्रेरक और उत्साहवर्धक है। शोधपरक लेख भी प्रकाशित हुए हैं। हमारे मित्रों में पत्रिका अति उपयोगी होगी।

—डॉ विजय नारायण गुप्त, सी-23, स्टेट बैंक कालोनी, भुवनेश्वर-1

"राजभाषा भारती" का जनवरी-मार्च 1994 का अंक प्राप्त हुआ। पत्रिका को आद्योपन्त पढ़ा। इसमें जिस परिश्रम से समाग्री का चयन किया गया है उससे पत्रिका पठनीय ही नहीं संग्रहणीय भी बन गई है। श्री कृष्णकुमार ग्रोवर का 'संसदीय राजभाषा समिति' एक उपयोगी दस्तावेज है। 'राजभाषा नीति एवं कम्प्यूटरीकरण' सामयिक आवश्यकता की पूर्ति करता हूं। इस सम्बन्ध में और भी काम किया जाना भाषाई दौड़ के लिए आवश्यक है। श्री मयूरव का लेख देश की भाषाई एकता पर अच्छा प्रकाश डालता है। डॉ० दलसिंगार यादव ने रेडियो और दूरदर्शन की भाषा पर एक अछा प्रबन्ध प्रस्तुत किया है। किंतु 'सरलता' का मुद्दा उलझा ही रह गया' 'सरलता एक सापेक्ष तथ्य है। फिर भी उनका यह निष्कर्ष कि जब तक मूल लेखन में हिंदी का प्रयोग नहीं होगा तब तक सम्प्रेषणीयता की समस्या बनी रहेगी।" एक स्वीकार्य वास्तविकता है। 'भारतीय भाषा संगम एक उपयोगी स्तम्भ है। सरकारी कामकाज की भाषा के सम्बन्ध में और भी उपयोगी सामग्री कार्यरत कर्मचारियों के मार्गदर्शन हेतु दी जा सकती है।

सम्पादक को पुनः बधाई

—डा० परमानन्द पांचाल, 232ए-पाकेट-1, मयूर विहार, दिल्ली-110091

"राजभाषा विभाग" की पत्रिकाओं को बराबर पढ़ता हूं और यदा कदा राजभाषी भारती के लिए लेख भी लिख देता हूं। मैंने नोटिस किया है कि जब से आपने कार्यभार संभाला है, इन पत्रिकाओं की साज-सज्जा में गुणात्मक सुधार हुआ है। इन में छपी सामग्री भी काफी रोचक, पठनीय तथा ज्ञानवर्धक है। निश्चय ही आप की साहित्यिक अभिरूचि इन में परिलक्षित हो रही है। इस के लिए मैं आपको ह्रदय से बधाई देता हूं।

—निशिकान्त महाजन, 48-सी, एम०आई० जी० फ्लैट, राजौरी गार्डन, नई दिल्ली-27

अंक 63. अक्तूबर-दिसंबर 1993: आकर्षक साज-सज्जा से प्रस्तुत अंक राजभाषा हिन्दी का बहुआयामी स्वरूप पेश कर स्वभाषा-बोध जाग्रत करती है। राजभाषा हिन्दी और भारतीय भाषाओं के प्रति स्वाभिमान जगाने और हीनता की भावना को तोड़ने के लिए यह पत्रिका निरंतर प्रयत्नरत है और कुछ हद तक स्वभाषाभिमान को जगाने में यह सफल भी रही है

"तकनीकी शब्दावली को नई दिशा" में प्रो॰ सूरजभान सिंह की इस अवधारणा से असहत नहीं हुआ जा सकता कि शब्दों की सिद्धि जनता के प्रयोगशाला में जाने के बाद ही होती है। किसी भी भाषा के शब्द कठिन नहीं होते-प्रयोग की निरंतरता के बाद कठिन भी आसान और हस्तामलकवत लगने लगते हैं। डा॰ शंकर दयाल सिंह ने अपने निबंध में प्रतिपादित किया है कि हिन्दी की प्रगति में अहिन्दी भाषी मनीषियों और नेताओं का अवदान अमूल्य है। "स्वभाषा-चेतना और ग्रामीणांचल" में डा॰ शीलम वेंकटेश्वर राव ने स्वभाष-चेतना आंदोलन को जनांदोलन बनाने पर बल दिया है। इस अंक के और निबंध भी रोचक और ज्ञानवर्धक हैं।

—वीरेन्द्र कुमार सिंह, हिन्दी प्राध्यापक, हि॰शि॰यो॰, राजभाषा विभाग, भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण, ईटानगर-791 111

"राजभाषा भारती" का अंक 62 साभार प्राप्त हुआ। इस वर्तमान अंक की साम्रगी पिछले अंक के सामग्री की भांती स्तरीय एवं उच्चकोटि की है। भारतीय भाषा संगम के उर्दू की कविताओं का संक्षिप्त परिचय बहुत अच्छा है। चिन्तन के अन्तर्गत भाषायी अस्मिता एवं भारतीय जनमानस नामक लेख के द्वारा भाषा संबंधी समस्त निगुड रहस्यों का परिचय मिला है। साथ ही जिस्ट टेक्नालोजी का लेख भी बहुत ही लाभप्रद एवं उल्लेखनीय है। यह पत्रिका हिन्दी के बहूमुखी विकास में रीड की हड्डी की तरह कार्य कर रहा है। इससे बहुत सारे कार्यालयों के राजभाषा के कार्यान्वयन का परिचय भी मिलता है। पत्रिका के कुशल सम्पादन के लिए सम्पादक मंडल को हमारी कम्पनी की ओर से बधाई स्वीकार करें।

—ओ॰ सत्यानाराण राव, राजभाषा अधिकारी, हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड, जिंक लेट स्मेल्टर, विशाखापट्टणम -530 015

"राजभाषा भारती" का संयुक्तांक 60-61 प्राप्त हुआ। धन्यवाद। इस अंक से अपाके साहित्यिक व्यक्तित्व, बोध और समझ का सहज ही पता चलता है। हमारे प्रधान कार्यालय के स्टाफ सदस्यों ने इस अंक को विशेषरूप से पठनीय और सराहनीय समझा है। उल्लेखनीय है कि उक्त अंक में हिन्दी भाषा, शब्दावली, व्याकरण और उसके राजभाषायी स्वरूप से संबंधित वैचारिक लेखों का सुन्दर संयोजन बन पड़ा है। दरअसल, विचार-प्रधान ये लेख अपने रूपाकार में और अधिक व्यापक और गहन होते तो इनकी पठनीयता और उपादेयता कदाचित् अधिक बढ़ जाती।

—देवेन्द्रनाथ त्रिवेदी, प्रबन्धक (हिन्दी), भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक, विकास दीप, छठी और सातवीं मंजिल,, 22 स्टेशन रोड, लखनऊ - 226019.

प्रचार-प्रसार में "राजभाषा भारती" आपके सम्पादकत्व में अपनी सार्थक भूमिका निभा रही है। "हिन्दी-कहां? कितनी?" विषयक जानकारी देने में पत्रिका का योगदान श्लाध्य है। चिन्तन, साहित्यिकी, पुरानी यादें-नए परिप्रेक्ष्य, विश्वहिन्दी दर्शन और भारतीय भाषा-संगम, स्तम्भ, सम्पादक-मंडल की सूझबूझ के परिचायक हैं। पत्रिका के अन्य खण्ड भी अनूठे हैं और पत्रिका, सूचनापरक होते हुए भी पाठकों के लिए बोझिल नहीं होने पाती। बधाई।

—रमेश कुमार श्रीवास्तव, हिन्दी अधिकारी, आई टी आई लिमिटेड, मनकापुर - 271308, जिला - गोण्डा (उ॰ प्र॰)

"राजभाषा भारती" हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार में एक कड़ी का काम कर रही है। इसमें लेख महत्वपूर्ण और सारगर्भित हैं जिससे सरकारी कार्यालय में कार्यरत अधिकारियों और कर्मचारियों को अपना काम हिन्दी में करने में सहायता मिलती है।

आपके सम्पादकत्व में पत्रिका और अधिक सारग्राही बनेगी, ऐसी मैं कामना करता हूं।

—एस॰ डी॰ पाण्डेय, कार्यालय, आयकर आयुक्त (केन्द्रीय), 7/81 - बी, तिलकनगर, कानपुर

इसका स्तर बहुत ऊंचा और आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि सम्पन्न है। बातों को तथ्य परक, वस्तुनिष्ठ और अखिल भारतीय स्वर-स्तर पर प्रस्तुत किया गया है। जिस श्रम और सूझ-बूझ के साथ आपने इसे उपयोगी बनाया है उसने इसे मात्र सरकारी पत्रिका होने से बचा लिया है। इसके पीछे जिस प्रकार योजनाबद्ध, सुविचारित संकल्प-भावना है आशा है बनी रहेगी।

—डॉ॰ विवेकी राय, विवेकी राय मार्ग, बड़ीबाग, गाजीपुर

"राजभाषा भारती" का अंक (62) प्राप्त हुआ। विभाग की मासिक और तिमाही पत्रिका के सफल संपादन के लिए आप बधाई के पत्र हैं। 26 जून को माननीय राष्ट्रपति जी द्वारा विभिन्न कार्यालयों को हिन्दी के श्रेष्ठ निष्पादन और उत्तरोतर प्रगति हेतु प्रदान किये गये "इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार वितरण समारोह" पुरस्कारों से नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों को भी प्रोत्साहन पत्र मिलेगा। श्री हरि बाबू कंसल द्वारा प्रस्तुत "अनपेक्षित स्थलों पर हिन्दी" नामक लेख बहुत ही, प्रेरणादायक है।

—वरिष्ठ लेखा अधिकारी, (हिन्दी), भारतीय लेखा तथा लेखा परीक्षा विभाग, वरिष्ठ उप महालेखाकार (ले॰व॰ह॰), हिमाचल प्रदेश

"राजभाषा भारती" के अंक 63 व 64 मिले। पत्रिका में ढेर सारी पठनीय सामग्री है। राजभाषा विषयक जानकारी भी भरी पड़ी है। इससे मेरे सीमित ज्ञान के क्षेत्र का विस्तार हुआ है। संपादकीय प्रशंसनीय है। प्रकाशन को अद्यतन करने का प्रयास भी स्तुत्य है। इसके लिए राजभाषा भारती परिवार को बधाई।

—जगदम्बी प्रसाद यादव, पूर्व संसद, एकाशी, मुंगेर (बिहार)

हिन्दी शिक्षण योजना, केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, उप (प्रबोध, प्रवीण, प्राज्ञ), हिन्दी टंकण और हिन्दी

क्र॰सं॰	पाठ्यक्रम का नाम	पाठ्यक्रम संचालक	पाठ्यक्रम का स्वरूप तथा पूर्णकालिक / अंशकालिक / पत्राचार	पाठ्यक्रम की अवधि	सत्रावधि	परीक्षा के फार्म भरने की संभावित अवधि
	2	3	4	5	6	7
1.	प्रबोध प्रवीण प्राज्ञ	हिशिसं	अंशकालिक	5 माह	जनवरी से मई	फरवरी का पहला / दूसरा सप्ताह
2.	प्रबोध प्रवीण प्राज्ञ	हिशिसं	अंशकालिक	5 माह	जुलाई से नवम्बर	अगस्त का पहला / दूसरा सप्ताह
3.	हिन्दी टंकण	हिशिसं	अंशकालिक	6 माह	फरवरी से जुलाई	मार्च का पहला / दूसरा सप्ताह
4.	हिन्दी टंकण	हिशिसं	अंशकालिक	6 माह	अगस्त से जनवरी	सितंबर का पहला / दूसरा सप्ताह
5.	हिन्दी आशुलिपि	हिशिसं	अंशकालिक	12 माह	फरवरी से जनवरी	सितंबर का पहला / दूसरा सप्ताह
6.	हिन्दी आशुलिपि	हिशिसं	अंशकालिक	12 माह	अगस्त से जुलाई	मार्च का पहला / दूसरा सप्ताह
7.	गहन प्रबोध गहन प्रवीण गहन प्राज्ञ	के॰हि॰प्र॰सं॰ / उप संस्थान	पूर्णकालिक	25 कार्यदिवस 20 कार्यदिवस 15 कार्यदिवस	फरवरी, जून व अक्तूबर मार्च, जुलाई व नवंबर अप्रैल, अगस्त एवं दिसंबर	प्रशिक्षण के प्रारंभ में
8.	गहन हिन्दी टंकण	के॰हि॰प्र॰सं॰ / उप संस्थान	पूर्णकालिक	40 कार्यदिवस	जनवरी, मार्च, जून व अगस्त	उपर्युक्त
9.	गहन हिन्दी आशु॰	के॰हि॰प्र॰सं॰ / उप संस्थान	पूर्णकालिक	80 कार्यदिवस	जनवरी व अगस्त	उपर्युक्त
10.	प्रबोध प्रवीण प्राज्ञ	के॰हि॰ निदेशालय	पत्राचार	12 माह	जनवरी से नवंबर	के॰हि॰ निदेशालय के अनुदेश के अनुसार
11.	प्रबोध प्रवीण प्राज्ञ	के॰हि॰प्र॰सं॰	पत्राचार	12 माह	जुलाई से मई	31 अक्तूबर
12.	हिन्दी टंकण	के॰हि॰प्र॰सं॰	पत्राचार	6 माह	फरवरी से जुलाई	25 फरवरी
13.	हिन्दी टंकण	के॰हि॰प्र॰सं॰	पत्राचार	6 माह	अगस्त से जनवरी	25 अगस्त

संस्थान एवं केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, भारत सरकार के हिन्दी आशुलिपि के पाठ्यक्रमों से सम्बद्ध समयबद्ध विवरण

परीक्षा शुल्क (रुपए)	परीक्षा की संभावित अवधि	संपर्क सूत्र
8	9	10
40.00	मई का दूसरा / तीसरा सप्ताह	क्षेत्रीय उप निदेशक, हि०शि०यो०
40.00		1. उत्तर क्षेत्र, नई दिल्ली (हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, जम्मू व कश्मीर तथा चंडीगढ)
50.00		2. पूर्व क्षेत्र, कलकत्ता (बंगाल, उड़ीसा, असम, मेघालय, त्रिपुरा, सिक्किम, मणिपुर, नागालैंड, अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम तथा अंडमान निकोबार)
40.00	नवंबर का दूसरा / तीसरा सप्ताह	3. दक्षिण क्षेत्र, मद्रास (तमिलनाडु, केरल, आन्ध्र प्रदेश, पांडिचेरी तथा लक्षद्वीप)
40.00		4. पश्चिम क्षेत्र, मुम्बई (महाराष्ट्र, कर्नाटक, गुजरात, गोवा तथा दादर व नागर हवेली)
50.00		5. मध्यक्षेत्र, जबलपुर (मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश तथा बिहार)
40.00	जुलाई का दूसरा / तीसरा सप्ताह	
40.00	जनवरी का दूसरा / तीसरा सप्ताह	
50.00	जनवरी का तीसरा / चौथासप्ताह	
50.00	जुलाई का तीसरा / चौथा सप्ताह	
50.00	प्रशिक्षण समाप्ति के अंतिम दिन	केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान / उप संस्थान का नाम :-
50.00		1. के०हि०प्र० संस्थान, नई दिल्ली
50.00		2. के०हि०प्र० उप सं० बेंगलूर (मंगलूर में भी एक केन्द्र है)
50.00	उपर्युक्त	3. के०हि०प्र० उप सं० कलकत्ता
50.00	उपर्युक्त	4. के०हि०प्र० उप सं० मुम्बई (पुणे में भी एक केन्द्र है)
		5. के०हि०प्र० उप संस्थान, मद्रास
		6. हैदराबाद उप सं०*
40.00	नवंबर का दूसरा / तीसरा सप्ताह	उप निदेशक (पत्राचार पाठ्यक्रम विभाग (केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, पश्चिमी खंड-7, राम कृष्ण पुरम, नई दिल्ली-110066
40.00		
50.00		
40.00	मई का दूसरा / तीसरा सप्ताह	प्रभारी सहायक निदेशक (भाषापत्रा) केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, 2-ए, पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली-11 फोनः 3018740
40.00		
50.00		
40.00	जुलाई का दूसरा / तीसरा सप्ताह	उप निदेशक (हिन्दी टंकण पत्राचार पाठ्यक्रम) केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, 2-ए, पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली-11 फोनः 3018196
40.00	जनवरी का दूसरा / तीसरा सप्ताह	

नोट:-

1. प्रबोध, प्रवीण, प्राज्ञ, हिन्दी टंकण और आशुलिपि की सभी परीक्षाओं के निर्धारित शुल्क की अदायगी उप निदेशक (परीक्षा, हिन्दी शिक्षण योजना, नई दिल्ली) के पक्ष में देय डिमांड ड्राफ्ट द्वारा की जाती है।
2. केन्द्रीय सरकार के कार्यालय के कर्मचारियों से परीक्षा शुल्क नहीं लिया जाता है। यह केवल सरकारी उपक्रमों, बैंक, स्वायत शासी निकाय आदि के कार्यालय द्वारा देय है।
3. पत्राचार के सभी पाठ्यक्रमों में प्रवेश के लिए कर्मचारियों को अपने कार्यालय के माध्यम से आवेदन पत्र प्रेषित करना होता है।
4. उपर्युक्त पाठ्यक्रम के अतिरिक्त केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, 2-ए, पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली पर हिन्दी कार्यशालाएं, प्रशिक्षण संस्थानों के प्रशिक्षकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम, सहायक निदेशक (रा०भा०) / हिन्दी अधिकारियों हेतु अभिमुखीकरण कार्यक्रम, हिन्दी प्राध्यापक / सहायक निदेशक (भाषा / टंकण-आशु०) हेतु पुनश्चर्या कार्यक्रम एवं सचिवालय प्रशिक्षण प्रबन्धन संस्थान के प्रशिक्षुओं हेतु विशेष कार्यक्रमों का आयोजन भी किया जाता है।
5. प्रबोध, प्रवीण, प्राज्ञ पाठ्यक्रम केवल अंग्रेजी माध्यम से चलाए जाते हैं।
6. केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारासंचालित प्रबोध, प्रवीण एवं प्राज्ञ के पत्राचार पाठ्यक्रमों में प्रवेश के समय 50.00 रुपए पाठ्यक्रम शुल्क लिया जाता है, यह परीक्षा शुल्क के अतिरिक्त होता है। पाठ्यक्रम शुल्क (केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, रामकृष्ण पुरम, नई दिल्ली-110066) के पक्ष में देय रेखांकित इंडियन पोस्टल आर्डर / बैंक ड्राफ्ट द्वारा अदा करना होता है।
7. केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान द्वारा संचालित पत्राचार पाठ्यक्रमों में प्रवेश के समय प्रशिक्षार्थियों से कोई पाठ्यक्रम शुल्क नहीं लिया जाता है।
8. हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण उप संस्थानों पर भी किया जाता है।

पते:—

1. उप निदेशक (उत्तर), हिन्दी शिक्षण योजना, 10वां तल, मयूर भवन, कनाट सर्कस, नई दिल्ली-1 (फोनः 3312832)
2. उप निदेशक (दक्षिण), हि०शि०यो० 26 शास्त्री भवन, हैडोज, मद्रास-6 (फोनः 044-8278226)
3. उप निदेशक (मध्य), हि०शि०यो० 3-लाजपत कुंज, नेपियर टाउन, जबलपुर (मध्य प्रदेश)-482001 (फोनः 076- 322332)
4. उप निदेशक (पश्चिम), हि०शि०यो०, कामर्स हाउस, वेलार्ड एस्टेट, करीमभाय रोड, बंबई-400038-(बंबई उपसंस्थान हेतु भी) (फोनः 2611539) (फोनः 2612523)
5. उप निदेशक (पूर्व), हि०शि०यो०, 18वां तल, द्वितीय बहुतलीय कार्यालय भवन, निजाम पैलेसपरिसर, 234 / 4, आ०ज०च०बसु मार्ग, कलकत्ता-700020 (फोनः 2474053 (कलकता, उपसंस्थान के लिए भी)
6. उप निदेशक (टं० / आ०), हि०शि०यो०, 10वां तल, मयूर भवन, कनाट सर्कस, नई दिल्ली-1 (फोनः 3312834) दिल्ली में टं० / आशु० प्रशिक्षण हेतु)
7. उप निदेशक, के०हि०प्र०संस्थान, 2-ए, पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली-3 (फोनः 3018196)
8. सहायक निदेशकर के०हि०प्र० उपसंस्थान, केन्द्रीय उत्पाद शुल्क भवन, 6वां तल, बशीर बाग, हैदराबाद-29 (फोनः 240335)
9. सहायक निदेशक, के०हि०प्र० उपसंस्थान, पांचवां तल, बी० विंग केन्द्रीय सदन, 17वां मेन रोड, दूसरा ब्लाक, कोरमंगला, बेंगलूर-560034 (फोनः 5536232)

प्रस्तुति
हिन्दी शिक्षण योजना (मुख्यालय),
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय
नई दिल्ली

बम्बई उपक्रम नराकास की 17 वीं बैठक में पुरस्कार वितरण समारोह के मुख्य अतिथि श्री चंद्रधर त्रिपाठी, पूर्व सचिव (राभा) के कर-कमलों से शील्ड ग्रहण करते हुए डा० लल्लन पाठक, वरिष्ठ हिंदी अधिकारी, एन० टी० सी०।

बैंक नराकास अहमदाबाद में हिन्दी संगोष्ठी की अध्यक्षता करते हुए श्री.चंद्रधर त्रिपाठी, पूर्व सचिव राजभाषा विभाग, भारत सरकार।

पं० सं० 3246/77
आई एस एस एन 0970—9398

प्रपत्र-4 (देखिए नियम-8)

प्रेस तथा पुस्तक पंजीकरण अधिनियम

समाचारपत्रों का पंजीकरण (केंद्रीय) नियम

"राजभाषा भारती" के स्वामित्व तथा विवरणों की सूचना

1.	प्रकाशन स्थानः	लोकनायक भवन, नई दिल्ली-110003.
2.	प्रकाशन अवधिः	त्रैमासिक
3.	मुद्रक का नाम व पता	प्रबंधक, भारत सरकार फोटोलिथो मुद्रणालय, फरीदाबाद।
4.	क्या भारत का नागरिक है?	भारतीय नागरिक
5.	प्रकाश का नाम व पता	नेत्रसिंह रावत उप संपादक, राजभाषा विभाग, भारत सरकार, लोकनायक भवन, नई दिल्ली-110003. टेलीफोन :-4698054.
6.	क्या भारत का नागरिक है?	भारतीय नागरिक
7.	सम्पादक का नाम व पता	राजकुमार सैनी, निदेशक (अनुसंधान) राजभाषा विभाग, लोकनायक भवन, नई दिल्ली-110003. टेलीफोन : 4617807.
8.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार-पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक से सांझेदार या हिस्सेदार हों।	भारत सरकार

मैं नेत्रसिंह रावत, एतद् द्वारा घोषित करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी एवम् विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

ह०/—
प्रकाशक के हस्ताक्षर

राजभाषा विभाग, भारत सरकार, (गृह मंत्रालय) लोकनायक भवन, नई दिल्ली-110003 के लिए उप संपादक द्वारा प्रकाशित तथा प्रबंधक, भारत सरकार फोटोलिथो मुद्रणालय फरीदाबाद द्वारा मुद्रित।